₹60

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका

कांति

नवम्बर 2018

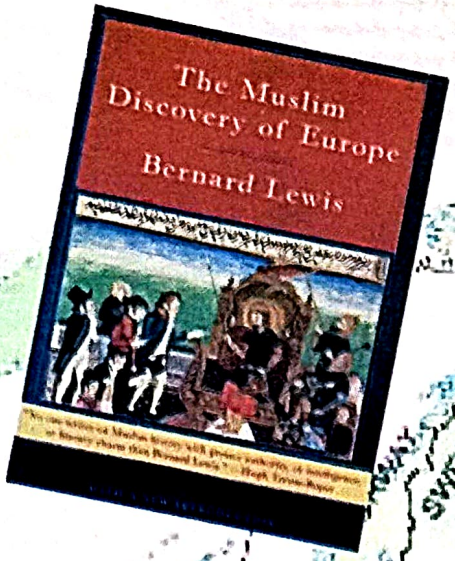



पश्चिमी जगत और मुसलमान

विशेषांक

مسلمان وہ ہے
جس کی زبان اور ہاتھ سے
مسلمان محفوظ رہیں۔
(بخاری:10)

Seahath Canning Company

Plot No. 8, Margoa Industrial Estate
St. Jose de Areal. Post Curtorium
Margo, Goa 403709, INDIA
Tel.: +91-832-2860412 / 6481562
Email: info@seahath.com | www .seahath.com




اللہ کے رسول ﷺ نے ارشاد فرمایا۔
میں اچھے اخلاق کو مکمل کرنے کے لئے بھیجا گیا ہوں
(موطا امام مالک:705)
sagar With best compliment from
SAGAR FEEDS & FOODS
PROCESSING INDUSTRIES
PLOT NO.L -21,GIDC CONCOLIM INDUSTRIAL STATE
CONCOLIM, 403 703, GOA,Email: sagarffpi@gmail.com



BISMILLA FISHERIES

Near Zuari Acid Tank, Vasco-da-Gama, GOA

Ph. : 0832-Off. : 518634/513240/518786, Res. : 514587, Mobile : 9822123919

With Best Wishes From :



QUALITY FOODS

Seafood Processors & Exporters
AN ISO 9001 : 2008 COMPANY

FACTORY
PLOT NOS. 5B 39 & 5B 50A, CUNCOLIM INDUSTRIAL ESTATE,
CUNCOLIM, SALCETE, GOA-403 703
TEL. : 91 832 2865610/11/12, FAX : 832 2865609
E-mail : qualityfoods@sancharnet.in/qualityfoods@rediffmail.com

QUALITY EXPORTS

SEAFOOD PROCESSORS & EXPORTERS

FACTORY

Plot Nos. 5B 64, 65 66 & 67 Cuncolim Industrial Estate
Cuncolim, Salcete, GOA-403 703
E-mail : qualityexportsgoa@yahoo.com/mmigoa@yahoomail.com



Shoeb : 9373102695
Sohel : 9822702926

All Kinds of :

Lungees, Haji RumalMuslla,
Kurta Payjama, Tasbeeh,
Topi, Naqab, Scarf, Ahram,
Blanket & Hosiary

SHOEB
&
BROTHERS

WHOLESELLER & RETAILER

M.Ali Road, Mominpura, Nagpur 18

Rajdhani
MILL STORES

Panchpaoli Road, Chitra Talkies Square, Bhaldarpura,
Nagpur - 18; Tel : 0712 - 2764861; Fax : 2730609
Mobile : 9423681927, 9890362882
Email : rajdhanimill@rediffmail.com

Authorised Dealer For VEEHOLD :

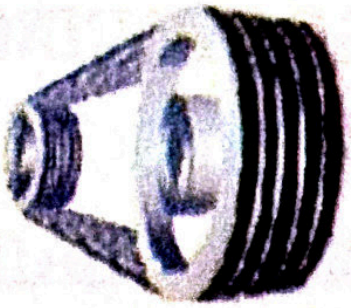

VEEHOLD

SKF



SBR

SAMRAT BEARINGS

Ganjipeth Road, Bhaldarpura, Nagpur-440018
Tel.: 0712-2720385, 3200024 Fax : 0712-2730609
Mobile : 9890167688, 9890362882
Email : samratbearing@gmail.com

DEALS IN :

SKF, NBC, FLT, ZKL, USSR BEARING, 'V' PULLEY 'V' BELT, BEARING SLEEVE, BEARING BLOCK, OIL SEAL, CHAIN SPROCKETS, ELECTRIC MOTOR, PUMP, H.T. NUT BOLT, GREASE, HARDWARE, POWER TOOLS, INDUSTRIAL & GENERAL MATERIAL SUPPLIER.

आपकी आशाओं का सुन्दर प्रतिबिम्ब

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका

कान्ति

वर्ष 28 अंक 5 नवम्बर 2018

लोगों के बीच ठीक-ठीक हक़ के साथ फ़ैसला चुका दिया जाएगा और पुकार दिया जाएगा कि प्रशंसा है अल्लाह सारे संसार के रब के लिए । –क़ुरआन

संपादक

डॉ० मुहम्मद अहमद

अपने विचार, लेख, रचनाएं भेजने एवं संपादकीय मामलों के लिए लिखें–

संपादक, 'कान्ति' मासिक

डी-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव

जामिया नगर, नयी दिल्ली–110025

ई मेल editorkanti@yahoo.com

* * *

ख़रीदार बनने, एजेंसी लेने, प्रचार-प्रसार एवं प्रबंधकीय मामलों के लिए लिखें–

प्रबंधक, 'कान्ति' मासिक

डी-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव

जामिया नगर, नयी दिल्ली–110025

ई मेल managerkantidelhi@gmail.com

* * *

फ़ोन संपादकीय एवं प्रबंधकीय

011-26949430, 09818799223

सहयोग राशि

एक प्रति रु० 25/- विशेषांक रु० 60/-

वार्षिक रु० 270/-, दो वर्ष 500/-

पांच वर्ष 1100/-, आजीवन रु० 6000/-

सऊदी अरब और खाड़ी के देशों से–110 रियाल

यूरोप व अमेरिका से–40 US डॉलर

वेब : **www.kanti.in**

चेक / ड्राफ्ट **'कान्ति'** के नाम से बनवाएं

कुछ इस विशेषांक के बारे में

'कान्ति' का यह विशेषांक दरअस्ल पिछले विशेषांकों से हटकर है। हमारे अतीत के विशेषांक केन्द्रीय विषय-वस्तु पर विभिन्न आलेखों के संकलन होते थे। इस बार ऐसा नहीं है, बल्कि पूरा विशेषांक एक ही पुस्तक के कुछ महत्वपूर्ण अध्यायों पर आधृत है। पुस्तक का नाम है "The Muslim Discovery Of Europe" और इसके लेखक हैं विश्वविख्यात चिंतक एवं विचारक बर्नार्ड लिविस, जो ब्रिटिश मूल के अमेरिकी इतिहासकार थे। धर्म और धर्मानुयायी इतिहास पर इनकी गहरी पकड़ रही। इसी वर्ष 19 मई 2018 को 101 वर्ष की आयु में न्यू जर्सी में इनका देहांत हुआ। इस्लाम और मुस्लिम समाज इनके अध्ययन के मुख्य केन्द्र थे। बर्नार्ड लिविस ने कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं, जिनमें उक्त पुस्तक के साथ ही उल्लेखनीय पुस्तकें हैं–The Jews Of Islam (1984), Islam And The West (1993), What Went Wrong (2002)। 1982 में "The Muslim Discovery Of Europe" प्रकाशित हुई थी। बर्नार्ड लिविस की यूरोप और ख़ासकर मध्य पूर्व के हालात पर बहुत-सी पुस्तकें हैं। वे 2002 में उस समय काफ़ी चर्चित हुए, जब उनकी पुस्तक 'What Went Wrong' प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में उन्होंने यूरोप के इस्लामीकरण पर बहस की है और 21 सदी के अंत तक यूरोप पर इस्लाम के बड़े प्रभाव की भविष्यवाणी की है। सैम्यूअल हन्टिंगटन ने भी इस विषय पर कुछ ऐसी ही परिकल्पना पेश की थी।

जैसा कि ऊपर उल्लेख किया जा चुका है कि प्रस्तुत विशेषांक लिविस की एक मशहूर पुस्तक "The Muslim Discovery Of Europe" पर आधारित है। वास्तविकता यह है कि मुसलमानों ने पश्चिमी जगत को किस रूप में देखा, समझा और जाना ? इस विषय पर बहुत ही कम साहित्य उपलब्ध है। यह पुस्तक इस कमी को पूरा करती है। इस पुस्तक में बताया गया है कि मुसलमान आठवीं सदी में यूरोप पहुंच गये थे। इस्तंबूल पर क़ब्ज़े के बाद मुस्लिम सेनाएं इटली और फ़्रांस तक जा पहुंची थीं। इस पुस्तक में मुसलमानों और पश्चिमी जगत के अंतर्संबंधों के जो ब्योरे दिये गये हैं, उनको पूर्ण विस्तार के साथ इस विशेषांक में प्रस्तुत नहीं किया जा सका है। विशेषांक में प्रस्तुत सामग्री का पुस्तक का सार-संक्षेप है, जिसे अनूदित, रूपांतरित एवं संपादित किया है ''कान्ति'' (साप्ताहिक/ मासिक) के संपादक डॉ० मुहम्मद अहमद ने। साथ ही इसके प्रकाशन में 'कॉस्मॉस बुक्स' के सहयोग के लिए हम आभारी हैं। यह विशेषांक आपको कैसा लगा ? हमें अवश्य अवगत कराएं। याद रहे कि प्रस्तुत विशेषांक में जो तथ्य, विचार आदि पेश किये गये हैं, वे लेखक के हैं। आवश्यक नहीं कि इनके प्रति हमारी सहमति हो।

हमारी अहम पुस्तकें

औरत और प्राकृतिक नियम	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	24.00
आख़िरी नबी (सल्ल०)	हमूदा अब्दुल आती	6.00
आदाबे ज़िन्दगी	मौलाना मुहम्मद यूसुफ़ इस्लाही	220.00
आतंकवाद और इस्लाम	डॉ० अब्दुल मुग़नी	18.00
आतंकवाद और पश्चिमी आक्रमक नीति	प्रो० खुर्शीद अहमद	12.00
आवानीय पुर्नजन्मगम	डॉ० मुहम्मद अहमद	50.00
अनेकेश्वरवाद की वास्तविकता	मौलाना अमीन अहसन इस्लाही	70.00
अहम हिदायतें	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
अच्छे लोग	इरफान ख़लीली	50.00
अनूदित कुरआन मजीद	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	380.00
अन्देशों के गिरफ़्तार	माइल ख़ैराबादी	15.00
अन्धा इन्साफ़ (बच्चों के लिए)	मतीन तारिक़ वाग़पती	9.00
इंसाफ	बिन्तुल इस्लाम	24.00
इबादत	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
अपनी इस्लाह आप	नईम सिद्दीकी	18.00
अमानत का बोझ	माइल ख़ैराबादी	20.00
हज़रत मुहम्मद(स०) जीवन और संदेश	मौलाना सय्यद जलालुद्दीन उमरी	16.00
प्यारे नबी कैसे थे?	इरफ़ान ख़लीली	28.00
प्यारे नबी ऐसे थे !	माइल ख़ैराबादी	14.00
जीवनी हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)	मु० इनायतुल्लाह सुब्हानी	138.00
बड़ों की माँए	माइल ख़ैराबादी	14.00
रह्मतुल-लिल-आलमीन	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
विश्व-नायक	डॉ० कौसर यज़दानी नदवी	36.00
विश्व-नेता हज़रत मुहम्मद (सल्ल०)	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	20.00
हज़रत मुहम्मद : एक संक्षिप्त परिचय	डॉ० मुहम्मद अहमद	10.00
हज़रत मुहम्मद एक महान समाज सुधारक	प्रो० मिर्ज़ा रफ़ीउद्दीन अहमद	14.00
हज़रत मुहम्मद का आदर्श	श्री नाथूराम	28.00
हज़रत मुहम्मद सल्ल० का संदेश	मौलाना सय्यद अबुल आला मौदूदी	16.00
आख़िरी नबी (सल्ल०)	हमूदा अब्दुल आती	06.00
अल्लाह के रसूल का व्यावहार अपने शत्रुओं के साथ	मुहम्मद फ़ारूक़ ख़ाँ	15.00
क्रान्ति-दूत हज़रत मुहम्मद सल्ल०	नईम सिद्दीकी	90.00

MMI PUBLISHERS
• D-307,Dawat Nagar, Abul Fazl Enclave
Jamia Nagar New Delhi-110025
• Phone:26981652,26984347 Mob: 7290092401
• E-mail:info@mmipublishers.net,mmipublishers@gmail.com
• Website:www.mmipublishers.net

पश्चिमी जगत और मुसलमान

पश्चिमी भाषाओं में इस्लामी इतिहास पर बहुत-से इतिहासकारों ने लिखा है, जिनमें से कइयों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद भी हो चुका है। बर्नार्ड लिविस (Bernard Lewis) की पुस्तक 'द मुस्लिम डिस्कवरी ऑफ़ यूरोप' एक बेहद चर्चित, उल्लेखनीय पुस्तक है। वैसे लिविस की कृतियां यथार्थपरक और वास्तविक तथ्यों पर आधारित होती हैं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये सिर्फ़ और सिर्फ़ पुष्ट प्रमाणों और तथ्यों की बुनियाद पर लिखी गयीं हैं। उक्त पुस्तक में लेखक ने इस्लामी सभ्यता और मुसलमानों के उत्थान और पतन का संक्षिप्त लेखा-जोखा प्रस्तुत किया है। इसमें लेखक ने बहुत हद तक तटस्थ होकर और भावना में बहे बिना तथ्यों की विश्लेषणात्मक चर्चा की है। इतिहास लेखन बुनियादी तौर पर वस्तुनिष्ठ (Objective) होता है, जिसमें विषय-वस्तु के विस्तार में बहुत कुछ कहने की गुंजाइश नहीं होती। बर्नार्ड लिविस के लिए तो बिल्कुल भी गुंजाइश नहीं होती, क्योंकि वे इतिहास लेखन के मानदंडों के अंतर्गत काम करते नज़र आते हैं। इनकी लेख की विश्वसनीयता असंदिग्ध है इसे वे अपने लिए अमूल्य पूंजी मानते हैं। इनकी रचनाओं के अनुवाद विश्व की 30 से अधिक भाषाओं में हो चुके हैं, मगर अफ़सोस की बात यह है कि मुस्लिम देशों में इनकी रचनाओं के बहुत कम अनुवाद हुए हैं। जहां तक 'द मुस्लिम डिस्कवरी ऑफ़ यूरोप' की बात है, तो यह अरब और पश्चिमी देशों के बहुत से छिपे तथ्यों का अनावरण करती है। 1492 ई॰ में वास्कोडिगामा ने भारत का पता लगाया और यूरोपीय देशों के व्यापारियों ने अफ़्रीक़ा के दक्षिणी तट से एक लंबी समुद्री यात्रा तय करके भारत और पूर्वी देशों के साथ व्यापार प्रारंभ किया और उनकी ख़ुशहाली में इज़ाफ़ा होने लगा। इसके डेढ़ सौ वर्ष बाद मुसलमानों को यह एहसास हुआ कि वे ग़रीब से और ग़रीब क्यों होते चले जा रहे हैं। कहते हैं कि मुसलमानों को जब यह एहसास हुआ तो उस वक़्त यूरोप के लोगों का जीवन स्तर तुर्कों और अरबों के जीवन स्तर से आठ गुना अधिक बेहतर था। जब नेपोलियन बोनापार्ट ने मिस्र को विजित किया, तो फ्रांसीसियों ने अरबी भाषा में दैनिक समाचार पत्र का प्रकाशन किया, जिसमें सारे विश्व के समाचार छापे जाते थे। इस्लामी जगत के इतिहास में यह पहला दैनिक समाचार पत्र था, जबकि यूरोप में एक शताब्दी पूर्व से ही दैनिक समाचार-पत्रों का प्रकाशन हो रहा था। मिस्र के लोग दूर-दूर के गांव से दस-पन्द्रह मील दूर पैदल चलकर समाचार-पत्र को पढ़ने के लिए आने लगे थे, जबकि हक़ीक़त यह थी कि स्वयं मिस्री विदेशी फ्रांसीसियों से छुटकारा पाना चाहते थे। मुजाहिद सर पर क़फ़न बांधकर निकले और इरादा किया कि नेपोलियन का सर क़लम कर देंगे। मुजाहिदों ने यथासंभव प्रयास किया, यद्यपि वे इसमें सफल नहीं हो सके। कुछ मुजाहिद गिरफ़्तार भी कर लिए गये। उन पर मुक़दमा भी चला जिनमें केवल एक मुजाहिद का अपराध सिद्ध हो सका और उसको मृत्युदंड दिया गया, शेष आरोपी बाइज़्ज़त बरी कर दिये गये, क्योंकि उनके ख़िलाफ़ ठोस प्रमाण उपलब्ध नहीं थे। इस फ़ैसले से मिस्र के क़ाज़ियों (न्यायाधीशों) में विस्मय का संचार हुआ, क्योंकि उस वक़्त की मिस्री परंपरा के अनुसार, विजित सम्राट के संदिग्ध हमलावरों को भी मृत्युदंड दिया जाता था।

उस्मानी साम्राज्य के काल में कुछ फ्रांसीसी जनरलों और रूसी एडमिरलों ने इस्लाम क़बूल किया। वे चाहते थे कि भावी युद्धों में जब तुर्की और यूरोप आमने-सामने आएं, तो मुसलमानों को विजय प्राप्त हो और वे यूरोप पर फिर से अपना प्रभाव जमा लें। इस उद्देश्य के साथ इन अफ़सरों ने मुसलमानों की सैन्य क्षमता और दक्षता बढ़ाने के लिए अच्छी-अच्छी पुस्तकें लिखीं, लेकिन सरकार और तत्कालीन सम्राट ने इन पुस्तकों को तुर्की और अरबी में अनूदित कर

छापने की अनुमति नहीं दी, क्योंकि सम्राटों और उलमा (इस्लामी विद्वानों) की निगाह में इन्कार करने वालों की भाषा में लिखी गयी भाषा को इस्लामी भाषा में अनुवाद करना कुफ़्र व गुनाह समझा जाता था। जब तुर्क यूरोप की लड़ाइयों में हारने लगे, तो एक फ़्रांसीसी जनरल ने जिन्होंने इस्लाम क़बूल किया था, तुर्की के सेनाध्यक्ष से कहा कि तुम्हारे सैनिक अधिकारी और सिपाही ज़मीन के उतार-चढ़ाव से अनजान हैं जिसके चलते उन्हें पता नहीं चलता कि कौन-सा क्षेत्र पहाड़ी है और कौन-सा क्षेत्र समतल, कौन-सी नदी पूर्व से पश्चिम की ओर बहती है या दक्षिण से उत्तर की ओर बहती है, ऐसे नक़्शों की सहायता से सैन्य अभियान में आसानी होती है। जब फ़्रांसीसियों ने इस ज़मीनी उतार-चढ़ाव का नक़्शा तुर्की के सैन्य अधिकारियों को दिया, तो एक भी सैन्य अधिकारी ऐसा नहीं था जो उस नक़्शे को समझ पाता। अंत में तुर्की के सम्राट ने अपने अधिकारियों को निर्देश दिया कि वे फ़्रांसीसी भाषा सीखें ताकि भावी सैन्य अभियानों में सुगमता आये। यह पहला अवसर था जब तुर्की के लोगों ने कोई विदेशी भाषा सीखी।

मुसलमान आठवीं शताब्दी में यूरोप (इस्तंबूल) पहुंचे। इस्तंबूल (तुर्की) पर क़ब्ज़े के बाद मुस्लिम सेना इटली और फ़्रांस तक जा पहुंची। गिब्बन जैसे पश्चिमी इतिहासकार कहते हैं कि अगर 737 ई० में दक्षिण-पश्चिम फ़्रांस के पोयटीआ (Poitirs) में मुसलमानों की हार न होती, तो आज विश्व इतिहास कुछ और ही होता। मुसलमानों ने मध्य भूमध्य सागर के पिछड़े और अविकसित स्पेन को संस्कृति, सभ्यता और तरक़्क़ी से मालामाल किया। स्पेन में ही साहित्यकारों, कवियों, लेखकों और दार्शनिकों के साथ ही वैज्ञानिकों और इंजीनियरों की एक बड़ी संख्या सामने आयी, जिसने इस अविकसित क्षेत्र में अत्यंत उन्नत शहर बसाये और पूरे यूरोप में ज्ञान-विज्ञान और विवेक के एक नये दौर की शुरुआत की। आठवीं सदी में ही बग़दाद के अब्बासी ख़लीफ़ा मामून ने यूनानी चिकित्सकों के आविष्कारों से संबंधित पुस्तकों के अनुवाद कराये। यूरोप ने मुसलमानों की सहायता और सामर्थ्य से ही यूनानी ज्ञान-विज्ञान को प्राप्त किया। मामून के काल में "सिर्रुल असरार" शीर्षक से एक पुस्तक लिखी गयी, जिसके बारे में कहा गया कि वह अरस्तू के उन नीति-निर्देशक तथ्यों पर आधारित है जो उसने अपने शिष्य सिकंदर महान को बताए थे। इस अरबी पुस्तक ने ही मैकियावली को अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'प्रिंस' लिखने के लिए प्रेरित किया। मुहम्मद हसन अस्करी कहते हैं कि दांते ने अपनी काव्य-रचना 'डिवाइन कॉमेडी' का समग्र भाव 'मंकीया विजय' (जाम्बिया का एक स्थान) से प्राप्त किया था। इसी प्रकार प्राचीन यूरोप की कई रचनाओं का स्रोत अरबी साहित्य और परंपराएं हैं। बाद में उस्मानी विजयों ने इन परंपराओं और इस सभ्यता और तहज़ीब को यूरोप के विस्तृत भू-भाग तक पहुंचा दिया। ये सारे विजय और कारनामे अपनी जगह पर हैं, लेकिन प्रश्न यह है कि मुसलमानों ने यूरोप को किस नज़र से देखा ? उन्होंने यूरोपीय संस्कृति के वैचारिक और कलात्मक विकास को किस तरह समझा या समझने की कोशिश की ? अथवा इस तरह की कोशिश भी हुई या नहीं ? इस प्रस्तुति में अन्य तथ्यों व विवरणों के साथ ही हम इन बातों को कुछ विस्तार से समझने की कोशिश करेंगे।

सातवीं शताब्दी के प्रारंभ में इस्लाम के अंतिम पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने जब इस्लाम धर्म की ओर लोगों को आमंत्रित किया, तो उस समय रोम सागर का पूरा क्षेत्र ईसाई दुनिया का हिस्सा था। इसके यूरोपीय, एशियाई और अफ़्रीक़ी समुद्र तटों की जनसंख्या भी लगभग ईसाई धर्म के विभिन्न संप्रदायों के लोगों पर आधारित थी। यूनानी और रोमी धर्मों में से केवल दो धर्म शेष रह गये थे–यहूदी और मानी धर्म। लेकिन इन क्षेत्रों की बहुत कम जनसंख्या इन दोनों धर्मों की अनुयायी थी। रोम सागर के पूर्वी तट पर पूर्वी और रोमी साम्राज्य जिसे इतिहासकार बाजंतीनी साम्राज्य कहते हैं, विकसित हो रहा था, इसकी राजधानी कुस्तुन्तुनिया थी और इसका शासन क्षेत्र शाम (सीरिया), फ़िलिस्तीन, मिस्र, उत्तरी अफ़्रीक़ा के कुछ क्षेत्र, एशिया के कोचक और दक्षिणी यूरोप तक था।

पश्चिम : मुसलमानों का ज्ञान

1655 ई॰ में उस्मानी भूगोलशास्त्री और बहुमुखी प्रतिभा के धनी साहित्यकार कातिब चलबी (मुस्तफ़ा बिन अब्दुल्लाह 1609-1657 ई॰) को एक संक्षिप्त-सी पुस्तक लिखने की प्रेरणा हुई, जिसका नाम उसने 'रहनुमा-ए शोरीदह ज़हन, बाबत तारीख़े यूनान व रोमा व नसरानियान" रखा । उसने इसकी प्रस्तावना में पुस्तक लिखने का कारण यह बताया है कि ईसाइयों की संख्या बहुत बढ़ गयी है और अब वे आबाद दुनिया के उस भाग तक सीमित नहीं हैं जहां वे पहले रहते थे । यद्यपि ईसाई फ़िरक़े एक ही 'समुदाय' का हिस्सा हैं, लेकिन वे दूर-दूर फैल गये हैं और संख्या में इतने अधिक हो गये हैं कि वे दुनिया के बहुत-से भागों तक पहुंच गये हैं । अपने जहाज़ों पर पूर्वी और पश्चिमी समुद्रों में सफ़र करते हुए वे अनेक देशों के स्वामी बन गये हैं ।

उस्मानी साम्राज्य में तो वे हस्तक्षेप नहीं कर पाते, लेकिन नयी दुनिया में उन्होंने विजय प्राप्त कर ली है और हिन्दुस्तान के बन्दरगाहों पर उनका क़ब्ज़ा हो गया है । इस प्रकार वे उस्मानी साम्राज्य के निकट पहुंच रहे हैं । इस बढ़ते हुए ख़तरे के सामने इन लोगों के बारे में इस्लामी इतिहास जो कुछ पेश कर रहा है वह खुला झूठ और जिन्नों की पुरानी कहानियां हैं ।

इसलिए आवश्यक है कि उत्तम जानकारियां जुटायी जाएं ताकि उनके बारे में इस्लामी जगत के लोग बिल्कुल अनभिज्ञ न रहें । न केवल यह कि इन शत्रु पड़ोसियों से बेख़बर न रहें बल्कि उस असावधानी व ग़फ़लत के स्वप्न से भी जाग्रत हो जाएं, जिसने इन धिक्कारे हुए लोगों को मुसलमानों के कुछ देशों को हड़पने का अवसर प्रदान किया है और इस प्रकार मुस्लिम भू-भाग को 'दारुल हर्ब' में परिवर्तित कर दिया है ।

ये जानकारियां जुटाने के लिए कातिब चलबी कहता है कि उसने फ़िरंगी एटलस माइनर (Atlas Minar) और दूसरी पुस्तकों से सहायता ली है जिनका उसने अनुवाद भी कर दिया है ।

पुस्तक का पहला भाग परिचय है । इसके भी दो भाग हैं । एक भाग ईसाई धर्म का सार है जो मध्यकाल में इस्लाम क़बूल करने वाले ईसाइयों की अरबी पुस्तकों पर आधारित है । ये पुस्तकें खुल्लम-खुल्ला ईसाइयत के विरुद्ध हैं और उनका अंदाज़ शास्त्रार्थ वाला है । परिचय के दूसरे भाग में यूरोप की शासन-व्यवस्था का सार-संक्षेप प्रस्तुत किया गया है । इसमें यूरोप की राजनैतिक शब्दावलियों की परिभाषा एवं व्याख्या की गयी है और नये शब्द गढ़े गये हैं जैसे अम्परकी, अम्पर अवतार और किंग काक़ल आदि । फिर कलीसा (चर्च) और राज्य के पदों की व्याख्या की गयी है । इसमें वह बड़ी सावधानी के साथ भेद करता है । ये पद हैं–पोप, कार्डिनल और पीटरयार्क । राज्य के पदों में 'काउंट' आदि । परिचय के अंत में "इस धिक्कारे हुए गरोह" की भाषाओं पर टिप्पणी की गयी है । कातिब चलबी यूरोप में बोली जाने वाली भाषाओं की इतनी बड़ी संख्या और उनके एक-दूसरे के लिए अज्ञेय होने पर आलोचना भी करता है ।

मूल पुस्तक के नौ अध्याय हैं, जिनमें पोपवाद, सल्तनत, फ्रांस, स्पेन, डेनमार्क, ट्रांसलोनेशिया, हंगरी, वीनस और माल्डयोया का उल्लेख किया गया है । संभवत: ये वे देश थे, जिनकी ओर कातिब चलबी अपने लोगों का ध्यान आकृष्ट कराना आवश्यक समझता था । इन जानकारियों में रोम के पोपों और शासकों की सूची प्रस्तुत करने से अधिक और कुछ नहीं है । बीच-बीच में विभिन्न स्रोतों से प्राप्त होने वाली विचित्र जानकारियां हैं । जिस शासन-व्यवस्था पर विस्तार से बहस की गयी है वह वीनस की व्यवस्था है । फ्रांस और स्पेन के बारे में भी उसने किसी हद तक ऐतिहासिक और भौगोलिक जानकारियां दी गयी हैं ।

कातिब चलबी की नीयत साफ़ थी । भूगोल और नक़्शानवीसी (मानचित्र-निर्माण) की रचनाएं इसका प्रमाण हैं । इससे स्पष्ट होता है कि वह उन संबंधित लोगों से जानकारियां प्राप्त करता था जो उसे उपलब्ध थे । निस्संदेह उन आरंभिक पुस्तकों की आलोचना करने में बिल्कुल सत्य का पक्षधर है, जिन पर उसने अपने बयान का आधार रखा, बल्कि जानकारियों में कुछ वृद्धि ही की । यह बात भी ठीक है कि 19वीं सदी तक अरबी और फ़ारसी में पश्चिमी पुस्तकों के स्तर की कोई पुस्तक नहीं थी । उसने 1655 ई॰

में यूरोप के इतिहास और उसकी तत्कालीन परिस्थितियों के बारे में जो कुछ लिखा वह उस्मानियों से संबंधित यूरोप की पुस्तकों के मुक़ाबले में बहुत ही अल्प स्तर का है और अत्यंत भोलेपन पर आधारित है ।

कातिब चलबी की पुस्तक से एक सौ वर्ष से भी पहले यूरोप के पाठक के पास उस्मानी साम्राज्य के इतिहास और उसकी संस्थाओं के बारे में अधिक जानकारी देने वाली पुस्तकें विद्यमान थीं । उनमें महत्वपूर्ण उस्मानी रोज़नामों के अनुवाद भी सम्मिलित थे । यूरोप की अधिक दिलचस्पी उस्मानी तुर्कों से थी, क्योंकि वे उसके लिए ताज़ा और तात्कालिक समस्या बने हुए थे । यूरोप के लोगों की कुछ अवधि तक इस्लाम के आरंभिक इतिहास और इस्लामी संस्कृति से भी दिलचस्पी रही थी और इस पर बड़ी संख्या में पुस्तकें लिखी गयी थीं । उनमें अरबी नुस्ख़ों के अनुवाद और मुस्लिम विचारों और साहित्य के इतिहास भी शामिल थे ।

कातिब चलबी के ज़माने तक पश्चिमी यूरोप की कई यूनीवर्सिटियों में अरबी में विभाग स्थापित हो चुके थे और हालैंड में जैकोब गोलीस (Jacob Goliub), इंग्लैंड में एडवर्ड पोलक जैसे अरबी के विद्वान प्राचीन पूर्वी भाषा व ज्ञान के अध्ययन का आधार रख रहे थे । जब 17वीं सदी के अंत में फ्रांसीसी प्राच्यविद् बारतलमी दीहरबार (Barthelmi Dherblot) ने पूर्वी संस्कृति पर वर्णमाला क्रम के हिसाब से Bibliotheque Orientale लिखी थी, तो उसने लातीनी के अलावा दूसरी यूरोपीय भाषाओं में लिखी हुई बहुत-सी पुस्तकों का अध्ययन किया था और उनसे लाभांवित हुआ था ।

कुछ जानकारियां तो भागे हुए या रिहा हुए क़ैदियों से मिली थीं और कुछ राजनयिक एवं व्यापारिक सूत्रों से प्राप्त हुई थीं । लेकिन अब अधिक से अधिक नये प्रकार के अनुसंधानकर्ता पैदा हो रहे थे जो इस्लामी देशों की भाषा और उनके साहित्य के अनुशीलन के लिए वही ढंग अपना रहे थे जो क्लासिकी और धार्मिक पुस्तकों को दोबारा प्राप्त करने के लिए प्रयुक्त किया जा रहा था और जिसमें यूरोप दक्ष हो चुका था । उसके मुक़ाबले में मुसलमान आलिमों के पास कुछ भी नहीं था, चाहे वह दर्शन हो या दूसरे विषय । वे केवल अपनी धारणाओं, अपने क़ानूनों और अपने साहित्य तक सीमित रहे थे । हां, पश्चिम के बारे में कुछ चीज़ें जानी जाती थीं जिन्हें कातिब चलबी झूठा और जिन्नों-परियों की कहानियां कहता है और जिनकी निन्दा करता है ।

यूरोप के बारे में पहली अरबी रिपोर्ट जो सुरक्षित रह गयी है, वह नवीं सदी की है । वह यूनानी सूत्रों पर अधिक निर्भर है, विशेष रूप से पटोलमी के भूगोल पर । मालूम होता है कि अरबी में इसका कई बार अनुवाद किया गया था । इसका नवीनतम संस्करण इससे अद्भुत वह पुस्तक है जो मध्य एशिया के प्रसिद्ध गणितज्ञ और दार्शनिक मुहम्मद इब्न मूसा अल-ख़्वारज़्मी ने नवीं सदी के आरंभिक काल में लिखी । यह वही व्यक्ति है जिसने अल-गवारिज़्म को अपना नाम दिया जो एशारी व्यवस्था की प्राचीन यूरोपीय शब्दावली है । अल-ख़्वारज़्मी ने केवल पटोटमी का अनुवाद नहीं किया, बल्कि अपनी पुस्तक में उसकी कुछ बातों की व्याख्या भी की और ईरानियों एवं अरबों को जो अधिक जानकारियां थी उनकी वृद्धि भी की । यह वृद्धि पश्चिमी यूरोप के बारे में थी, हालांकि दुनिया के दूसरे भागों के मुक़ाबले में यह ज्ञान कम था । दुर्भाग्य से जो संस्करण सुरक्षित रह गया है, उसमें यूरोप के स्थानों के नाम बुरी तरह विकृत हो गये हैं, यहां तक कि कुछ तो पहचाने भी नहीं जाते ।

इस पुस्तक से और संभवतः कुछ अनूदित दूसरी पुस्तकों से, जिनकी प्राचीन सुरयानी और यूनानी रचनाएं भी सम्मिलित हैं, मुसलमान आलिमों ने पश्चिमी यूरोप की भौगोलिक संरचना और कुछ स्थानों के नाम मालूम किये । इसके तुरंत बाद भूगोल पर उनकी अपनी पुस्तकें सामने आनी प्रारंभ हो गयीं । यद्यपि उनमें सामान्य रूप से पश्चिमी यूरोप जैसे पिछड़े और महत्वहीन स्थान को अधिक महत्व नहीं दिया जाता था, फिर भी इससे सिद्ध होता है कि क्रमशः ज्ञान का विस्तार हो रहा था ।

पहला मुस्लिम भूगोलशास्त्री जिसकी कृतियां हम तक पहुंची हैं कोई इब्न ख़ुरादाद बहा (अब्दुल क़ासिम उबैदुल्लाह इब्न अब्दुल्लाह बिन ख़ुरादाद बहा 820-912 ई०) था, जो ईरानी था और अरबी में लिखता था । उसका काल नवीं सदी का मध्यकाल है । वह संदेश पहुंचाने के विभाग का कर्मचारी था और हरकारों, घुड़सवारों और जासूसी की व्यवस्था का प्रभारी था । उसकी पुस्तक मध्यकाल के मुसलमानों की अन्य पुस्तकों की भांति कर्तव्य की अदायगी की ज़रूरत के तहत लिखी गयी थी । वह अधिकतर इस्लामी क्षेत्रों से संबंधित है जो एक स्वाभाविक बात है ।

तथापि इसमें बाज़न्तीनी संदेश पहुंचाने के विभाग पर भी कुछ ध्यान दिया गया है, जिसका संपर्क इस्लामी ख़िलाफ़त के साथ था, यहां तक कि पुस्तक में यूरोप के पिछड़े क्षेत्रों का भी उल्लेख है।

ख़ुरादाद कहता है, "आबाद दुनिया चार भागों में बंटी हुई है–यूरोप, लीबिया, हब्शा और सीथिया। यह विभाजन अरबी की कुछ दूसरी पुस्तकों में भी पाया जाता है। इसका स्रोत यूनानी सूत्र थे, लेकिन बहुत जल्द मुसलमानों की भूगोल की पुस्तकों में यह विभाजन दिखायी नहीं पड़ने लगा। इब्न ख़ुरादाद बहा यूरोप को 'यूरोफ़ा' लिखता है। उसकी पुस्तक में उन्दलुस (अर्थात मुस्लिम स्पेन) स्लाफ़ भू-भाग, रोमा, फ़िरंगी और तंजा से मिस्र तक के क्षेत्र में सम्मिलित हैं।

मुस्लिम स्पेन के बारे में ख़ुरादाद बहा की जानकारियां बहुत अच्छी हैं। मुस्लिम सीमाओं के बाहर के देशों के बारे में वह यह कहता है–

उन्दलुस (स्पेन) के उत्तर में रोम, बर्लिन (बरगंडी) और स्लाफ़ और अदारों का भू-भाग है।

पश्चिमी समुद्र से जो चीज़ें आती हैं वे हैं–स्लाविक, यूनानी, फ़िरंगी और लोम्बार्ड दास, यूनानी और स्लाफ़ दासियां और बिलाड की चमड़े की कोट एवं दूसरी ख़ालें, विभिन्न प्रकार के इत्र, अगर व अंबर और दवाएं एवं पिस्ते के वृक्ष से निकलने वाला पीले रंग का गोंद आदि। फ़िरंगियों के समुद्र तटों के निकट समुद्र की तह से वे मोती निकालते हैं, जिसे सामान्य जन मरजान कहते हैं। स्लाफ़ के भू-भाग से समुद्र के निकट तलया (Thule) नगर अवस्थित है। उधर कोई जहाज़ या नौका नहीं जाती और वहां से कुछ नहीं आता।

वहां यहूदी हैं, जो अरबी, फ़ारसी, यूनानी, फ़िरंगी, उन्दुलुसी और स्लाबिक भाषाएं बोलते हैं। वे ज़मीनी और समुद्री रास्तों से पश्चिम से पूरब और पूरब से पश्चिम तक सफ़र करते हैं। वे पश्चिम से हिजड़े, दासियां, ग़ुलाम लड़के, कमख़ाबों और बिलाव की खालों के वस्त्र, गोंद, दरियाई बछड़े और तलवारें लाते हैं।

इब्न ख़ुरादाद बहा के यहां यहूदी व्यापारियों के बारे में काफ़ी बड़ी ज्ञानपूर्ण और अनुसंधानपरक सामग्री मिलती है। कुछ लोगों ने उनकी पहचान करने और उनके महत्व का अनुमान लगाने का प्रयास भी किया है। ख़याल है कि वे लोग मध्य-पूर्व से संबंध रखते थे, पश्चिम से नहीं। उस काल के दूसरे दो और मुस्लिम भूगोलशास्त्रियों के पास एक ही प्रकार के विषय मिलते हैं। इनमें से एक इब्नुल फ़क़ीहा (मृत्यु 903 ई॰) अपने पूर्वज का अनुसरण करता है, लेकिन वह यह भी लिखता है–

छठे प्रांत में फिरंगी भू-भाग और दूसरे लोग हैं। वहां ऐसी स्त्रियां हैं जो अपनी छातियां काट डालती हैं और जब वे छोटी होती हैं तो उन्हें गरम लोहे से दाग़ती हैं ताकि वे बड़ी होने से रुक जाएं। दूसरा लेखक इब्न रस्ता (मृत्यु 910 ई॰) भी इसी प्रकार का वृत्तांत लिखता है, लेकिन वह इन दिलचस्प चीज़ों की वृद्धि करता है, "समुद्र के उत्तरी भाग में 12 द्वीप हैं जिन्हें इतैनिया द्वीप समूह कहा जाता है। इससे आगे इन्सान आबाद दुनिया से बाहर निकल जाता है और कोई नहीं जानता कि वह कैसा क्षेत्र है।

ये तीनों रोम का नाम लेते हैं जिसके बारे में विचित्र कथाएं बयान करते हैं।

आख़िर 12वीं सदी तक मुसलमान पाठक को अपेक्षाकृत पूरी जानकारियां मिलने लगती हैं। इस काल का सबसे बड़ा भूगोलशास्त्री मसऊदी (मृत्यु 956 ई॰) था। यूरोप के लोगों के बारे में उसकी राय यूनानी भूगोलशास्त्रियों की पुनरावृत्ति मालूम होती है, लेकिन वह कुछ दिलचस्प वृद्धि भी करता है–

जहां तक उत्तरी गोलार्द्ध के लोगों का संबंध है, वे ऐसे लोग हैं जिनके लिए सूर्य पथ-दिशा से दूर है। जैसे-जैसे हम उत्तर की ओर स्लाफ़, फ़िरंगी और उन क़ौमों की ओर बढ़ते हैं जो उनकी पड़ोसी है तो सूर्य और भी दूर होता जाता है। सूर्य की शक्ति अधिक दूरी के कारण वहां कम हो जाती है, सर्दी और आर्द्रता और बर्फ़बारी क्रमशः होती है और इनका अंतहीन सिलसिला जारी रहता है। उन लोगों में गर्मजोशी की कमी है। वे विशालकाय हैं। उनका चिड़चिड़ा स्वभाव है, उनके तौर-तरीक़े और शिष्टाचार आवेगपूर्ण हैं, उनकी समझ कुंद है और उनकी भाषाएं भारी-भरकम हैं। उनका रंग गहरा मांसल है। उनकी आंखें भी नीली हैं जो उनके रंग से मिलती हैं। उनके बाल लंबे और बदनुमा हैं और आर्द्र हवा व कुहरे के कारण लाल रंग के हैं। उनकी धार्मिक आस्थाएं सुदृढ़ नहीं हैं। इसका कारण तीव्र ठंडी और ऊष्मा की कमी है। उत्तर में जितना आगे बढ़ते जाते हैं वे अधिक मूर्ख, गंवार और जंगली नज़र

आते हैं। और आगे उत्तर में उनकी ये चीज़ें और भी अधिक बढ़ जाती हैं...जो इस नगर-क्षेत्र से 60 मील आगे रहते हैं वे याजूज-माजूज (प्राचीन क़ौमें) हैं। ये लोग छठे प्रांत में हैं और मवेशियों में गिने जाते हैं।

यही लेखक एक और पुस्तक में लिखता है–

फ़िरंगी, स्लाफ़, हस्पानवी, लोम्बार्ड, याजूज-माजूज, तुर्क, ख़ज़ार, बुल्ग़ारी, ईलान, जालीसी और दूसरे लोग जिन्हें हमने बताया है कि वे बर्ज जुदी के क्षेत्र में आबाद हैं, अर्थात उत्तर में। वे दैवीय (इल्हामी) क़ानून के आलिमों में से राय देने के अधिकारी लोगों की सर्वसम्मति के निर्णयानुसार हज़रत नूह के बेटे जाफ़ की संतान हैं...इनमें फ़िरंगी सबसे अधिक वीर लोग हैं, सबसे अधिक सुरक्षित और प्रायः हथियारों से लैस, विस्तृत भू-भागों और अगणित नगरों के स्वामी हैं, सुसंगठित और अपने सम्राट के वफ़ादार सिवाय इसके कि जालीसी फ़िरंगियों से अधिक निडर और क्रूर हैं। जालीसी का एक आदमी कई फ़िरंगियों का मुक़ाबला कर सकता है।

सारे फ़िरंगी सम्राट की प्रजा हैं और इस मामले में उनके बीच कोई मतभेद नहीं। आजकल उनकी राजधानी का नाम बाज़यज़ा है, जो बहुत बड़ा नगर है। उनके लगभग एक सौ पचास नगर है। इनके अलावा गांव और क़स्बे हैं।

कातिब चलबी की पुस्तक से एक सौ वर्ष से भी पहले यूरोप के पाठक के पास उस्मानी साम्राज्य के इतिहास और उसकी संस्थाओं के बारे में अधिक जानकारी देने वाली पुस्तकें विद्यमान थीं। उनमें महत्वपूर्ण उस्मानी रोज़नामों के अनुवाद भी सम्मिलित थे। यूरोप की अधिक दिलचस्पी उस्मानी तुर्कों से थी, क्योंकि वे उसके लिए ताज़ा और तात्कालिक समस्या बने हुए थे। यूरोप के लोगों की कुछ अवधि तक इस्लाम के आरंभिक इतिहास और इस्लामी संस्कृति से भी दिलचस्पी रही थी और इस पर बड़ी संख्या में पुस्तकें लिखी गयी थीं। उनमें अरबी नुस्ख़ों के अनुवाद और मुस्लिम विचारों और साहित्य के इतिहास भी शामिल थे।

भूगोल की इन अरबी और फ़ारसी पुस्तकों से यूरोप की एक ऐसी तस्वीर तैयार की जा सकती है जो उस ज़माने के मुसलमानों की नज़र में सही थी। मुस्लिम उन्दुलुस (स्पेन) की 'सभ्य' दुनिया के उत्तर में उत्तरी स्पेन की पहाड़ियां और पायरनीज़ की गुफ़ाएं थीं और वहशी और प्राचीन ईसाई आबाद थे जो गैलसीन और बासिक या बासिक़ कहलाते थे। इटली में, मुसलमानों के अधीनस्थ क्षेत्रों के उत्तर में रोम या रोमा का क्षेत्र था, जिस पर धार्मिक सम्राट पोप का शासन था। इसके आगे जंगल में रहने वाले लोगों की आबादी थी जो लोम्बार्ड कहलाते थे। रोम सागर की पूर्वी सीमा पर अर्थात मुस्लिम सीमाओं के उत्तर में रोम साम्राज्य (यूनानी और रोमी सरकार) था और उससे आगे विस्तृत स्लाफ़ भू-भाग था। स्लाफ़ एक महान नस्ल थी, जो बहुत-से लोगों में बंटी थी, जिनमें से कुछ से मुस्लिम व्यापारी और पर्यटक भली-भांति अवगत थे। स्लाफ़ के पश्चिम में ऐलीस और पायरनीज़ तक फैले क्षेत्र में फ़रंजा का विस्तृत साम्राज्य था अर्थात फ़िरंगियों की धरती। इन अनुसंधानकर्ताओं में से कुछ, दूसरे और लोगों को भी अलग करते हैं और वे हैं बुल्गारिया के लोग। इससे भी आगे उत्तर में अर्थात फ़िरंगियों से भी आगे अग्निपूजक मजूसी या माजी थे। अरबों ने यह नाम नार्वे आदि के लोगों के लिए प्राचीन फ़ारसी नाम से ज़बरदस्ती ले लिया है। उत्तर के जिन पिछड़े उत्तरी भू-क्षेत्र के नाम मुस्लिम पुस्तकों में मिलते हैं, उनमें ब्रिटेन, कभी-कभी आयरलैंड और यहां तक कि स्केन्डेनिया भी सम्मिलित हैं।

कभी-कभी मुस्लिम लेखक रोम की शब्दावलियां मध्य और पश्चिम के लिए प्रयुक्त करते हैं, जिसे ईसाई दुनिया कहते हैं। लेकिन सामान्य रूप से यूरोप के लिए विभिन्न शब्दावलियां प्रयुक्त की जाती हैं। इनमें सबसे सामान्य अफ़्रांज या फ़्रांज है जो फ़्रैंक का अरबी भाषा में प्रयुक्त हुआ है (उर्दू, फ़ारसी में यह फ़्रैग या अफ़्रैंग है)। यह नाम मुसलमानों तक संभवतः बाज़न्तीन के द्वारा पहुंचा और वास्तव में यह शारलमीन के पश्चिमी राज्य के लोगों के लिए प्रयुक्त किया जाता था। बाद में यूरोप के सभी लोगों को यही कहा गया। मध्यकाल में यह नाम सामान्यतः हस्पानवी, स्लावी और स्केन्डेनिया के

लोगों के लिए प्रयुक्त नहीं होता था, तथापि एक सामान्य अर्थ में इसे मध्य यूरोप और ब्रिटिश द्वीप के लिए प्रयुक्त किया जाता था । फ्रैंक भू-भाग को अरबी में फ़रंजा और फ़ारसी एवं पूर्वी तुर्की में फ़िरंगिस्तान कहा जाता था ।

मध्यकाल की अरबी पुस्तकों में कभी-कभी यूरोप के लोगों के लिए एक और शब्दावली भी प्रचलित की । वह थी इब्नुल असफ़र जिसका अर्थ है, ''पीतिमा के बच्चे या पीत बच्चे ।'' पहले इसे प्राचीन अरबों ने यूनानियों और रोमनों के लिए प्रयुक्त किया । फिर बाद में स्पेन और आम यूरोप तक इसे फैला दिया गया । गौत्र विद्या के विशेषज्ञ इस नाम का संबंध एक व्यक्तिगत नाम असफ़र से जोड़ते हैं, जो ईसाव का पौत्र और रोमल का बेटा था एवं यूनानियों व रोमियों का पड़दादा था । कुछ अन्वेषक कहते हैं कि यूरोप के लोगों के रंग के कारण उनका यह नाम रखा गया, जो एशिया और अफ़्रीक़ा के गेहुंए और काले रंग के मुक़ाबले में पीला नज़र आता है । लेकिन यह अन्तर कल्पनीय नहीं है । अरब और ईरानी लेखक सामान्यत: श्वेत को श्वेत ही लिखते हैं, पीला नहीं । फिर वे यूरोप के लोगों को नस्ल या रंग की दृष्टि से यदा-कदा ही याद करते हैं । वे अपने और दक्षिण एवं पूरब के अश्वेत लोगों के बीच रंग के अन्तर का तो बहुत अधिक लिहाज़ रखते थे और कभी इसमें अति को भी पहुंच जाते थे, लेकिन अपने उत्तर में आबाद पड़ोसियों की अपेक्षा हल्के रंग को अधिक महत्व नहीं देते थे । कभी-कभी स्लाफ़, तुर्क और दूसरे मैदानी लोगों का और फ़िरंगियों के श्वेत चमकदार और पक्के रंग का उल्लेख अपमानजनक शैली में मिलता है । उस्मानी काल में कुछ अवसरों पर इब्दुल असफ़र की शब्दावली मध्य और पूर्वी यूरोप के स्लाफ़ लोगों क़े लिए सामान्यत: और रोमियों के लिए मुख्यत: प्रयुक्त की जाती थी । रूस के ज़ार को 'अल-मुल्क अल-असफ़र' कहा जाता था अर्थात पीत सम्राट ।

यूरोप के बारे में मुसलमानों की जानकारियों के साधन क्या थे ? वे इल्मी साधनों विशेष रूप से यूनानी साधनों पर निर्भर रहे । इनके अतिरिक्त कुछ सुरयानी और ईरानी साधन भी थे । निश्चय ही उन्होंने पश्चिमी पुस्तकों से अधिक जानकारियों को प्राप्त नहीं किया । जहां तक हम जानते हैं मध्यकाल में केवल एक पश्चिमी पुस्तक का अरबी में अनुवाद हुआ ।

एक-दो और पुस्तकें भी किसी के द्वारा उन तक पहुंची होंगी । अतएव मसऊदी, क्लोवस से लुई चतुर्थ तक फिरंगी सम्राटों का संक्षेप में उल्लेख करते हुए लिखता है कि इन पुस्तकों का स्रोत एक फ़िरंगी बिशप की वह पुस्तक है जो उसने 939 ई० में ग़रनाता के अमीर के लिए लिखी थी ।

''मिस्र में क़ुस्तात के स्थान पर वर्ष 339 (947 ई०) में मुझे दोमर (गोडमर) बिशप जबरूना नगर, जो फ़िरंगियों का एक नगर है, की पुस्तक मिली । यह पुस्तक 328 में अल-हकम इब्न अब्दुर्रहमान इब्न मुहम्मद, युवराज अब्दुर्रहमान हाकिम उन्दुलुस के लिए लिखी गयी थी । इस पुस्तक के अनुसार फ़िरंगियों का पहला सम्राट क्लोविया था । वह मूर्तिपूजक था । उसकी पत्नी ने जिसका नाम ग़रताला था उसे ईसाई बना दिया । इसके बाद उसका बेटा लदरक आया । फिर उसका बेटा वाकोशर्त, फिर उसका बेटा लदरक, फिर उसका भाई करतान, फिर बेटा कार्ला, फिर उसका बेटा तबीन और उसका बेटा काली आया । उसने बीस वर्ष तक शासन किया । उसका काल अल-हकम, हाकिम उन्दुलुस का है । उसकी मृत्यु के बाद उसके बेटों में लड़ाई हो गयी । उनके मतभेद इतने बढ़े कि एक अवसर पर ऐसा लगता था कि फ़िरंगी स्वयं ही उनके कारण अपने आपको विनष्ट कर लेंगे । इसके बाद कार्ला का बेटा हाकिम बन गया, जिसने 28 वर्ष 6 माह तक शासन किया । यह वही था, जो तौसा पर्वत की ओर आगे बढ़ा और उसकी घेराबंदी कर ली । इसके बाद कार्ला आया, फिर लदरक का बेटा । यह वही था जिसने मुहम्मद इब्न अब्दुर्रहमान इब्न अल-हकम को तोहफ़े भेजे और उसे 'इनाम' की उपाधि से याद किया । उसने 39 वर्ष 6 माह तक शासन किया । इसके बाद उसके बेटे लदरक ने 6 वर्ष तक शासन किया । फिर फिरंगी रईस नौसा ने उसके विरुद्ध विद्रोह किया और राज्य पर क़ब्ज़ा कर लिया एवं आठ वर्ष तक शासन किया । यही वह था जिसने अपने देश के नाराज़ लोगों को सात वर्ष के लिए सात सौ सोने के 'रतल' (आधा सेर वज़न) और छह सौ चांदी के 'रतल' के बदले में ख़रीद लिया । ये 'रतल' फ़िरंगियों के सम्राट ने अदा किये । इसके बाद काली पिसर तकवीरा ने चार वर्ष तक शासन किया । फिर एक और काला आया जो 31 वर्ष तीन माह तक क़ब्ज़ा जमाये रखा । फिर लदरक पिसर कार्ला आया । और यह आज के ज़माने अर्थात 336 हिजरी में फ़िरंगियों का सम्राट

है । हम तक जो सूचना पहुंची है उसके अनुसार उन पर दस वर्ष से अधिक अवधि से शासन कर रहा है ।''

मसऊदी ने 16 सम्राटों के जो नाम गिनाये हैं उनमें से चार्ल्स मार्तिन से लुई चतुर्थ तक दस की किसी हद तक पहचान की जा सकती है । पहले छह नामों में से क्लोवस, क्लोटाडे और उसके पड़पोते (प्रपौत्र) के बेटे डियूगोबर्ट को पहचानने में कोई कठिनाई नहीं होती । इसके बाद शेष को पहचानना कठिन है । फिर भी इस उद्धरण का महत्व नामों की सूची के कारण नहीं है, जिसमें ग़लतियां और उच्चारण की ख़ामियां हैं । इसका महत्व स्वयमेव इस सूची को मौजूदगी में है ।

इस्लामी दुनिया के बारे में पश्चिमी क्लासिकी इतिहास-लेखन अपनी स्थूलता में मध्यकाल के यूरोप के सभी राज्यों के मुक़ाबले में बहुत अधिक है और इसका स्तर भी बहुत ऊंचा है । आश्चर्य तो इस बात पर होती है कि रोम सागर से स्पेन, सिसली और उत्तरी अफ़्रीक़ा तक मुसलमानों और ईसाइयों में लड़ाई के बावजूद मुसलमान आलिमों में इस्लामी सीमाओं के पार यूरोप के बारे में जानने की कोई इच्छा पैदा नहीं हुई । इस्लाम के पहले हज़ारिया में केवल तीन पुस्तकें ऐसी सुरक्षित हैं जो मुसलमान पाठकों के लिए पश्चिमी यूरोप के इतिहास के बारे में कुछ जानकारियां जुटाती हैं, मसऊदी की सूची इनमें पहली कोशिश है ।

यद्यपि यूरोप के इतिहास की बिल्कुल अनदेखी कर दी गयी थी, तथापि उसकी भौगोलिक स्थिति पर बराबर ध्यान दिया जा रहा था । मुसलमान भूगोलशास्त्रियों ने भौगोलिक स्थिति पर विशेष ध्यान दिया और उस पर काफ़ी पुस्तकें लिखीं । पहले तो यूनानी पुस्तकों के सार-संक्षेप किये गये, फिर स्वयं ही पुस्तकें लिखी गयीं । इनमें पहले तो अनेक सफ़रनामे (यात्रा वृत्तांत) थे, फिर विधिवत अनुसंधान के कार्य किये गये । कुछ विधिवत पुस्तकें थीं और वर्णमाला के हिसाब से भौगोलिक शब्दकोष तैयार किये गये । उनमें प्रायः यूरोपीय नाम भी सम्मिलित होते थे ।

रोम के महान साम्राज्य से मुसलमान भली-भांति अवगत थे, लेकिन वे उसे बाज़न्तीनी साम्राज्य के साथ गड्डमड्ड कर देते थे जिसे वे रोम कहते थे । कुछ लेखक इटली के रोम से भी अवगत थे । एक अरब लेखक हारून इब्न यह्या का एक लंबा उद्धरण प्रस्तुत करता है । हारून के बारे में ख़याल है कि 886 ई० में जब वह रोम में था तो उसने समय क़ैद की सज़ा भी काटी थी । हारून ने रोम के नगर और कलीसाओं के बारे में बड़ी अतिरंजना की है । वह लिखता है–

''इस नगर से आप जहाज़ लेते हैं और तीन महीने का सफ़र करके शाहे बरजान (बरगंडी) के राज्य पहुंच जाते हैं । वहां से आप पहाड़ों और घाटियों से होते हुए एक मास में फ़रंजा भू-भाग में पहुंच जाते हैं । और वहां से आप और आगे चलते हैं और तद्अधिक चार मास का सफ़र करते हैं तो बरातानिया (ब्रिटेन) के शहर पहुंच जाते हैं । पश्चिमी समुद्र तट पर यह बड़ा शहर है । इस पर सात सम्राट शासन करते हैं । शहर के द्वार पर एक प्रतिमा है । जब कोई मुसाफ़िर शहर में प्रवेश करने का प्रयास करता है, तो उसे नींद आने लगती है और प्रवेश नहीं कर सकता, यहां तक कि शहर के लोग उसे गिरफ़्तार कर लेते हैं और उसके शहर में प्रवेश करने का उद्देश्य मालूम करते हैं । ये ईसाई हैं और रोम की धरती ही इनकी आख़िरी ज़मीन है । इससे परे कोई आबाद क्षेत्र नहीं है ।''

इससे स्पष्ट होता है कि हारून रोम से आगे गया ही नहीं । दिलचस्प बात यह है कि उसने बरतानिया (ब्रिटेन) और सात एंग्लो सैक्सन सम्राटों के शासन के बारे में भी सुना था और उनके आब्रजन नियमों के संबंध में भी जानता था । इन नियमों पर अरबी में संभवतः यह पहली रचना थी । लेकिन ये घटनाएं कुछ पुरानी हैं, क्योंकि सात सम्राटों का शासन तीस वर्ष पूर्व समाप्त हो चुका था ।

रोम के बारे में हारून की जानकारियां इस शहर से जुड़ी अजीबोग़रीब कहानियों से ली गयी मालूम होती हैं, जिनकी मिसालें मध्यकाल की पुस्तकों में बहुत मिलती हैं । उनमें से कुछ कहानियां इब्नुल फ़क़ीया ने संग्रहीत की थीं जिनका उल्लेख याक़ूत ने किया है । याक़ूत महान मुस्लिम भूगोलशास्त्रियों में से था । उसकी मृत्यु 1229 ई० में हुई । याक़ूत ने जो कहानियां बयान की हैं, उनमें से कुछ पर उसे स्वयं भी सन्देह था । उसके भौगोलिक शब्दकोष में रोम पर यह लिखा गया है–

''रोमया, प्रमाणिक विद्वानों ने इसका यह उच्चारण बयान किया है । अल-असमाई (प्रसिद्ध भाषा विज्ञानी) कहता है, ''यह नाम उसी ढंग का है, जैसे अंताकिया, इफ़ामिया, नाक़िया, सलोक़िया और मलातिया । रोम की भाषा और देश में ऐसे नाम बहुत हैं । रोम दो हैं । इनमें से

एक रोम में है और दूसरा मदाइन में, जिसका नाम एक सम्राट के नाम पर रखा गया है । जो भू-भाग रोम में है वह उनकी हाकिमियत और उनके ज्ञान व तत्वदर्शिता का केन्द्र है । रोमी राजाज्ञा में यह नाम है रोमानस । इस नाम को अरबी रूप दिया गया और वहां जो लोग रहते हैं वे रोमी कहलाते हैं ।

यह शहर कुस्तुन्तुनिया से उत्तर पश्चिम में है, पचास दिन या उससे अधिक दूरी पर । आजकल यह फ़िरंगियों के हाथ में है और इसका सम्राट शाह-अलमान कहलाता है । इसमें पोप रहता है । रोम अपने भवनों, अपने विस्तृत भू-क्षेत्र और जनसंख्या की दृष्टि से विश्व-आश्चर्यों में से है । जहां तक मेरा संबंध है, मैं यह ज़िम्मेदारी स्वीकार करने को तैयार नहीं हूं कि जो भी मेरी पुस्तक पर नज़र डाले वह उन बातों से कुछ और अर्थ निकाले जो मैं इस शहर के बारे में बयान करने वाला हूं, क्योंकि निश्चय ही यह महान शहर है, सामान्य (शहरों) से अलग और इस (शहर) जैसा कोई दूसरा नहीं हो सकता, लेकिन बहुत-से लोग देखते हैं जिन्होंने ज्ञान और विद्वता में प्रसिद्धि प्राप्त की और उन्होंने वह बयान किया है जो मैं कहने वाला हूं । उन्होंने जो कहा, मैं उसी को दोहराऊंगा । अब अल्लाह ही बेहतर जानता है कि सच क्या है ।''

इस सावधानी वाले बयान और अपनी ज़िम्मेदारी से हटने के बाद याक़ूत मध्यकाल की पुस्तकों से लंबे-लंबे उद्धरण नक़ल करता है । इनमें से प्रायः यूरोपीय हैं जो रोम की विचित्रताओं के बारे में हैं । याक़ूत इस प्रकार अपना बयान समाप्त करता है–

''यहां मैंने जो कुछ कहा है वह अहमद इब्न मुहम्मद अल-हमदानी अल-मअरूफ़ इब्न फ़क़ीहा की पुस्तक से लिया है । इस वृत्तांत का सबसे कठिन भाग यह है कि शहर इतना विस्तृत है कि इसके ग्रामीण क्षेत्र जो कई महीने की दूरी पर फैले हुए हैं इतनी ख़ुराक पैदा नहीं करते कि इसकी आबादी के लिए काफ़ी हो, तथापि कुछ लोग इसे बग़दाद (बुग़दाद) से मिलाते हैं कि इसकी सीमाएं, विस्तार, आबादी की भीड़ और स्नानघरों की संख्या भी इसके समान है । लेकिन ऐसी बातें किसी ऐसे व्यक्ति के लिए स्वीकार करना कठिन है जो केवल इन बातों के बारे में सुनता है, फिर भी ऐसा उसने कभी देखा नहीं और अल्लाह ही बेहतर जानता है कि सच क्या है । जहां तक मेरा संबंध है, यह मेरी विवशता है कि जो कुछ कहा गया है, मैंने वह सब नक़ल नहीं किया, उसे संक्षिप्त कर दिया है ।''

याक़ूत के दृष्टिकोण से सहानुभूति ही प्रकट किया जा सकता है । पश्चिम यूरोप पर मध्यकाल की अधिकांश मुस्लिम पुस्तकें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से मुस्लिम राजदूत इबराहीम इब्न याक़ूब के बयान पर ही निर्भर हैं, जो दसवीं सदी के मध्य में था । इब्न याक़ूब ने क्या लिखा, इसके लिए दो मिसालें ही काफ़ी हैं–

''आयरलैंड छठे प्रांत के उत्तर पश्चिम में एक द्वीप... सारी दुनिया में वाइकिंग ने इससे अधिक और कहीं इतनी मज़बूती से पांव नहीं जमाए । इसका क्षेत्रफल एक हज़ार मील है और इसके लोग अपने रीति-रिवाज और परिधान में वाइकिंग हैं । वे जो 'लबादा' (वस्त्र) पहनते हैं उसकी क़ीमत एक सौ दीनार होती है । उनके गणमान्य लोग जो 'लबादा' पहनते हैं उस पर मोती टके होते हैं । कहा जाता है कि वे अपने समुद्र-तटों पर व्हेल के बच्चों का शिकार करते हैं, जो बहुत बड़ी मछली है । वे उनके बच्चों का शिकार करते हैं और उसका स्वादिष्ट मांस खाते हैं ।

कहते हैं कि बच्चे सितम्बर में पैदा होते हैं और उन्हें अक्तूबर, नवम्बर, दिसम्बर और जनवरी में पकड़ा जाता

ख़ुरादाद कहता है, ''आबाद दुनिया चार भागों में बंटी हुई है–यूरोप, लीबिया, हब्शा और सीथिया । यह विभाजन अरबी की कुछ दूसरी पुस्तकों में भी पाया जाता है । इसका स्रोत यूनानी सूत्र थे, लेकिन बहुत जल्द मुसलमानों की भूगोल की पुस्तकों में यह विभाजन दिखायी नहीं पड़ने लगा । इब्न ख़ुरादाद बहा यूरोप को 'यूरोफ़ा' लिखता है । उसकी पुस्तक में उन्दलुस (अर्थात मुस्लिम स्पेन) स्लाफ़ भू-भाग, रोमा, फ़िरंगी और तंजा से मिस्र तक के क्षेत्र में सम्मिलित हैं ।

है । इसके बाद उनका मांस कठोर हो जाता है और खाने के योग्य नहीं रहता । उनके शिकार का तरीक़ा यह है...शिकारी जहाज़ों पर इकट्ठा होते हैं, वे अपने साथ लंबे-लंबे लोहे के कांटे ले जाते हैं जिनके दांत होते हैं । कांटे पर बहुत बड़ा और मज़बूत छल्ला होता है । छल्ले में मोटी-सी कोड मछली होती है । नन्हीं व्हेल को तालियां बजाकर अपनी ओर बुलाया जाता है । वह बड़े मैत्रीपूर्ण अंदाज़ में जहाज़ के निकट आ जाती है । तब एक जहाज़ी उस पर छलांग लगाता है और ज़ोर-ज़ोर से उसका माथा सहलाता है । इससे नन्हीं व्हेल को मज़ा आता है । फिर जहाज़ी लोहे का कांटा व्हेल के सिर के बीच में रखता है, फिर एक मज़बूत हथौड़ा लेता और पूरी शक्ति से कांटे पर तीन चोटें लगाता है ।

पहली चोट व्हेल कुछ नहीं कहती, दूसरी और तीसरी चोट पर वह बेचैन हो जाती है और कभी-कभी जहाज़ पर इतनी ज़ोर से अपनी दुम मारती है कि जहाज़ टूट जाता है । वह इसी तरह उछलती रहती है, आख़िरकार थक जाती है । फिर जहाज़ में बैठे आदमी एक दूसरे की मदद करते हैं और व्हेल को खींचते हुए समुद्र तट पर ले आते हैं । कभी-कभी नन्हीं व्हेल की मां यह सब देख लेती है और उसका पीछा करती है । उसके लिए वे लोग लहसुन कुचलते हैं और उसे पानी में मिला देते हैं । मां लहसुन की बू सूंघती है तो उसे बुरा लगता है । वह मुड़ती है और वापस चली जाती है । फिर वे नन्हीं व्हेल का मांस काटते हैं और उस पर नमक छिड़कते हैं । उसका मांस ऐसा सफ़ेद होता है जैसे बर्फ़ और उसकी खाल ऐसी काली होती है जैसे स्याही ।''

आयरलैंड के समुद्र में व्हेल के शिकार के बारे में याक़ूत का बयान वास्तव में तथ्याधृत नज़र आता है । इससे उसके ज्ञान का प्रकटन होता है कि व्हेल की मां होती है और हारपून से उनका शिकार किया जाता है, लेकिन यह बात संदिग्ध मालूम होती है कि वह कभी आयरलैंड गया था । उसका बयान सुनी-सुनायी बातों पर आधारित है । अलबत्ता बोहीमिया के बारे में उसका बयान उसके अपने अनुभव पर आधारित मालूम होता है–

''बोहीमिया : यह स्लाफ़ वंश के शाह का भू-भाग है । इसकी लंबाई प्राग नगर से कराकूद तक तीन मील की दूरी है और इसकी सीमा लंबाई में तुर्क भू-भाग के साथ-साथ है । नगर प्राग पत्थर और चूने से निर्मित किया गया है और व्यापार में इन सभी भू-क्षेत्रों में सबसे अधिक समृद्ध है । रूसी और स्लाफ़ कराकूद से सामान ले जाते हैं, मुस्लिम, यहूदी और तुर्क, तुर्की भू-भाग से माल व सामान ले जाते हैं और अपने साथ गुलाम और कई प्रकार की ख़ाल की कोटें लाते हैं । उनका देश सभी उत्तरी लोगों में सबसे अच्छा है और सबसे धनवान है । एक पाई में यहां इतना अधिक आटा ख़रीदा जा सकता है कि एक आदमी के एक माह के लिए काफ़ी हो । और इस रक़म से सवारी के जानवरों के लिए काफ़ी जौ ख़रीदे जा सकते हैं, जो चालीस दिन काम आएं । एक पाई में यहां दस मुर्ग़ियां मिलती हैं ।

नगर प्राग में घोड़ों की काठी, लगामें और चमड़े की पेटियां तैयार की जाती हैं जो इन क्षेत्रों में इस्तेमाल की जाती हैं और बोहीमिया में ये लोग हल्के और नाज़ुक चन्द्राकार रूमाल तैयार करते हैं जिन पर कशीदाकारी की होती है और जो जाली की तरह होते हैं । उनकी क़ीमत सदैव एक पाई के दस रूमाल होती है । इससे वे एक-दूसरे के साथ कारोबार और सौदेबाज़ी करते हैं । उनके पास उनसे भरे बर्तन होते हैं । उन्हें वे रक़म या सिक्का मानते हैं और सबसे अधिक क़ीमती चीज़ें उनसे ख़रीदी जाती हैं, जैसे–गेहूं, गुलाम, घोड़े, सोना, चांदी और सभी चीज़ें । आश्चर्य की बात है कि बोहीमिया के लोग भूरे और काले बालों वाले हैं, उनमें हल्के पीत वर्ण सदृश लोग बहुत कम हैं ।''

मुस्लिम क्षेत्रों पर ईसाइयों की दोबारा जीत और सलीबी लड़ाइयों ने मुसलमानों और ईसाइयों के बीच काफ़ी मेल-जोल क़ायम कर दिया था । अतएव आशा की जा सकती है कि मुसलमानों के पास अपने ईसाई पड़ोसियों के बारे में अधिक विस्तृत और ठीक-ठीक जानकारियां होंगी, बल्कि पुराने ज़माने की संदिग्ध सूचनाओं, अफ़वाहों और कल्पनाओं के मुक़ाबले में अधिक ठोस जानकारियां होंगी । यह बात ठीक है कि 12वीं, 13वीं और 14वीं सदी के मुसलमान सलीबी लड़ाइयों से पहले के अपने लोगों के मुक़ाबले में पश्चिम के बारे में अधिक जानते थे, लेकिन आश्चर्य इस बात पर होता है कि फिर भी वे बहुत कम जानते थे और इससे भी अधिक आश्चर्य की बात यह है कि वे इसकी परवाह भी बहुत कम करते थे ।

अपने ज़माने का महानतम भूगोलशास्त्री ईरान का ज़करिया इब्न मुहम्मद अल-क़ज़वीनी (मृत्यु 1283 ई०) भी यूरोप के बारे में अधिक जानकारियां इब्न याक़ूत से ही प्राप्त

करता है और इसके लिए वह आभारी भी है कि याक़ूत की रचनाएं सुरक्षित हैं । अपने ज़माने के फ़िरंगियों के बारे में वह लिखता है–

''फ़िरंग भू-भाग, एक शक्तिशाली भू-भाग और ईसाइयों के देश में एक विस्तृत साम्राज्य । इसमें सर्दी बहुत अधिक है और सर्दी के कारण हवा भारी है । वह अच्छी चीज़ों से परिपूर्ण है । फल और खाद्यान्न बहुत हैं । नदियां भी बहुत हैं । बेशुमार पैदावार है, खेती-बाड़ी का सामान, चौपाए, वृक्ष और शहद प्रचुर मात्रा में है । अगणित प्रकार के शिकार हैं और फ़िरंगी भू-भाग की तलवारें हिन्दुस्तान की तलवारों से तेज़ हैं ।

इसके लोग ईसाई हैं और इनका सम्राट साहस और हौसले वाला है और महान शक्ति के साथ वह अगणित लोगों पर शासन करता है । इस्लामी भू-भाग में समुद्र तट पर उसके दो या तीन नगर हैं और वे अपनी दिशा से उसकी रक्षा करता है । जब मुसलमान अपनी सेनाएं भेजते हैं तो वह अपने नगरों की रक्षा के लिए सेना भेज देता है । उसके सिपाही बड़े साहसी हैं । मुक़ाबले के समय वे फ़रार होने को नहीं सोचते, मृत्यु को प्राथमिकता देते हैं ।''

इस बयान का एक भाग पहले के लेखकों की पुनरावृत्ति है जिनमें संभवत: याक़ूत भी सम्मिलित है । लेकिन दूसरा भाग जो इस्लामी भू-भाग में फ़िरंगियों के क़ब्ज़े वाले नगरों और उनके सिपाहियों की वीरता और उनके साहस के बारे में है, सलीबी लड़ाइयों के ज़माने का मालूम होता है । क़ज़वीनी के पर्यवेक्षण से यह आभास मिलता है कि वे सीधे संपर्कों से प्राप्त किये गये हैं, जो पर्यटकों की कहानियों, रिवायतों (परंपराओं) और यूनान से प्राप्त किये हुए उस ज्ञान से भिन्न है, जिससे पुरानी पुस्तकें भरी हुई हैं ।

इससे अच्छी जानकारियां इस्लामी पश्चिम अर्थात उत्तरी अफ़्रीक़ा और स्पेन वालों को थीं । जहां तक हाथ से निकल चुके क्षेत्रों पर दोबारा क़ब्ज़ा करने के लिए ईसाइयों की अग्रसरता से इच्छा के विरुद्ध ही सही, लेकिन मुसलमानों और ईसाइयों के बीच निकट संपर्क हो गया था । 12वीं सदी का भूगोलशास्त्री ज़हूरी जो संभवत: स्पेन में बैठा लिख रहा था, वीनस, अमालफ़ी, पीसा और जेनेवा के बारे में लिखता है, उनके व्यापारियों और वहां की चीज़ों पर भी लिखता है ।

जेनेवा के बारे में वह अपना यह विचार प्रकट करता है कि ''वह रोमियों और फ़िरंगियों के बड़े नगरों में से एक है और उसके लोग रोमियों के क़ुरैश हैं ।'' चूंकि क़ुरैश हज़रत मुहम्मद (सल्लल्लाहु अलैहि वसल्लम) का क़बीला था और सारे अरब में प्रतिष्ठित और सम्मानित माना जाता था, इसलिए जेनेवा के लोगों को यह बहुत बड़ा सम्मान दिया गया था । केवल यही नहीं, ज़हूरी ने यहां तक लिखा कि ''कहा जाता है जनेवा के निवासी अरब क़बीले ग़स्सान से संबंध रखते हैं, जो ईसाई हो गया था । यह क़बीला इस्लाम से पहले शाम और अरब के सीमांत क्षेत्रों में रहता था ।'' ये लोग अपनी शक्ल में रोमियों से नहीं मिलते । अक्सर रोमी गोरे हैं, हालांकि ये लोग गहरे रंग के हैं । उनके घुंघराले बाल हैं और खड़ी नाक है । इसलिए कहा जाता है कि ये लोग अरब नस्ल के हैं ।

इसी बीच उत्तरी अफ़्रीक़ा का एक और मुसलमान जो संभवत: सिसली में रहता था, एक पुस्तक लिखता है । यह पुस्तक यूरोप और शेष दुनिया से संबंधित मुसलमानों के ज्ञान उच्च स्तर प्रस्तुत करती है । अबू अब्दुल्लाह मुहम्मद अल-शरीफ़ अल-इदरीसी का संबंध मराकश के पूर्व शासक परिवार से था । वह 1099 ई० में मराकश के नगर सीवता में पैदा हुआ । ग़रनाता में शिक्षा प्राप्त करने और अफ़्रीक़ा एवं पूर्व की ओर सैर व पर्यटन करने के बाद वह वापस पहुंचा तो उसे सिसली के नार्मन सम्राट रोजर द्वितीय का आमंत्रण मिला और वह पालेरमो में बस गया । वहां अपने पर्यटन के दौरान संग्रहीत और दूसरों से प्राप्त जानकारियों पर आधारित उसने एक पुस्तक लिखी, जिसे 'रोजर की पुस्तक' के नाम से जाना जाता है । यह पुस्तक भूगोल की महानतम पुस्तक मानी जाती है । यह पुस्तक 1154 ई० में पूरी हुई ।

इस पुस्तक में इटली के बारे में बहुत अधिक जानकारियां हैं और इसमें पश्चिमी यूरोप के अधिकतर भागों पर भी विस्तारपूर्वक प्रकाश डाला गया है । और इदरीसी पुराने मुसलमान भूगोलशास्त्रियों पर निर्भर नहीं होता, बल्कि पश्चिमी ईसाई लेखकों से लाभ उठाता है और संभवत: उत्तरी स्पेन के नक़्शों से काम लेता है । ये नक़्शे उसे सरलता से सिसली में मिल गये होंगे । बरतानिया (ब्रिटिश) द्वीप समूह के बारे में इदरीसी इस प्रकार लिखता है–

''सातवें प्रांत का पहला भाग समग्र रूप से समुद्र पर

आधारित है । उसके द्वीप बेआबाद और सुनसान हैं ।

सातवें प्रांत के दूसरे भाग में समुद्र है जिसमें लाअंज़लेस्तर (इंग्लैंड) का द्वीप समूह है । यह बहुत बड़ा द्वीप है जिसकी आकृति शतुरमुर्ग़ के सिर जैसी है, इसमें आबाद नगर में ऊंची पहाड़ियां हैं, बहते स्रोत हैं और फैली हुई ज़मीन है । वह बहुत उर्वर है और उसके लोग मज़बूत, मेहनती और परिश्रमी हैं । वहां स्थायी रूप से सर्दी है । इससे निकटतम धरती वसान है जो फ्रांस में है । इस द्वीप और यूरोप महाद्वीप के बीच 12 मील चौड़ा जलडमरूमध्य है ।''

इसके बाद इदरीसी संक्षिप्त रूप से डोरयेस्टर देरहम डार्ट मिथ द्वीप का तंग भाग जिसे कारयवाल कहा जाता है और जो चिड़िया की चोंच की तरह है, साल्सबरी, साउथटमन व नयस्टर शोरहम एक नगर जो काफ़ी बड़ा है और बड़ी जनसंख्या वाला है, भीड़ वाले बाज़ारों, दस्तकारों और समृद्ध व ख़ुशहाल व्यापारियों से भरा हुआ है वह डोवर, लंदन, लिंकन और डरहम नगरों का उल्लेख करता है । इसके आगे स्काटलैंड है, जिसके बारे में इदरीसी लिखता है–

''यह इंग्लिस्तान द्वीप से जुड़ा है और यह लंक प्रायद्वीप है जो बड़े द्वीप के उत्तर में है । यह बेआबाद है और इसमें नगर है न गांव । इसकी लंबाई 150 मील है ।''

इदरीसी ने इससे भी अधिक दूरस्थ स्थान का उल्लेख करता है–

''बेआबाद प्रायद्वीप की अंतिम सीमा के आयरलैंड द्वीप के अंतिम सिरे तक जहाज़ के द्वारा पश्चिम की ओर दो दिन का सफ़र है...'किताबुल अजायब' (इससे पहले की एक पूर्वी पुस्तक) का लेखक कहता है कि वहां तीन नगर हैं और यह कि वे भी आबाद थे और यह कि जहाज़ कहां ठहरते हैं और वहां के लोगों से अंबर और रंगीन पत्थर आदि ख़रीदते हैं । फिर ऐसा हुआ कि इनमें से एक ने अपने आपको सम्राट बना लिया । उसने लोगों से लड़ाई की और लोगों ने उसका मुक़ाबला किया । फिर उनके बीच से एक शत्रु खड़ा हुआ । उन्होंने एक दूसरे को नेस्तनाबूद किया । और उनमें से कुछ लोग बड़े द्वीप की ओर चले गये । इस प्रकार उनके नगर विनष्ट हो गये और उनमें कोई भी बाक़ी नहीं बचा ।''

बरतानिया द्वीप समूह के बारे में इदरीसी की जानकारियां कम हैं । इसके मुक़ाबले में यूरोप महाद्वीप के बारे में वह बहुत अधिक जानता है, यहां तक कि उसके अत्यंत उत्तरी क्षेत्रों से भी वह भली-भांति परिचित है । बरतानिया द्वीप समूह के बारे में उसका बयान उसकी आकृति शुतुरमुर्ग़ के सिर की-सी है और वह चिड़िया की चोंच जैसा दिखायी देता है, साफ़ ज़ाहिर करता है उसने केवल नक़्शा देखा था । और शायद नक़्शे से ही उसने नगरों के नाम नक़्ल किये हैं ।

बाद में आने वाले अरब भूगोलशास्त्रियों ने इदरीसी का ही अनुसरण किया और उसी के द्वारा संग्रहीत सामग्री प्रयुक्त की । इस्लामी पश्चिम के एक लेखक इब्नुल मन्अम ने जिसका काल मालूम नहीं, एक भौगोलिक शब्दकोष संपादित किया था, जिसमें पश्चिमी यूरोप के कुछ क्षेत्र भी सम्मिलित थे । इब्न सईद (1214-1274) ने जो ग़रनाता के निकट अलका लालारैल नगर का रहने वाला था, भूगोल वेत्ता था, जिसका हवाला बाद में आने वाले पूरब और पश्चिम के मुसलमान लेखकों ने बहुत दिया है ।

पश्चिमी यूरोप के बारे में इब्न सईद की रचना में बहुत-सी दिलचस्प बातें हैं । इंग्लिस्तान का उल्लेख करते हुए वह लिखता है, ''सलाहुद्दीन का इतिहास और अक्का की लड़ाई में इस द्वीप के सम्राट का नाम 'अल-अन्क़तार' बयान किया गया है । सलाहुद्दीन के इतिहास में जिस शासक का उल्लेख आया है वह निश्चय ही रिचर्ड कोयर्वी लायन (रिचर्ड शेरूल) था । तीनों सलीबी लड़ाइयों से संबंधित मुसलमानों की रचनाओं में जो अन-क़तार लिखा गया है वह इंग्लिस्तान के विचित्र नाम लाअंजलेस्तर के कारण पड़ा है।

मुस्लिम वाक़ियानिगार (वृत्तांत लेखक) पूरब में होने वाली सलीबी लड़ाइयों के बारे में तो बहुत कुछ लिखते हैं, लेकिन आश्चर्यजनक रूप से सलीबी लड़ाइयों में शामिल देशों की आंतरिक दशाओं से किसी प्रकार की रुचि को प्रकट नहीं करते, बल्कि इन देशों की सैनिक टुकड़ियों में जो मतभेद थे, उनका उल्लेख भी बहुत कम करते हैं और यह बिल्कुल नहीं बताते कि इन टुकड़ियों के अपने देश में क्या परिस्थितियां थीं ।

अतएव शाम और फ़िलिस्तीन के इतिहास में कुछ लोगों से इन अविकसित द्वीपों के लोगों की समानता बयान करके इब्न सईद अजीब-सी बात करता है । अधिकतर मुस्लिम वाक़ियानिगारों की दृष्टि में सभी इन्कारी जो उत्तर के वहशी भू-भाग से आये थे फ़िरंगी थे और जितनी जल्दी वे वापस चले जाते उतना ही अच्छा था ।

मुस्लिम इतिहासकारों ने कभी यह कष्ट नहीं उठाया कि शाम में मौजूद फ़िरंगियों की इन जानकारियों से तुलना करते जिसको इतिहासकारों, भूगोलशास्त्रियों या पर्यटकों ने जुटायी थी । यह ख़याल किसी को भी नहीं आया कि फ़िरंगी धर्म, दर्शन, विज्ञान या साहित्य किसी में रुचि भी रखता होगा । व्यापारिक और राजनयिक संपर्कों के कई सदी बाद 14वीं सदी के अंत में कहीं जाकर एक ऐसा अरबी लेखक मिलता है जो यह संकेत करता है कि इस प्रकार की चीज़ें यूरोप में भी मौजूद हो सकती हैं । आशा के अनुरूप यह संकेत उस व्यक्ति की ओर से मिलता है जो उन महान और प्रतिभाशाली लोगों में से एक था, जो मुस्लिम संस्कृति ने पैदा किये । उसने भी जो लिखा है, उसमें उसके मन:सन्देह सम्मिलित हैं ।

अपने प्रसिद्ध प्राक्कथन के भूगोल वाले अध्याय में ट्यूनिस के इस इतिहासकार और समाजशास्त्री इब्न ख़लदून (1332-1406 ई॰) ने पश्चिमी यूरोप को भी सम्मिलित किया है, लेकिन वह भी ऐसी कोई बात नहीं लिखता जो इदरीसी या दूसरे मुस्लिम भूगोलशास्त्रियों ने पहले न लिखी हो, तथापि प्राक्कथन के अंतिम भाग में बौद्धिक ज्ञान के प्रारंभ और उन्नति पर बहस की गयी है जो निश्चय ही एक क्रांतिकारी क़दम है । यूनानियों, ईरानियों और अन्य प्राचीन लोगों में बौद्धिक ज्ञान के आविर्भाव का उल्लेख करते इब्न ख़लदून इस्लाम के अंतर्गत इन ज्ञानों की उन्नति और उत्तरी अफ़्रीक़ा के रास्ते स्पेन तक इसके फैलाव पर रोशनी डालता है और समापन इस बात पर करता है–

''हमने काफ़ी समय से सुन रखा है कि फ़िरंगियों के भू-भाग अर्थात रोम और उत्तरी समुद्र तटों पर उसको ख़िराज देने वाले राज्यों में दार्शनिक ज्ञान उन्नति कर रहा है । प्राचीन रचनाओं का पुनरोदय हो रहा है, उनकी शिक्षा बढ़ रही है, उनकी सभाओं में भीड़ है, उनके ज्ञानों के विशेषज्ञों की संख्या बहुत है और अगणित विद्यार्थी हैं, लेकिन ख़ुदा ही जानता है कि इन क्षेत्रों में और क्या हो रहा है । ख़ुदा जो चाहता है वही सृजन करता है ।''

इब्न ख़लदून विश्व इतिहास का भी लेखक है । उसका प्रसिद्ध प्राक्कथन उसकी पुस्तक की भूमिका है । इसमें आशानुरूप उत्तरी अफ़्रीक़ा का हाल बहुत अधिक है और ल्यूनिस के साथ उस सलीबी लड़ाई का उल्लेख है जिसका नेतृत्व फ्रांस के सम्राट लुई नवें ने किया था और जिसमें उसकी पराजय हुई थी । यह बयान कई कारणों से उल्लेखनीय है । इसमें इब्न ख़लदून फ्रांसीसी सम्राट का नाम 'सान्लोवस इब्न लोवस' बयान करता है और उसकी उपाधि 'रिदा फ्रांस' बताया है और कहता है कि, ''फ़िरंगी भाषा में इसका अर्थ है 'शाहे फ्रांस'।''

इसका अर्थ है कि वह जानता था कि सम्राट सेंट लुई के नाम से जाना जाता है (लेकिन यह मालूम नहीं कि इसका अर्थ क्या था)। और यह उसे जानकारी है कि सम्राट के पिता का नाम लुई था । अधिक अर्थपूर्ण बात यह है कि दूसरे मुस्लिम इतिहासकारों की भांति इब्न ख़लदून यहां 'सलीबी लड़ाई' का शब्द प्रयुक्त नहीं करता, बल्कि इस लड़ाई को ईसाइयों और मुसलमानों की ऐतिहासिक लड़ाई ठहरा देता है जो प्राचीन अरब से बाज़न्तीन की लड़ाइयों और फ़िलिस्तीनी एवं इस्पानियों की ताज़ा झड़पों तक फैली हुई है । इससे भी अधिक आश्चर्यजनक बात यह है कि वह अपना बयान आक्रमणकारी देश के उद्भव की संक्षिप्त चर्चा से प्रारंभ करता है । यह और बात है कि यह उल्लेख पहले से मौजूद भौगोलिक जानकारियों के सीमित कोष से आगे नहीं जाता ।

यूरोप के बारे में उसके पास कहने को बहुत कम है । पुस्तक की दूसरी जिल्द इस्लाम के पूर्व और ग़ैर-मुस्लिम लोगों से बहस करती है जिनमें प्राचीन अरब, बाबुल, मिस्र इसराईल, ईरान, यूनान, रोम और बाज़न्तीन सम्मिलित हैं । यूरोप में केवल वीसी गोथ का उल्लेख किया गया है । स्पेन पर मुसलमानों की विजय के उल्लेख के लिए उनकी संक्षिप्त-सी चर्चा आवश्यक भी थी और फिर वह अरब हस्पानवी इतिहास लेखन की परंपरा का भाग भी । इब्न ख़लदून का विश्व इतिहास स्पेन के उत्तर और ईरान के पूरब से आगे नहीं बढ़ता, मानो वह उसकी अपनी संस्कृति तक ही सीमित है । वह उन तथाकथित विश्व इतिहास लेखन का पथ-प्रदर्शक है जो कुछ समय पहले तक पश्चिमी दुनिया में लिखा जाता रहा था ।

लेकिन लगभग एक सदी पहले बहुत दूर ईरान में सही अर्थ में एक विश्व इतिहास लिखने का प्रयास किया गया था । ऐसा इतिहास जिसमें वह सारी आबाद दुनिया शामिल थी जो उस समय तक मालूम थी । यह ऐसा प्रयास था जिसकी मिसाल पहले नहीं मिलती और बाद में काफ़ी समय तक इसका विकल्प पैदा नहीं हो सका । यह अवसर

जुटाया था मंगोलों की विजयों ने, जिसने इतिहास में पहली बार पश्चिमी और पूर्वी एशिया को एक राज्य-व्यवस्था में एकजुट कर दिया था और चीन एवं ईरान के बीच प्राचीन संस्कृतियों में निकटतापूर्ण और फलदायी रिश्ता क़ायम कर दिया था ।

14वीं सदी के आरंभिक वर्षों में ईरान के मंगोल सम्राट ग़ज़न ख़ान ने अपने चिकित्सक और सलाहकार रशीदुद्दीन को, जो यहूदी से मुसलमान हुआ था, मानवजाति का इतिहास लिखने का निर्देश दिया । ऐसा इतिहास जिसमें सभी विदित साम्राज्य और इन्सान शामिल हों । रशीदुद्दीन ने जो इतिहास लिखा, उसने उसे इस्लामी जगत ही नहीं निस्संदेह सारी मानवजाति का पहला महान इतिहासकार बना दिया । उसने पूरी सच्चाई और सहानुभूति के साथ यह पुस्तक लिखी । चीन के बारे में लिखने के लिए उसने एक चीनी विद्वान से परामर्श किया, जिसे इस उद्देश्य से ईरान बुलाया गया । हिन्दुस्तान के लिए उसने कश्मीर से एक बौद्ध भिक्षु को बुलाया ।

इतने महान इतिहास-लेखन के काम में जिसका दायरा भी बहुत विस्तृत था अविकसित पश्चिमी यूरोप के दुश्मनों को भी संक्षिप्त रूप से सम्मिलित करना आवश्यक समझा गया । इसका कारण यह भी था कि इनमें से बहुत-से रशीदुद्दीन के 'आक़ा' के साथ राजनयिक बातचीत कर रहे थे । यूरोप के बारे में उसकी जानकारियों का स्रोत संभवत: एक इतालवी निवासी था जो शायद रोम कें पोप के उन प्रतिनिधियों में से एक था जो मंगोल दरबारों में आते रहते थे । उसके द्वारा रशीदुद्दीन ने एक पूरा रोज़नामचा प्राप्त किया, जो उस काल में खोजा गया था और उसे 13वीं सदी के मार्टिन ऑफ़ ट्रपाओ ने लिखा था । यद्यपि वह व्यक्ति येक था, लेकिन उसे मार्टिंस यूलोंस भी कहा जाता है ।

फ़्रैंक के बारे में रशीदुद्दीन की पुस्तक दो अध्यायों में विभक्त है । पहला अध्याय यूरोप के राज्यों का भौगोलिक और राजनैतिक विश्लेषण है । दूसरा अध्याय सम्राटों और पोप के बारे में है । रशीदुद्दीन ने यूरोप पर प्राचीन अरबी और फ़ारसी पुस्तकों से भी फ़ायदा उठाया है, लेकिन अधिकांश जानकारियां उसकी अपनी हैं और नयी हैं । सम्राट और पोप के रिश्ते के बारे में उसने विस्तारपूर्वक और स्पष्ट रूप से लिखा है । ये जानकारियां उसने पोप के प्रतिनिधि से प्राप्त की थीं । उसे शाही ताजपोशी के बारे में काफ़ी जानकारियां थीं । उसने इंग्लिस्तान के ऊनी और लाल कपड़े के बारे में भी सुन रखा था । पेरिस और बोलोन की यूनीवर्सिटियों, वीनस की नहरों, इटली गणराज्य और आयरलैंड में सांप न होने का ज्ञान भी उसे था । इससे ज़ाहिर होता है कि उसके ज्ञान में काफ़ी व्यापकता थी, यहां तक कि उसका यह विचित्र वक्तव्य कि दोनों दीपों (आयरलैंड और इंग्लिस्तान) का सम्राट स्काटलैंड कहलाता है और वे इंग्लिस्तान के सम्राट को ख़िराज देते हैं, अपने अन्दर कुछ न कुछ सच्चाई रखता है ।

सम्राट और पोप के बारे में उसका उल्लेख सम्राट एलबर्ट प्रथम और पोप बमनी डिकट या ज़दहम पर समाप्त होता है । इन दोनों के बारे में सही कहा गया है कि उस समय वे जीवित थे । इस चर्चा में मार्टिन के बयान से अधिक कुछ नहीं मिलता । यूरोप के बारे में उल्लेख सरसरी और व्यर्थ बातों से भरी हुई और कहीं-कहीं वास्तविकता के विरुद्ध भी है । इसके मुक़ाबले में भारत और चीन की संस्कृतियों के बारे में उसका उल्लेख अधिक विस्तारयुक्त और व्यापक है, लेकिन मसऊदी ने फ़्रैंक सम्राटों की जो सूची लिखी थी, उसके बाद मध्यकाल के किसी लेखक की ओर से ईसाई यूरोप के इतिहास की रूपरेखा तैयार करने का यह पहला प्रयास है । पूरे मध्यकाल में मुसलमान उन पिछड़े और इन्कारी लोगों से बिल्कुल निस्पृह रहे, जो रोम सागर के उत्तर में रहते थे । सबसे अधिक आश्चर्य तो इस बात पर होता है कि इब्न ख़लइन जैसी असाधारण प्रतिभा वाले चिंतक, जो त्यूनिस का रहने वाला था, ने भी पश्चिम के बारे में उपेक्षा की नीति, अपनायी, हालांकि त्यूनिस को पश्चिम का प्रत्यक्षत: अनुभव था ।

पश्चिम में सलीबी लड़ाइयों के बारे में ज़बरदस्त वाद-विवाद चले, जो पश्चिमी इतिहास में अत्यंत महत्वपूर्ण माने जाते हैं, लेकिन इस्लामी भू-भाग में वे ज़रा-सी भी दिलचस्पी पैदा नहीं कर सके । उन्होंने किसी प्रकार की वैचारिक हलचल पैदा नहीं की यहां तक कि सलीबी लड़ाइयों के समापन के बाद राजनयिक और व्यापारिक संबंधों की गतिविधियां तेज़ हुईं, तो उन्होंने भी दूसरे पक्ष के भेद मालूम करने का शौक़ और जज़्बा पैदा नहीं किया ।

यद्यपि स्पेन और पूरब में मुस्लिम हुकूमतें पतनशील थीं और विदेशी वर्चस्व के कारण बिखर रही थीं, लेकिन एक नयी और उमंगमय राज्य अनातोलिया उत्कर्ष प्राप्त कर रहा

था एवं जल्दी ही मुसलमानों का अंतिम और महान साम्राज्य का दर्जा प्राप्त करने वाला था । उस्मानी राज्य इस्लाम और ईसाइयत की सीमा पर पैदा हुआ । यद्यपि उस्मानी अपने पूर्व जनों से अधिक कट्टर मुसलमान थे, लेकिन प्रारंभ से ही उन्होंने ईसाई यूरोप के कम से कम एक भाग के साथ निकट संबंध स्थापित कर रखा था । प्रगतिशील उस्मानियों की दृष्टि में अब फ़िरंगी यूरोप ऐसी गिरा-पड़ी और आग्रहपूर्ण रेखा नहीं रही थी, जैसी वह मध्यकाल के अरबों और ईरानियों के लिए थी । वह उनका निकटवर्ती पड़ोसी और प्रतिद्वंद्वी था जिसने भूतपूर्व बाजन्तीनी राज्य का स्थान लिया था और वह भी उस काल में इस्लामी जगत का उतना ही बड़ा दुश्मन था ।

युद्ध कला एक ऐसी कला थी जिसके लिए तुर्क यूरोप की ओर आकर्षित हुए, बल्कि उसका मार्गदर्शन प्राप्त किया । समुद्री अड्डे बनाने के सिलसिले में विशेष रूप से तुर्कियों ने यूरोप का अनुसरण किया यहां तक कि अपनी ओर से उन्होंने इसमें किसी प्रकार का संशोधन या अभिवृद्धि नहीं की । समुद्री लड़ाई की तकनीक उन्होंने यूरोप से प्राप्त की तो उसके साथ यूरोप के बनाए हुए नक़्शों और समुद्री रास्तों का आवश्यक ज्ञान भी प्राप्त कर लिया और बहुत शीघ्र इसमें सक्षम हो गये कि यूरोप के समुद्री चार्ट की नक़ल कर ली या उनके अनुवाद कर लिये । फिर वे स्वयं ही समुद्र तटों के चार्ट तैयार करने लगे । पीरी रईस (मृत्यु 1550 ई॰) जो समुद्री रास्तों का पहला तुर्क नक़्शानवीस था, संभवत: कुछ पश्चिमी भाषाएं भी जानता था । उसने पश्चिमी हवालों से काम लिया । 1517 ई॰ में उसने सुल्तान सलीम प्रथम को दुनिया का नक़्शा (मान चित्र) पेश किया । उसमें अमेरिका के उस नक़्शे की नक़ल भी सम्मिलित थी जो कोलम्बस ने 1498 ई॰ में बनाया था ।

कोलम्बस का अस्ल नक़्शा तो खो गया था । यह नक़्शा संभवत: हस्पानियों के साथ अनेक लड़ाइयों के दौरान मुसलमानों के क़ब्ज़े में आ गया था । कोलम्बस के नक़्शे की यह एकमात्र नक़ल है जो अब तक सुरक्षित है और इस्तंबूल की लाइब्रेरी में मौजूद है । इसके बाद नयी दुनिया की खोजों के बारे में एक कृति लिखी गयी जो स्पष्ट है कि पश्चिमी साधनों की सहायता से उस्मानी भूगोल-शास्त्री मुहम्मद इब्न मसऊदी के द्वारा पूरी हो पायी और सुल्तान मुराद तृतीय को पेश की गयी ।

रोम सागर में जहाज़रानी के लिए एक तुर्की पुस्तक 1521 ई॰ में संपादित की गयी जिसका 1525 ई॰ में पुनरावलोकन किया गया । इस पुस्तक में जहाज़रानी के सिलसिले में निर्देश है और विस्तारपूर्वक रोम सागर के समुद्र तटों के बारे में बताया गया है । 1525 ई॰ की इस मुद्रित पुस्तक में एक भूमिका और एक परिशिष्ट भी शामिल है । ये दोनों पद्यात्मक हैं । एक से मालूम होता है कि उस ज़माने में तुर्कियों में किस प्रकार की भौगोलिक जानकारियां और कल्पनाएं मौजूद थीं । एक और पुस्तक त्यूनिस के किसी हाजी अहमद ने लिखी थी । हाजी अहमद ने मराकश के फ़ैज़ नामक स्थान

कभी-कभी मुस्लिम लेखक रोम की शब्दावलियां मध्य और पश्चिम के लिए प्रयुक्त करते हैं, जिसे ईसाई दुनिया कहते हैं । लेकिन सामान्य रूप से यूरोप के लिए विभिन्न शब्दावलियां प्रयुक्त की जाती हैं । इनमें सबसे सामान्य अफ़्रंज या फ़्रांज है जो फ़्रैंक का अरबी भाषा में प्रयुक्त हुआ है (उर्दू, फ़ारसी में यह फ़्रैंग या अफ़्रैंग है)। यह नाम मुसलमानों तक संभवत: बाज़न्तीन के द्वारा पहुंचा और वास्तव में यह शारलमीन के पश्चिमी राज्य के लोगों के लिए प्रयुक्त किया जाता था । बाद में यूरोप के सभी लोगों को यही कहा गया । मध्यकाल में यह नाम सामान्यत: हस्पानवी, स्लावी और स्केन्डेनिया के लोगों के लिए प्रयुक्त नहीं होता था, तथापि एक सामान्य अर्थ में इसे मध्य यूरोप और ब्रिटिश द्वीप के लिए प्रयुक्त किया जाता था । फ़्रैंक भू-भाग को अरबी में फ़रंजा और फ़ारसी एवं पूर्वी तुर्की में फ़िरंगिस्तान कहा जाता था ।

के मदरसे में शिक्षा प्राप्त की थी और वह किसी समय यूरोप के किसी नगर (संभवतः वीनस) में क़ैद रहा था । वहीं उसने पुस्तक लिखी जिसमें यूरोप, एशियाई अफ़्रीक़ा और अमेरिका के ज्ञात स्थान सम्मिलित हैं । उसने अपने बारे में भी कुछ विस्तार के साथ लिखा है जिससे प्रकट होता है कि उसने यह नक़्शा उस समय तैयार किया जब वह एक "नेक तबीयत और आलिम फ़ाज़िल व्यक्ति की क़ैद में था ।"

अपनी पुस्तक के बारे में वह लिखता है कि "मैंने मुस्लिम लिपि में फ़िरंगी भाषा और रचना का अनुवाद किया है ।" उन्होंने वादा किया था कि "वे मेरे श्रम और मशक़्क़त के बदले में मुझे रिहा करेंगे । यह श्रम ऐसा है जिसे शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता । मैंने उसे अपनी सामर्थ्य के अनुसार और अपने आक़ा के आदेश पर तुर्की भाषा में लिखा (संभवतः हमला कराया), क्योंकि यह भाषा दुनिया में बहुत बड़ा दर्जा रखता है ।"

विश्व भूगोल पर पहला बड़ा उस्मानी काम कातिब चलबी की पुस्तक 'जहांनुमा' है । उसने पुस्तक की भूमिका में लिखा है कि वह दुनिया की भौगोलिक स्थिति के बारे में अपनी पुस्तक पूरी करने से निराश ही हो चुका था कि उसे ख़याल आया कि वह बरतानिया द्वीप और आयरलैंड के बारे में उस समय तक नहीं लिख सकता, जब तक पूरी पुस्तक का अध्ययन न करे, क्योंकि अरबी, फ़ारसी और तुर्की की जो पुस्तकें उसे उपलब्ध हैं, वे अपूर्ण और ठीक नहीं हैं ।

उसने एक व्यक्ति की सहायता से ओरटीलैस के भूगोल और मर्केटर की एटलस (बड़ी और छोटी) का अध्ययन किया । ठीक उस समय जब वह आशा कर रहा था कि उसे ओरटीलैस की पुस्तक की जिल्द मिल जाएगी तो सौभाग्य से उसे एटलस माइनर मिल गयी, जो एटलस मीजर का सार-संक्षेप है । उन्हीं दिनों उसकी जान-पहचान शैख़ अहलसी से हो गयी जो फ़्रांसीसी राहिब (ईसाई संत) थे और इस्लाम क़बूल कर चुके थे । उनकी सहायता उसने एटलस माइनर का अनुवाद किया । उसने 1655 ई० में इसे पूर्ण किया ।

इस सदी के अंत में एक और लेखक अबू बक्र इब्न बहरामुद्दीन दिमश्क़ी (मृत्यु 1691 ई०) ने जो प्रधानमंत्री फ़ाज़िल अहमद पाशा के बहुत निकट था, कातिब चलबी की पुस्तक 'जहांनुमा' पर काम शुरू किया और उसमें कई अभिवृद्धियां कीं । उसका अस्ल काम जोन ब्लू की पुस्तक एटलस मीजर का अनुवाद है । मालूम होता है कि दिमश्क़ी को ब्लू के भूगोल से अधिक रुचि थी । उसकी ज्योमेट्री से रुचि कम थी । विशेष बात यह है कि उसने कोपरनिक्स के विचारों का सार प्रस्तुत किया और लिखा, "एक और दृष्टिकोण यह भी है जिसके अनुसार सूर्य ब्रह्माण्ड का केन्द्र है और धरती उसके गिर्द घूमती है ।

कातिब चलबी और दिमश्क़ी ने जो रुझान पैदा किया था, वह 18वीं सदी तक जारी रहा । कई और पुस्तकें भी भूगोल पर लिखी गयीं, लेकिन वे 'जहांनुमा' की व्याख्या थीं या उसमें थोड़ी-बहुत अभिवृद्धि थी । उनके किसी क़दर दिलचस्पी वाली पुस्तक आर्मेनिया के बैदरूस पैरूनीन की पुस्तक है । यह व्यक्ति हालैंड के दूतावास में तर्जुमान के पद पर काम कर रहा था और बाद में उसने सिसली के सरकार के लिए सेवाएं दीं । कहा जाता है कि उसने एक फ़्रांसीसी पुस्तक का तुर्की भाषा में किया था । शिराक रोब्स की इस पुस्तक नाम है La Methode Pour apprendre facilement la geographie ।

ये पुस्तकें यद्यपि किसी सीमा तक ध्यातव्य हैं, लेकिन ऐसा लगता है कि उनका प्रभाव बहुत सीमित था और यह भी संदिग्ध बात है कि तुर्क जहाज़रां या भूगोलशास्त्री रोम सागर से आगे की दुनिया के बारे में अधिक कुछ जानते थे । 1770 ई० में जब एक रूसी समुद्री बेड़ा पश्चिमी यूरोप का चक्कर लगाता हुआ ऐजीन सागर उस्मानियों के मुक़ाबले में जा पहुंचा तो उस्मानी सरकार ने वीनस के प्रतिनिधि से विधिवत विरोध किया कि उसकी सरकार ने रूसी समुद्री बेड़े कोम बाल्टिक से ऐड्रियाटिक समुद्र में जाने की अनुमति दी ।

इससे मालूम होता है कि तुर्कों को मध्यकाल के कुछ नक़्शों का ही ज्ञान था, जिनमें इन दोनों समुद्रों के बीच एक-दो बार उत्तरी भाग में वीनस दिखाया गया है । यद्यपि कातिब चलबी और उसके शिष्यों को इससे अधिक ज्ञान था और 'जहांनुमा' प्रकाशित हो चुका था, लेकिन उच्च दबार के शासक अभी तक मध्यकाल के नक़्शों से ही रहनुमाई हासिल कर रहे थे ।

18वीं सदी का वृत्तांत लेखक (वाक़ियानिगार) वासिफ़ लिखता है कि उस्मानी मंत्री यह कल्पना नहीं कर सकते थे कि रूसी समुद्री बेड़े के लिए सेंट पीटर्सबर्ग से रोम सागर

ज़ाने के लिए कोई और रास्ता भी है । आस्ट्रिया के प्रवक्ता (तर्जुमान) और इतिहासकार जोज़फ़ हैम्बर भी इसी प्रकार का एक अविश्वसनीय घटना बयान करता है, "मेरी आंखों के सामने" 1800 ई॰ में प्रधानमंत्री यूसुफ़ ज़िया ने यह विश्वास करने से इन्कार कर दिया कि बरतानिया अपनी सैनिक टुकड़ी लाल सागर के रास्ते हिन्दुस्तान से यहां ला सकता है ।

हैम्बर कहता है, "सिडनी स्मिथ को इस मुलाक़ात में जिनमें दुभाषित का काम कर रहा था, नक़्शों के द्वारा यह विश्वास दिलाने में काफ़ी कठिनाई हुई कि हिन्द महासागर और लाल सागर के बीच दोनों समुद्रों को मिलाने वाला एक स्थान है ।" यूरोप और उत्तरी अफ़्रीक़ा के आधुनिक इतिहास में ऐसी बहुत-सी मिसालें मौजूद हैं कि तुर्क राजनीतिज्ञ और प्रबंधकर्ता भूगोल से बिल्कुल अनभिज्ञ थे, लेकिन यह अनभिज्ञता जो कभी-कभी शासकों में पायी जाती थी, राजनीतिक कुलीनता का स्वभाव नहीं था और प्रशिक्षण प्राप्त एवं बाख़बर प्रशासन इसका सुधार करता रहता था ।

यूरोप के मानवीय भूगोल से संबंधित अर्थात उन देशों में रहने वाले लोगों के बारे में, जो उस्मानी क्षितिज पर उभरते दिखायी पड़ते थे, उस्मानी पुस्तकों में बहुत कम जानकारियां मिलती हैं । केवल एक अपवाद है और वह है मुस्तफ़ा अली गालपोली (1541-1600 ई॰)। वह प्रसिद्ध इतिहासकार, कवि और अपने काल का बहुमुखी प्रतिभा वाला व्यक्ति था । कम से कम दो स्थानों पर मुस्तफ़ा अली ने यूरोप की नस्लों के बारे में किसी हद तक समझने की कोशिश की है ।

विश्व इतिहास पर अपनी विशद पुस्तक की पांचवीं जिल्द में, जिसमें यूरोप का उल्लेख नहीं है, वह उपांगिक रूप में यूरोप की उन विभिन्न नस्लों का उल्लेख करता है जिससे उस्मानियों का अपनी सीमाओं के भीतर और सीमाओं के बाहर संपर्क हुआ । और यह बयान काफ़ी लंबा है । उसकी एक और पुस्तक में भी इसी प्रकार का एक भाग मिलता है जिसमें उसने विभिन्न प्रकार के गुलामों और कर्मचारियों का उल्लेख किया है और उन देशों की नस्लों की विशेषताओं और रुझानों से बहस की है जहां से ये लोग आते हैं । वह स्वाभाविक रूप से उस्मानी साम्राज्य के भीतर बसने वाली नस्लों से भली-भांति परिचित है और स्पष्ट रूप से गुलामों के साथ आक़ाओं के पक्षपातों को प्रस्तुत करता है । "अल्बानिया के गुलामों से आत्म सम्मान और मूल्यों से निष्ठा की आशा करना ऐसा ही है जैसे मुर्ग़ी से यह आशा करना कि वह कुड़कुड़ करना बन्द कर दे ।

इसी प्रकार रूसी दासी से आशा नहीं की जा सकती कि वह दुष्चरित्र न हो और शराब निचोड़ने वाले से यह आशा कि वह शराबी न हो ।" मुस्तफ़ा अली, बलक़ान के गुलामों का अपमान करता है । कहता है कि बोस्निया और क्रोशिया के लोग सज्जन हैं । यूरोप के दूसरे लोगों में वह हंगरी वालों, फ़्रैंक और जर्मन (अल-मानवी) का उल्लेख करता है । लिखता है, "फ़्रैंक और हंगरी के लोग एक-दूसरे के सदृश हैं । ये लोग खाने-पीने, वस्त्र पहनने और घरों की सफ़ाई आदि में साफ़-सुथरे हैं । ये लोग समझ और विवेक में तेज़ हैं, इनमें हास-परिहासी बहुत हैं और ये फुर्तीले हैं ।

अलबत्ता इनके भीतर चालबाज़ी और चालाकी का रुझान भी है और धन कमाने के लिए ये बहुत छल-कपट का सहारा लेते हैं । जहां तक अच्छा पालन-पोषण और प्रतिष्ठा का सम्मान का सहारा लेते हैं । जहां तक अच्छा पालन-पोषण और प्रतिष्ठा व सम्मान का संबंध है, उसे मुस्तफ़ा अली बहुत महत्व देता है । लिखता है, "उनमें ये चीज़ें मध्यकाल की भी हैं, तथापि हम वे सारगर्भित और अर्थपूर्ण बातचीत कर सकते हैं ।" रंग-रूप में तो वे अच्छे होते हैं, लेकिन उनमें से कम ही स्वस्थ हैं । कुछ तो विभिन्न रोगों के शिकार हैं । उनके स्वास्थ्य के बारे में विश्वास के साथ कुछ नहीं कहा जा सकता । व्यापार और कारोबार में वे बहुत तेज़ हैं, इकट्ठे होते हैं तो ख़ूब शराब पीते हैं । गुल-ग़पाड़े करते हैं । वे वाद-विवाद करना जानते हैं । समग्र रूप से वे चुस्त-चालाक लोग हैं । उनके विपरीत जर्मन ज़िद्दी और चिड़चिड़े स्वभाव के लोग हैं । दस्तकारियों आदि में बढ़े हुए हैं, लेकिन वैसे निकम्मे हैं । उनकी ज़ुबान भारी है और चाल सुस्त है । उनमें से बहुत कम इस्लाम की ओर खिंचते हैं । अपनी गुमराहियों और इन्कार पर अड़े रहते हैं, तथापि वे बहुत अच्छे जंगबाज़ हैं, घुड़सवारी में भी और पैदल भी ।

स्पष्ट है, अली सुनी-सुनायी बातें लिख रहा है । आधी सदी बाद औलिया चलबी अपने व्यक्तिगत अनुभव से हंगरी और आस्ट्रिया के निवासियों की तुलना करता है । औलिया लिखता है कि हंगरी के निवासी तुर्क विजयों के बाद

कमज़ोर हो गये हैं और जिन्हें तुर्की ने विजित नहीं किया, वे आस्ट्रिया के आधिपत्य में चले गये हैं । इनके बावजूद वह उन्हें आस्ट्रिया वालों से बहुत अच्छा समझता है, जिनके बारे में उसका ख़याल है कि वे बिल्कुल लड़ाकू नहीं हैं । ''वे बिल्कुल यहूदियों की तरह हैं । उनका स्वभाव युद्ध वाला है ही नहीं, हंगरी के लोग अच्छे लोग हैं ।''

''यद्यपि वे अपनी शक्ति खो चुके हैं, लेकिन अब भी उनके दस्तरख़्वान अच्छे हैं । वे अतिथि-सत्कारी हैं और तातारियों की भांति उर्वर भूमि में खेती करते हैं । वे जहां भी जाते हैं घोड़ों की जोड़ी के साथ जाते हैं । (उनके पास) चार-पांच पिस्तौल होते हैं और कमर में तलवार बंधी होती है । वे हारे सीमांत सुरक्षा-प्रहरियों की भांति नज़र आते हैं, वैसा ही वस्त्र पहने और वैसे ही बढ़िया नस्ल के घोड़ों पर सवार । वे खाते-पीते और उठने-बैठने में सफ़ाई पसन्द करते हैं और अपने अतिथियों का सम्मान करते हैं । वे अपने क़ैदियों पर हिंसा नहीं करते, जैसे आस्ट्रिया वाले करते हैं । वे उस्मानियों की भांति तलवारबाज़ी के खेल के शौक़ीन हैं । सारांश यह कि यद्यपि दोनों ही इन्कारी हैं और ईमान से वंचित हैं, लेकिन हंगरी वाले अधिक सम्माननीय और पवित्राचारी हैं । वे आस्ट्रिया वालों की भांति हर सुबह अपने चेहरे पेशाब से नहीं धोते, बल्कि अपने चेहरे उस्मानियों की भांति पानी से धोते हैं ।''

यदि इन्कारियों का वर्तमानकाल कोई महत्व नहीं रखता था, तो उनका अतीत इससे भी कम महत्व रखता था और उस्मानी इतिहासकार सामान्यत: यूरोप के इतिहास से सरोकार नहीं रखते थे । फिर भी कहीं-कहीं रोशनी की किरण भी दिखायी देती है । यदि हम उस्मानी रोज़नामचों पर विश्वास कर लें तो 1453 ई॰ में कोंस्टंटी नोपल (क़ुस्तुन्तुनिया) जैसे महान और ऐतिहासिक नगर पर तुर्कों की जीत ने इस नगर के अतीत के बारे में जानने का शौक़ पैदा किया था, लेकिन वह शीघ्र ही समाप्त हो गया ।

''सुल्तान मुहम्मद ने क़ुस्तुन्तुनिया पर विजय प्राप्त कर ली तो उसने आयासूफ़िया देखा और दंग रह गया । उसने रोम के निवासियों से और फ़िरंगिस्तान के निवासियों से एवं राहिबों (ईसाई संतों) से तथा पादरियों से व रोमा के उन लोगों से जो इतिहास जानते थे पूछा । वे जानना चाहते थे कि क़ुस्तुन्तुनिया नगर को किसने निर्मित किया और किसने वहां शासन किया एवं कौन-कौन उसके निवासी रहे हैं । उसने राहिबों और रोम के दूसरे लोगों एवं उन फ़िरंगियों को इकट्ठा किया, जो इतिहास जानते थे और प्रश्न किया, ''क़ुस्तुन्तुनिया नगर किसने निर्मित किया और किसने इस पर शासन किया ? उन्होंने सुल्तान मुहम्मद को अपने ज्ञान, अपनी पुस्तकों, अपने रोज़नामचों और उस ज्ञान के अनुसार बताया जो एक से दूसरे तक पहुंचा था ।''

यह मालूम नहीं हो सका कि सुल्तान ने जिन राहिबों, फ़िरंगियों और यूनानियों से जानकारियां प्राप्त कीं, वे कौन थे । उस्मानियों से पहले इस नगर के इतिहास से उस्मानी वृत्तांत लेखक (वाक़ियानिगार) ने जो भाग नक़ल किया है, वह विचित्र चीज़ है । इस नगर के यूनानी, रोमन या बाज़न्तीनी इतिहास से इसका कोई संबंध नहीं है । इस नगर से सुल्तान मुहम्मद की दिलचस्पी की पुष्टि यूनानी और इतालवी लेखक दोनों करते हैं । इनमें से कुछ कभी न कभी सुल्तान के दरबार में रह चुके हैं । फिर भी सुल्तान की दिलचस्पी अपवादों ही में से है क्योंकि उसके बाद उस्मानी इतिहास में उसकी और कोई मिसाल नहीं मिलती ।

पश्चिमी यूरोप पर पहली उस्मानी ऐतिहासिक पुस्तक 16वीं सदी के अंत में लिखी गयी । इसमें फ़्रांस की नींव रखने वाले असातेरी सम्राट फ़ेरामंद से 1560 ई॰ तक का इतिहास सम्मिलित है । पुस्तक फ़ेरामंद द्वितीय के आदेश पर तुर्की में अनूदित की गयी । फ़ेरामंद द्वितीय 1570 ई॰ से 1573 ई॰ तक प्रधानमंत्री का चीफ़ सेक्रेट्री या रईसुलकुतुब था और अनुवाद हसन इब्न हमज़ा और कातिब अली इब्न सनान ने पूरा किया । अनुवाद 1572 ई॰ में पूर्ण हुआ । इस पुस्तक का केवल एक ही नुस्ख़ा मिला है और वह भी जर्मन भाषा में । इससे प्रकट होता है कि तुर्की के पाठकों में वह अधिक प्रसिद्ध नहीं थी ।

17वीं सदी के दौरान परिवर्तन के चिह्न नज़र आते हैं और कुछ इतिहासकार और अन्य आलिम यूरोप से रुचि को प्रकट करते हैं यहां तक कि कुछ लेखकों की पूरे यूरोपीय स्रोतों से जानकारी भी प्रकट होती है । कहा जाता है कि एक व्यक्ति इबराहीम मलही (मृत्यु 1650 ई॰) ने रोमन और फ़्रैंक सम्राटों का इतिहास लिखा था, लेकिन उसकी एक भी प्रति सुरक्षित नहीं है । उसके समकालीन कातिब चलबी ने, जिसने अपनी भूगोल की पुस्तकों में यूरोप पर ध्यान दिया है, इतिहास भी लिखा है और अपनी एक पुस्तक में ''काफ़िर सम्राटों का फ़िरंगी इतिहास'' के एक अनुवाद का हवाला

भी दिया है । इस अनुवाद की एक प्रति तुर्की में एक व्यक्ति के पास सुरक्षित है और इसका एक भाग (1862-1863 ई॰) में तुर्की के एक समाचार-पत्र में क़िस्तवार छपता रहा है ।

इसका परिचय कराते हुए कातिब चलबी अपने स्रोत का भी हवाला देता है । यह स्रोत है जोथान केरून (1499-1537 ई॰) का लातीनी रोज़नामा । कातिब चलबी ने उसके 1548 ई॰ के पेरिस एडीशन से फ़ायदा उठाया । रोज़नामचे का लेखक लूथर का अनुयायी था और यह पुस्तक प्रोटेस्टेंट दुष्प्रचार के लिए बहुत प्रयुक्त होती थी । इस पुस्तक के चयन से स्पष्ट होता है कि कातिब चलबी का फ़्रांसीसी सहयोगी भी, जिसे वह भूतपूर्व राहिब (ईसाई संत) कहता है, प्रोटेस्टेंट था, कैथोलिक नहीं था ।

इसके अनुवाद के अतिरिक्त कातिब चलबी ने यूरोप पर छपी हुई पुस्तक भी लिखी है, जिसकी केवल एक ही प्रति सुरक्षित रह गयी है । इसका उल्लेख इस अध्याय के प्रारंभ में आ चुका है । उसने इसका उद्देश्य यह बयान किया है कि इससे मुसलमानों को यूरोप के लोगों के बारे में वे बातें पहुंचाना अभिप्रेत है, जिसकी बहुत आवश्यकता है । उसके इस दावे के बावजूद प्रोफ़ेसर विक्टर मीनास उसके बारे में लिखते हैं कि, "अपने मामूलीपन की वजह से वह पुस्तक यूरोप के बारे में अनभिज्ञता का हवाला बन गयी है, वह अनभिज्ञता जो उस्मानी साम्राज्य के पढ़े-लिखे लोगों में आम थी ।

बहरहाल पश्चिमी इतिहास से कुछ न कुछ दिलचस्पी ज़रूर मौजूद थी, यद्यपि बहुत ही मामूली-सी । इस दिलचस्पी में वृद्धि 17वीं सदी के अंतिम मध्य में उस समय हुई, जब इस्तंबूल के चतुर्दिक स्थित महलों में एक नये प्रकार का समाज विकसित हुआ । तुर्क आलिम अब पश्चिम से प्रभावित तुर्की बोलने वाले उस्मानी ईसाइयों और कभी-कभी यूरोप के लोगों से भी मिले थे और इस प्रकार उन्हें पश्चिमी विद्याओं और विज्ञान के बारे में जानने का अवसर मिल रहा था ।

उस समय एक महत्वपूर्ण और प्रसिद्ध व्यक्ति रोमानिया का राजकुमार दीमत्रिस कंस्टबर था, जो उस्मानी एवं यूरोपीय समाज दोनों से भली-भांति अवगत था । उसने उस्मानी साम्राज्य का इतिहास लिखा था, लेकिन मालूम होता है कि ये मुलाक़ातें एक सीमित प्रभाव वाली थीं । इनका प्रभाव बाहरी दुनिया के बारे में आम उस्मानी सोच पर बहुत कम पड़ रहा था । अलबत्ता 17वीं सदी का एक कम प्रसिद्ध इतिहासकार हुसैन हज़ारफ़न (मृत्यु 1691 ई॰) अपवाद वाली हैसियत रखता है । उसकी अधिकांश रचनाएं कातिब चलबी की तरह अभी तक प्रकाशित नहीं हुई हैं । वह कातिब चलबी की प्रशंसा करता है । वह दूर-दराज़ स्थानों की भौगोलिक स्थिति और इतिहास के बारे में जानकारियां इकट्ठा करने के प्रयास में लगा रहता था ।

प्रसिद्ध है कि काउंट फ़्रेडेन्ड मार सिसली और अंतोनियो गैलन्ड जैसे लोगों से उसकी जान-पहचान थी और संभवत: वह केंटमीर और महान फ़्रांसीसी प्राच्यविद् पतीज़वी लाकरदिये को भी जानता था । संभवत: इन यूरोपीय व्यक्तियों के माध्यम से हुसैन हज़ारफ़न की पूरी पुस्तकों के विषयों तक पहुंच हुई थी और उसने अपनी रचनाओं में यह सामग्री सम्मिलित की ।

उसकी एक पुस्तक "तन्क़िया अल-तवारीख़" है जो 1673 में पूरी हुई । इतिहास की इस पुस्तक के नौ भाग हैं । इसका छठा, सातवां, आठवां और नवां भाग इस्लामी सीमाओं से बाहर के बारे में है । इस्लामी सीमाओं से बाहर की दुनिया के बारे में इतनी अधिक संख्या में पृष्ठ वास्तव में आश्चर्यजनक है । छठा भाग यूनानी और रोमन इतिहास से बहस करता है, सातवां भाग कुस्तुन्तुनिया के बारे में, उसके आबाद होने के समय से इस काल तक है । आठवां भाग एशिया, चीन, फ़िलीप्पाइन, ईस्ट इंडीज़, हिन्दुस्तान और लंका के बारे में है । नवां भाग अमेरिका की खोज से संबंधित है ।

आश्चर्य है कि हुसैन हज़ारफ़न ने अपने विश्लेषण में यूरोप को सम्मिलित नहीं किया, लेकिन एशिया और अमेरिका के बारे में उसकी जानकारियां सारी की सारी यूरोपीय स्रोतों पर आधारित हैं । इस पुस्तक में अधिकांश कातिब चलबी की पुस्तक 'जहांनुमा' के हवाले हैं । यूनानी और रोमन एवं बाज़न्तीनी इतिहास के बारे में उसका बयान भी यूरोपीय स्रोतों से ही लिया गया है, जो प्राचीन यूरोप के बारे में मुसलमानों की कमज़ोर जानकारी में वृद्धि का कारण बनता है ।

अहमद इब्न लुत्फ़ुल्लाह अल-मअरूफ़ मॅजिम बाशी अर्थात मॅजिम आला (मृत्यु 1702 ई॰) की पुस्तकों के साथ हम बड़े पैमाने पर विश्व इतिहास लिखने के दौर में प्रवेश

करते हैं । उसका सबसे बड़ा कारनामा ''तारीख़े बनी आदम'' है । यह इतिहास हज़रत आदम (अलैहि॰) से प्रारंभ होकर 1672 ई॰ तक आता है । उसका दावा है कि उसने 70 स्रोतों से फ़ायदा उठाया है । मंजिम बाशी ने यह पुस्तक अरबी में लिखना पसन्द किया और एकाध उद्धरण को छोड़कर पूरी पुस्तक अभी तक अमुद्रित है ।

अलबत्ता 18वीं सदी के महान तुर्क कवि नदीम के निर्देश पर इसका तुर्की भाषा में अनुवाद तीन जिल्दों में 1868 ई॰ में छपा । पुस्तक का अधिकांश भाग इस्लामी इतिहास पर है, तथापि पहली जिल्द का एक बड़ा भाग इस्लाम पूर्व और ग़ैर-मुस्लिम देशों के इतिहास पर है । ग़ैर-इस्लामी इतिहास के भाग में सामान्यत: एक ओर ईरानी और प्राचीन अरब है और दूसरी ओर इसराईली और प्राचीन मिस्री संस्कृति । यह सारा बयान पारंपरिक बयान में ही है ।

मंजिम बाशी का प्राचीन इतिहास सामान्य इस्लामी इतिहासों से आगे तक जाता है । रोमन और यहूदियों के बारे में उसका बयान स्पष्ट रूप से रोमन और यहूदी स्रोतों से सीधे लिया गया है । ये जानकारियां किसी हद तक इब्न ख़लदून की अरबी टिप्पणियों और उनके सार-संक्षेप में मौजूद हैं, लेकिन उसकी जानकारियां उत्तरी अफ़्रीक़ा के इस महान इतिहासकार से अधिक हैं और पूर्ण हैं । इसमें असीरिया, बाबुल, सल्जूक़ी और पटोलमी राज्यों के बारे में जानकारियां भी सम्मिलित हैं जो इससे पहले के इस्लामी इतिहासों में संयोग से ही मिलती थीं ।

स्पष्ट है, उसने इसके लिए यूरोपीय स्रोतों से काम लिया होगा । यूरोप पर मंजिम बाशी के अध्याय से यह बात विश्वसनीय हो जाती है । इसमें एक भाग फ़िरंगी निवासियों और फ्रांस, जर्मनी, स्पेन एवं इंग्लैंड के सम्राटों के विभाजन से संबंधित है । इसका स्रोत जो हान केयर यूवान के विश्व-वृत्तांत का तुर्की अनुवाद मालूम होता है, लेकिन चूंकि मंजिम बाशी अपना बयान फ्रांस के सम्राट लुई सीज़र दसवें, जर्मनी के सम्राट लियोपोल्ड और इंग्लैंड के चार्ल्स प्रथम तक ले जाता है, इसलिए विश्वास है कि उसके पास बाद की जानकारियां भी होंगी । वह इंग्लैंड की वेश्या अल-मलू और सम्राट चार्ल्स के सर क़लम करने के बारे में लिखते हुए कहता है–

''इसके बाद इंग्लैंड के लोगों ने अपनी नीति के अनुसार दूसरा सम्राट नियुक्त नहीं किया । उनके मामलों के बारे में हमारे पास और अधिक जानकारियां नहीं हैं ।''

कातिब चलबी, हुसैन हज़ारफ़न और मंजिम बाशी पश्चिमी यूरोप के बारे में सारे उस्मानी इतिहास को सोलहवीं और सत्तरहवीं सदी पर ही केन्द्रित कर देते हैं । उनकी जानकारियां सरसरी हैं और वे एक ही प्रकार के स्रोतों पर निर्भर करते हैं । लेकिन यह थोड़ी-बहुत दिलचस्पी भी दूसरे तुर्क लेखकों में नहीं है ।

अधिकतर उस्मानी मुसलमानों की दृष्टि में यूरोप का जो कारनामा ध्यातव्य था वह केवल उनकी युद्ध कला थी और इसका ज्ञान युद्धों में पकड़ी जाने वाली तोपों और समुद्री जहाज़ों के गहन अवलोकन और निरीक्षण से प्राप्त किया जा सकता था । यह अध्ययन भी युद्धक क़ैदियों और उनके पलायित ग़द्दारों की सहायता से ही संभव था । उनके मस्तिष्क में यह बात आयी ही नहीं कि यूरोप की भाषाओं, साहित्य कलाओं और दर्शन का अध्ययन भी किसी दिलचस्पी के लायक़ हो सकता है और ज़माने के अनुसार इन कलाओं का ज्ञान भी प्राप्त करना आवश्यक है ।

यूरोप में चलने वाले ज्ञान-विज्ञान के पुनरोदय अभियानों और धार्मिक सुधार वाले आन्दोलनों की वापसी मुसलमानों में बिल्कुल सुनायी नहीं देती और न इन पर किसी प्रकार की प्रतिक्रिया ही प्रकट होती है । इसके विपरीत यूरोप में उस काल में मुसलमानों के वैचारिक आन्दोलनों का अध्ययन किया जा रहा था ।

मुसलमानों की पुस्तकें, जो विशेष रूप से यूरोप और उसके लोगों से संबंधित थीं, बहुत कम महत्व रखती थीं । उनके कुछ नुस्ख़े ही सुरक्षित रह गये हैं, कहीं-कहीं तो एक ही नुस्ख़ा मौजूद है और अधिकतर तो छपे नहीं, इसलिए उस्मानी जनमत पर उनके प्रभाव बहुत ही कम होंगे । यूरोप के बारे में जो उस्मानी सोच थी उसका अंदाज़ा उस्मानी साम्राज्य के बड़े और महत्वपूर्ण इतिहासकारों के सिलसिले में लगाया जा सकता है । इनमें से कुछ के पास तो शासकीय इतिहासकार या 'वाक़ियानवीस' का पद था, दूसरे बिना पद के थे । इन सबने इतिहास की अनेक पुस्तकें लिखीं, जो प्रारंभ से अंत तक साम्राज्य के इतिहास को समाविष्ट करती हैं । इनमें से अधिकतर पुस्तकें प्रारंभिक काल में ही छपीं । ये पुस्तकें उस्मानियों के अपने बारे में, दुनिया में अपने स्थान के बारे में और दूसरों के साथ अपने संबंधों के बारे में विशेष प्रकार की सोच स्थापित करने में सहायक

सिद्ध हुईं ।

उस्मानी वृत्तांत लेखक विशेष रूप से अपने ही मामलों और संसाधनों में मग्न रहते थे, यहां तक कि वे लोग भी जिनका संपर्क लड़ाई, व्यापार, राजनय या किसी और कारण से यूरोपीय लोगों के साथ था, वे भी अपने ख़ोल से बाहर नहीं निकलते थे । इन संपर्क की झलकियां उस्मानी इतिहास लेखन में कहीं-कहीं नज़र आ जाती हैं और यह प्रभाव है आने वाली सदियों में परिवर्तित होती परिस्थितियों का ।

15वीं सदी में उस्मानियों की यूरोप में आगे बढ़ने के काल में भी उस्मानी इतिहास लेखन किसी हद तक न्यून ही थी । इसका अधिकांश भाग साधारण तुर्की भाषा में सीधे-साधे बयान पर ही आधारित है और वह सीमांत सिपाहियों अर्थात ग़ाज़ियों के मनोभावों की तर्जुमानी ही करता है । उस्मानियों ने यूरोपीय लोगों को पहले शत्रु और फिर जज़्बा देने वाली प्रजा के रूप में देखा और यह देखने का कष्ट नहीं उठाया कि युद्ध के मैदान की दूसरी ओर क्या पेश आ रहा है ।

अलबत्ता 18वीं सदी के महान तुर्क कवि नदीम के निर्देश पर इसका तुर्की भाषा में अनुवाद तीन जिल्दों में 1868 ई॰ में छपा । पुस्तक का अधिकांश भाग इस्लामी इतिहास पर है, तथापि पहली जिल्द का एक बड़ा भाग इस्लाम पूर्व और ग़ैर-मुस्लिम देशों के इतिहास पर है । ग़ैर-इस्लामी इतिहास के भाग में सामान्यतः एक ओर ईरानी और प्राचीन अरब है और दूसरी ओर इसराईली और प्राचीन मिस्री संस्कृति ।

हां, वे इस वास्तविकता से परिचित थे कि वे अपने स्थानीय ईसाई विरोधियों के अतिरिक्त दूसरे लोगों से भी युद्धरत हैं । फ़िरंगी की उपाधि इन शत्रुओं की सूची में बार-बार प्रयुक्त हुई जिनसे उनका मुक़ाबला हुआ और उन्हें पराजित किया गया । आरंभिक उस्मानी रचनाओं में फ़िरंगी (फ्रैंक) से सामान्यतः इतालवी और विशेषकर वीनस के लोग अभिप्रेत हैं जिनसे यूनान और रोम सागर की ओर आगे बढ़ने के दौरान तुर्कों का सामना हुआ । फ़िरंगियों की सदैव हार हुई और युद्ध क्षेत्र से उनसे काफ़ी धन-संपत्ति प्राप्त हुई ।

903 हिजरी (1497 ईसवी) में तुर्कों की जीत का उल्लेख करते हुए उस्मानी इतिहासकार उरूज़ उन चीज़ों की विस्तृत सूची प्रस्तुत करता है जो पराजित फ़िरंगियों से सोने और चांदी के सिक्कों, पशमीने और चमड़े के परिधान, रेशम व कमख़्वाब और अतलस के कपड़ों के रूप में प्राप्त हुई । ये (चीज़ें) उन्हें मिलीं और उन्होंने इस प्रकार लूट-मार की कि किसी को गाड़ियों, घोड़ों, ख़च्चरों, ऊंटों या क़ैदियों का ख़याल ही नहीं रहा । क़ैदी भी इतने पकड़े गये कि कोई उनकी गणना नहीं कर सकता । जिन कालों में युद्ध क्षेत्र से इतना ज़बरदस्त धन प्राप्त किया, वह वियना (1444), कोसोवा (1389) और कुस्तुन्तुनिया (1453) के जिहाद थे ।

वह यह भी लिखता है कि दुनिया में सबसे अधिक धनवान दो क़ौमें हैं—एक पोलैंड के लोग और दूसरे फ़िरंगी । वे सांसारिक धन और संसाधनों में दूसरों से अधिक धनी हैं, इसलिए उनके क़ब्ज़े से इस्लामी मुजाहिदों को असाधारण धन प्राप्त हुआ ।

आश्चर्यजनक रूप से यूरोप की अधिक सभ्य सोच जो नज़र आती है वह किसी जागतिक वृत्तांत या दस्तावेज़ में नहीं है, बल्कि एक युद्ध-गीत में है जो 16वीं सदी के प्रारंभ में लिखी गयी और जिसमें तुर्की के विरुद्ध यूरोप के समुद्री अभियान की पराजय पर हर्ष प्रकट किया गया है । यह घटना अपने आपमें बड़ी नहीं था । तुर्क सेना ने यूनानी समुद्र तट पर मौन्डों और वीनस के दूसरे मोर्चों पर क़ब्ज़ा कर लिया था । वीनस ने यूरोप के बहुत-से देशों से सहायता प्राप्त की और फ़्रांसीसियों और दूसरे सहयोगियों के साथ तुर्की के क़ब्ज़े वाले द्वीप लैसबोस पर अक्तूबर 1501 ई॰ के अंत में चढ़ाई कर दी । यह हमला नाकाम कर दिया गया । इस विजय की याद में यह लंबा युद्ध-गीत लिखा गया । कवि जो अपने आपको भाग्यशाली तुर्की कहता है, अपार हर्ष प्रकट करते हुए कहता है कि "इस पराजय ने फ़िरंगियों विशेषकर उनके रहनुमा पॉप (रोम के पोप) को बहुत ही शोकाकुल कर दिया है ।"

कवि कहता है कि जब सुल्तान बायज़ीद ने मौन्डों पर क़ब्ज़ा किया तो फ़िरंगी सुल्तान की तलवार से इतने भयभीत हुए कि 'नीने' (आयोनिया के द्वीप) के मगरमच्छ की भांति समुद्र में डूब गये । जब इन्कारियों के सरदार 'पॉप' ने यह

सुना तो उसने दूसरे देशों के साथ मौन्डों को दुबारा प्राप्त करने के लिए एका करने की कोशिशें शुरू कर दीं और फ़िरंगी इन्कारियों के सभी सम्राटों को संदेश भेजे । इसके बाद कवि अपनी कविता में बहुत-से फ़िरंगी नाम सम्मिलित करता है जो बार-बार सामने आते रहते हैं । उनमें फ्रांस, हंगरी, बोहीमिया और पोलैंड के सम्राट सम्मिलित हैं ।

अंत में उल्लिखित दोनों नाम स्लाफ़ असातीरी की पुनरावृत्ति हैं, जैसे चेक और लेक, दूसरे यूरोपीय जो इसमें सम्मिलित हैं वे हैं कज़ख़ान, गरलख़ान अर्थात कास्तील की इज़ाबेला जो स्पेन का सेनापति वहां भेजती है । 'दोज़' अर्थात वीनस का शीर्षस्थ अधिकारी, उन्दुलुस और केतलूनिया के हाकिम, रोड्ज़ के धर्म-योद्धा यहां तक कि मास्को का राजकुमार यूवान तृतीय भी । विशुद्ध युद्धात्मक शैली में शत्रु के सरदारों को भी कविता में भाषण करने और पत्र लिखने का अवसर जुटाया गया है और वे इस प्रकार प्रस्तुत किये गये हैं जैसे वे फ़िरंगियों की आस्थाओं और उनके विचारों का हिस्सा हैं, अर्थात वे स्वयं ही अपने आपको काफ़िर कहते और इसकी घोषणा भी करते हैं । एक स्लाफ़ राजकुमार से यह बात जोड़ी गयी है–

''मैं येसू मसीह का सेवक हूं, मार्क (वीनस के सेंट मार्क) की प्रतिमा का दास हूं, मैं हंगरी के सम्राट से भी बड़ा मूर्तिपूजक और काफ़िर हूं ।''

16वीं सदी में उस्मानी साम्राज्य (सल्तनत) अपनी शक्ति के उत्कर्ष पर था और उसके इतिहासकार मुसलमानों के इस आत्मविश्वास का चित्रण कर रहे थे कि उनकी श्रेष्ठता और लगातार विजयों में उनका कोई सानी नहीं है । केवल पदच्युत प्रधानमंत्री लुत्फ़ी पाशा ही एक ऐसा व्यक्ति था जिसने अपनी पदच्युति के बाद साम्राज्य की मुसीबतों पर मातम करते हुए कृतघ्न सुल्तान को आंतरिक भ्रष्टाचार, अनियमितताओं और फ़िरंगी समुद्री शक्ति में विस्तार के प्रति सचेत किया था ।

दूसरे बहुत-से इतिहासकार इस प्रकार की चिंताओं से मुक्त थे । अगर फ़िरंगियों का उल्लेख भी किया जाता तो तिरस्कार के साथ, वहशी दुश्मन की हैसियत से या फिर अभिभावक वाले अंदाज़ में, जैसे वे उन्हें ख़िराज (कर) अदा करते हैं । सोलहवीं सदी के अंत में और 17वीं सदी में फ़िरंगी व्यापारियों, उनके जहाज़ों और कभी-कभी उनके लोगों के आगमन के हवाले भी मिलते हैं । उस्मानी इतिहासकार सलायंकी मुस्तफ़ा आफ़ंदी 1593 ई॰ दूसरे अंग्रेज़ राजदूत एडवर्ड बार्टिन के इस्तंबूल में आने का उल्लेख इस प्रकार करता है–

इंग्लिस्तान द्वीप के देश, जो इस्तंबूल के तलाई हलाल से 3700 मील समुद्री दूरी पर है, की शासक एक स्त्री है जो अपने पैतृक शासन को संभालती है और पूरी शक्ति के साथ अपनी स्वतंत्रता और सत्ता बनाए रखती है । वह लूथंर के धर्म की अनुयायी है । वह अपने बधाई-पत्र, अपने दूत, अपने उपहार व अपनी भेटें भेजती है । उस दिन मंत्रिमंडल की बैठक थी ।

क़ानून के अनुसार दूत की आवभगत की गयी और उसे पुरस्कार प्रदान किये गये । इस जैसा विचित्र जहाज़ इस्तंबूल की बन्दरगाह में कभी दाख़िल नहीं हुआ था । वह जहाज़ 3700 मील की समुद्री यात्रा तय करके 83 तोपें और दूसरे हथियार लेकर आया था । आग्नेयास्त्रों का बाह्य रूप सूअर से मिलता था । वह अपने ज़माने का एक ऐसा आश्चर्य था जिसको लिखा जाना आवश्यक है ।

सूअर के रूप की तोपें तो उसकी कल्पना की उड़ान मालूम होती है, लेकिन बहरहाल वह यह अवश्य जानता था कि इंग्लिस्तान में प्रोटेस्टेंट महारानी है और स्वयं उसने या उसको सूचना देने वालों ने देखा था कि अटलांटिक महासागर में चलने वाले जहाज़ बहुत बड़े होते हैं और वे भारी तोपें आदि ले जाते हैं ।

17वीं और 18वीं में उस्मानी वृत्तांत लेखकों (वाक़िया निगारों) के संबंधों पर दिया । यूरोप की विभिन्न क़ौमों को अभी तक 'अंग्लेज़ काफ़िर' या 'फ़्रांसीसी काफ़िर' ही कहा जा रहा था । यद्यपि पहले की ऐतिहासिक पुस्तकों में जो बुरा-भला कहा जाता था उसमें अब कमी आ गयी थी ।

बहरहाल सामान्य परिस्थितियां यही थीं कि उस्मानी इतिहासकार जो यूरोप के साथ लगी अपनी सीमाओं पर ध्यान देने लगते थे, इस विषय में कुछ नहीं बताते थे कि यूरोप के भीतर क्या हो रहा है । इसमें आश्चर्यजनक रूप से एक प्रकार का सिलसिला नज़र आता है । इसका एक कारण यह भी था कि उस्मानी वृत्तांत लेखक पुरानी घटनाओं के बारे में अपने पहले के लेखकों की रिवायतों को अखंडनीय समझते थे । वे यह नहीं मानते थे कि वे उनके व्यक्तिगत विचार भी हो सकते हैं । इसलिए एक के बाद दूसरे वृत्तांत लेखक प्राचीन दस्तावेज़ें ही नक़ल करते चले जाते थे, यहां

तक कि कातिब चलबी जैसा इतिहासकार भी, जो यूरोप से अपनी दिलचस्पी प्रकट करता है, पुरानी रिवायत से बहुत कम हटता है ।

मिसाल के तौर पर तुर्की में यूरोप की तीस वर्ष की लड़ाई की सूचना पहुंचने पर वह जो लिखता है वह बहुत ही संक्षिप्त है और यही बातें शब्दश: दूसरे लेखकों के यहां भी दोहरायी गयी हैं । इस्लामी वर्ष 1054 हिजरी की घटनाओं में इसका हवाला दिया गया है । वह लिखता है कि इस वर्ष शव्वाल के महीने में जो ईसाई वर्ष 1644 ई० था, बोदा के सरहदी मोर्चे से अधिकारियों के द्वारा इस्तंबूल यह सूचना पहुंची कि सम्राट रोमा फ़रडेंड ने सात प्रतिनिधियों को, जिन्हें तुर्की में सात सम्राट कहा गया, तैयार करने की कोशिश की कि उसके जीवन में उसके बेटे को शाही ताज (राजसिंहासन) का उत्तराधिकारी स्वीकार कर लिया जाए । एक प्रतिनिधि को जो फ्रांस का पक्षधर था, सम्राट ने हस्पानिया के शासक से मिलकर गिरफ़्तार किया और क़त्ल कर दिया । फ्रांस का शासक इस पर क्रुद्ध हुआ । उसने स्वीडन के साथ समझौता किया, जिसने जर्मन भू-भाग पर चढ़ाई की और प्राचीन नगर प्राग पर क़ब्ज़ा कर लिया । युद्ध 1057 सन् हिजरी (1647 ईसवी) तक जारी रहा । इसके बाद सुलहनामा हुआ । आस्ट्रिया ने जो बहुत कमज़ोर हो गया थ ऐल्ज़ाक को फ्रांस के और पोमरीनिया को स्वीडन के हवाले कर दिया ।

इस बयान में प्राग में स्वीडन के प्रवेश और वेस्ट फ़ालिया समझौते का इतिहास ग़लत बताया गया है । इस सन में संयोग से वे नगर पर क़ब्ज़ा करने में नाकाम रहे थे । और युद्ध के आरंभिक चरण से अनभिज्ञता प्रकट की गयी है । इसके अतिरिक्त इस युद्ध में जो धार्मिक और राजनीतिक टकराव मौजूद था उसका तो उल्लेख ही कहीं नहीं है । पुस्तक के एक और भाग में जिसका शीर्षक है, "आस्ट्रिया के काफ़िरों से फ्रांसीसियों और स्वीडिश की लड़ाई ।" कातिब चलबी ने थोड़ा-सा अधिक विस्तार दिया है । उसे 1040 हिजरी (1630-31 ई०) वर्ष में दर्ज किया गया है ।

वह कहता है कि फ्रांसीसी प्रशासक लुई (लोडवरी कस) याज़ दशम सम्राट बनना चाहता था । सम्राट सात प्रतिनिधि चुनते थे, जो निर्वाचन करने वाले कहलाते थे, उनमें से हर एक की अपनी ज़मीन होती थी । उल्लिखित सम्राट ने उनमें से दो को अपने साथ मिला लिया । उस समय का सम्राट वर्तमान सम्राट फ़रडीनेंड का पिता था । (फ़रडीनेंड तृतीय की 1657 ई० में मृत्यु हो गयी थी ।) उसने फिर प्रबंध किया कि उसका बेटा उसके जीवन में ही उसका उत्तराधिकारी मनोनीत हो जाए । कुछ प्रतिनिधियों ने उसको पसन्द नहीं किया और कहा कि उससे उन्हें कोई फ़ायदा नहीं होगा और यह क़ानून के विरुद्ध ही है ।

फ़्रांसीसी शासक ने विरोध स्वरूप युद्ध प्रारंभ कर दिया और अपने साथ स्वीडन के शासक को मिला लिया और कहा कि सम्राट के जीवन में इस प्रकार के मनोनयन काफ़िरों के क़ानून के ख़िलाफ़ है । फ़िलिप चतुर्थ (मृत्यु 1665 ई०) जो अभी हस्तानिया का शासक था–फ्रांस के शासक द्वारा सुरक्षित था और उनके बीच सुलह थी, लेकिन हस्पानिया के शासक नीमचे की भांति दोस्तूर (संभवत: आस्ट्रिया का इतालवी उच्चारण दी आस्ट्रिया) के परिवार से था, इसलिए उसने सम्राट का साथ दिया । तीस वर्ष तक चले युद्ध का संक्षिप्त बयान वेस्ट फ़ालिया समझौते पर समाप्त होता है ।

कातिब चलबी फ्रांस के हालात पर कई और जानकारियां भी जुटाता है । वह 1018 हिजरी के तहत दर्ज करता है कि फ्रांसीसी शासक हेनरी का एक प्रतिनिधि आया और उसने रियायतें देने के समझौते को प्रस्तावित करने का निवेदन किया । फ्रांसीसी राजनयिक ने जिसका नाम फ्रांसिक्स सेरूं बताया गया है उस मैत्री समझौते का हवाला दिया जो फ्रांसीसी और उस्मानी शासकों के बीच पहले हुआ था और वे रियायतें जो सुलतान मुहम्मद फ़ातेह के ज़माने में दी गयी थीं (वैसे वास्तव में ये रियायतें बाद में दी गयीं)। फ्रांसवा स्थोरी काडंट दी बरयूज़ (1560-1628) इस्तंबूल से 1605 ई० में रवाना हुआ । रियायतों के समझौते का प्रस्ताव 20 मई 1604 ई० को किया गया ।

कातिब चलबी लिखता है कि फ्रांस के अतिरिक्त ये रियायतें वीनस, इंग्लिस्तान, जेनेवा, पुर्तगाल, कतलूनिया के व्यापारियों, सिसली, अनबकोना, हस्पानिया और फ्लोरेंस को दी गयी थीं । इन क़ौमों में से बहुत-से फ्रांसीसी शासक के नाम से ये रियायतें प्राप्त कर रहे थे । वह कहता है कि उल्लिखित राजदूत ने जिन दूसरी बातों पर बातचीत की, वे बैतुल मक़्दिस की ज़ियारत, बरबरी निवासियों की गतिविधियों और सैन्य सहयोग से संबंधित थीं ।

जनवरी 1653 ई० में वीनस का राजदूत आया, ताकि

ब्रिटिश राजदूत की सहायता से सुलह की बात आगे बढ़ायी जा सके । उस्मानी वृत्तांत लेखक को यह बात एक विचित्र टिप्पणी के लिए प्रेरित करती है : "वीनस का प्रतिनिधि 90 वर्ष का काफ़िर था । उसका सिर और उसके हाथ कांप रहे थे, लेकिन वह बहुत चालाक राजदूत था ।" हालांकि वास्तव में यह राजदूत जैवानी कापेलू (1584-1662 ई॰) था जो दरअस्ल 69 वर्ष का था ।

17वीं सदी के उस्मानी इतिहासकारों में एक लब्धप्रतिष्ठ इतिहासकार इबराहीम पेजोई था जो पजोवी के नाम से प्रसिद्ध है । उसका इतिहास 1590 ई॰ से 1639 ई॰ तक को समेटे हुए है । वह 1574 ई॰ में हंगरी के पैक्स नगर में पैदा हुआ, जिसके कारण उसका यह नाम पड़ा । पिता की ओर से वह तुर्क परिवार से संबंध रखता था । यह परिवार कई पीढ़ियों से उस्मानी साम्राज्य की सेवा में था । उसकी माता सोकी लोकी थी अर्थात सोको लोऊच परिवार से संबंध रखती थी । वह सर्बिया की मुसलमान थी । इबराहीम अनातोलिया में सेवारत रहने के अतिरिक्त अपने जीवन का बड़ा भाग साम्राज्य के हंगरी और संजक क्षेत्रों में गुज़ार चुका था । चूंकि उसका जन्म और पालन-पोषण यूरोप की सीमाओं से लगे हुए क्षेत्र में हुआ था, इसलिए उसकी जानकारियां और दिलचस्पियां अन्य उस्मानी इतिहासकारों से भिन्न थीं ।

प्रारंभ में तो वह भी अपने पहले के इतिहासकारों के ढंग पर ही काम कर रहा था, लेकिन बाद में वह अपनी आंखों देखी बातों, अपने अनुभवों और बूढ़े सिपाहियों की शहादतों पर निर्भर रहा । इससे भी अधिक उसने जो क्रांतिकारी क़दम उठाया, वह यह था कि उसने शत्रु क़ौमों के इतिहासकारों की पुस्तकों से फ़ायदा उठाया । उसे सबसे अधिक दिलचस्पी सैन्य इतिहास से थी । अतएव उसने अत्यंत ध्यानपूर्वक उन बड़े युद्धों का अध्ययन किया, जो हंगरी के मैदानों में लड़े गये थे, लेकिन इस संदर्भ में उस्मानी वृत्तांत लेखक उसकी प्यास नहीं बुझा सके । उसे वह विस्तृत विवरण नहीं मिला, जो वह चाहता था । इसलिए उसने दूसरी ओर रुजू किया । वह कहता है, "हमारे देश में हंगरी के ऐसे निवासी हैं जो लिख-पढ़ सकते हैं ।"

निस्संदेह उस्मानी साम्राज्य में ऐसे पढ़े-लिखे हंगरी वासी थे जो क़ैदी बनकर आये थे या मुसलमान हो गये थे । वे पजोवी के काम आ सकते थे । उसका तरीक़ा यह था कि वह हंगरी का कोई रोज़नामचा, जो संभवत: लातीनी में लिखा होता, पढ़वा कर सुनता और फिर उसका अनुवाद तुर्की में करता । उसने इन रोज़नामचों के बहुत से हिस्से अपनी पुस्तक में सम्मिलित किये । उनमें मोहाकस के बड़े युद्ध और हंगरी के युद्ध की दूसरी घटनाएं भी हैं । उसने अपने स्रोतों का उल्लेख नहीं किया, लेकिन आधुनिक अनुसंधानकर्ताओं ने उनमें से दो की शिनाख़्त कर ली है ।

पजोवी संभवत: पहला उस्मानी इतिहासकार था, जिसने शत्रु द्वारा वर्णित घटनाओं की तुलना अपने वृत्तांत लेखकों से की और फिर उनके अध्ययन के पश्चात् अपने अनुसंधान के हवाले से इतिहास लिखा । इस मामले में एकाध इतिहासकार ही उसका पथ-प्रदर्शक होगा और काफ़ी अवधि तक उसका अनुसरण करने वाला भी सामने नहीं आया ।

पजोवी के वृत्तांत-लेखन में और भी बहुत-सी ऐसी घटनाओं के हवाले हैं जिनमें से अधिकतर का संबंध उस्मानियों या इस्लाम से है । वह 1552 ई॰ में हस्पानिया के ख़िलाफ़ फ़्रांस और तुर्की की साझा समुद्री लड़ाइयों का संक्षिप्त उल्लेख करता है और हस्पानिया में मोरेकूकी (1568-1570) के विद्रोह का हवाला देता है । वह सीमाओं पर होने वाली लड़ाइयों और वीनस एवं उसके साथ एका करने वालों के ख़िलाफ़ रोम सागर में समुद्री लड़ाई का विस्तारपूर्वक उल्लेख करता है । कभी-कभी वह राजनीतिक और सैनिक मामलों से बाहर भी निकल जाता है । अतएव वह अंग्रेज़ व्यापारियों की ओर से तुर्की में तम्बाकू की इस्तेमाल शुरू करने और उससे उत्पन्न होने वाले बुरे प्रभावों पर प्रकाश डालता है और यूरोप में प्रिंटिंग प्रेस और बारूद के आविष्कार का इतिहास भी बयान करता है ।

उस्मानी काल में जो महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी गयी हैं संभवत: उनमें सबसे महत्वपूर्ण 'तारीख़ नामा' है । उसमें 1000 से 1070 हिजरी तक के इस्लामी काल को समाहित किया गया है । यह ईसवी हिसाब से 1590 ई॰ से 1660 ई॰ तक का बनता है । नाअमा जिसने यह पुस्तक संपादित की है और इसका बड़ा भाग स्वयं भी लिखा है, महान उस्मानी इतिहासकारों में से एक था ।

अपने दूसरे साथियों के विपरीत, जो केवल घटनाएं ही बयान कर देते थे, नाइमा के पास इतिहास की प्रकृति की दार्शनिक अनुभूति भी थी और इस बारे में उसने काफ़ी चिंतन-मनन भी किया था । उसके महत्वपूर्ण विषयों में से

एक विषय यूरोप की लड़ाइयां थीं, जिनमें बल्क़ान और काला सागर की लड़ाइयां भी सम्मिलित थीं । इन लड़ाइयों पर उसने विस्तार के साथ रोशनी डाली है और हंगरी ट्रास्लवेनिया के जो रहनुमा लड़ाइयों में शामिल थे उनको उच्च स्थान दिया गया है । पुस्तक में हैसबर्ग का सम्राट एक काल्पनिक व्यक्तित्व रहा है और उसका नाम भी बहुत कम लिया गया है ।

पश्चिम के शासक और उनका शासकत्व तो बिल्कुल ही उल्लेखनीय नहीं समझा गया । उसने जिस काल का समावेश किया है उसमें तीस वर्ष की लड़ाई केन्द्रीय हैसियत रखती है । वह लड़ाई एक ऐसा तूफ़ान थी, जिसे उस्मानी साम्राज्य (सल्तनत) के सीधे ध्यान का केन्द्र बनना चाहिए था, लेकिन नाअमा प्राचीन वृत्तांत लेखकों के बयान दोहराने से अधिक और कुछ नहीं करता और वह बयान भी उसने बेपरवाही से नक़ल करता है कि एक सौ वर्ष पूर्व के हस्पानिया के शासक फिलिप चतुर्थ के बारे में लिख देता है कि वह आज भी सम्राट है । इसीलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि बहुत पुरानी घटनाओं से उसे कोई दिलचस्पी ही नहीं थी जैसे फ़्रांस में लुई चतुर्थ या इंग्लिस्तान की अराजकता और बदनज़्मी की ।

फिर भी हम एक दृष्टि से नाअमा दूसरे उस्मानी वृत्तांत लेखकों से अलग नज़र आता है । वह प्राचीनतम काल में चला जाता है और अतीत व वर्तमान की घटनाओं की तुलना करने का प्रयास करता है । उस्मानी इतिहास लेखन में ऐसा उदाहरण पहले भी मिलता है, लेकिन बहुत कम जैसे 16वीं सदी का इतिहासकार कमाल पाशा ज़ादा 1521 ई॰ में सुल्तान सुलैमान ज़ीशान को आस्ट्रिया के सम्राट के ख़िलाफ़ लड़ाई लघु एशिया में मध्यकाल की जर्मन सलीबी सेना के हमले का बदला क़रार देता है । इसी प्रकार 18वीं सदी में जब उस्मानी साम्राज्य आस्ट्रिया और रूस के हाथों पराजित होने के बाद बुरी तरह आहत था तो तुर्कियों का विश्वास बहाल करने के लिए प्राचीन कालों की विजयों और सलीबी जंगजुओं की अंतिम पराजय का हवाला देता है । इस प्रकार उनका उत्साह बढ़ाने का प्रयास करता है–

''इस्लामी काल के छह सदी बाद (नाअमा की तिथियां ग़लत हैं) चूंकि इस्लामी सम्राटों के बीच कोई समझौता नहीं था, इसलिए आपसी युद्ध और मतभेद प्रकट होने लगे । और जब वे एक दूसरे के साथ लड़ने में व्यस्त थे तो फ़्रांसीसी काफ़िर और दूसरे काफ़िर सम्राट विशेष रूप से आस्ट्रिया से जो अगणित सैनिक भेजे गये थे, एक बड़े समुद्री बेड़े के साथ रोम सागर के तटों पर आये और उन पर क़ब्ज़ा कर लिया ।''

नाअमा बयान करता है कि किस प्रकार विजेता फ़िरंगी शाम (सीरिया) और फ़िलिस्तीन के समुद्र तटों पर क़ाबिज़ हुए और किस प्रकार वे दिमिश्क़ और मिस्र के लिए ख़तरा बन गये । इस ख़तरे का मुक़ाबला सलाहुद्दीन ने किया । उसने उन्हें वहीं रोके रखा यहां तक कि अंततः उसके उत्तराधिकारियों ने उन्हें निकाल-बाहर किया । और पवित्र धरती जिसे उन्होंने अपने क़ब्ज़े में कर रखा था उनकी गंदगी से पवित्र हो गयी ।

मालूम होता है कि नाअमा ने इस घटना से अपने काल के उस्मानियों के लिए संतोष और इत्मीनान का रास्ता ढूंढ़ लिया । मध्यकाल के मिस्री सुल्तानों ने फ़िरंगियों के साथ सुलह-सफ़ाई की ज़रूरत महसूस की थी, यहां तक कि एक सुल्तान तो उनके साथ समझौता करने को भी तैयार था, जिसके अंतर्गत फ़िलिस्तीन फ़िरंगियों के पास चला जाता । शायद यह घटना बयान करने का उद्देश्य यह हो कि उस्मानियों को भी, जो बार-बार हार का सामना कर चुके थे, शत्रु के सुलह के लिए तैयार रहना चाहिए, चाहे इस सुलह से उन्हें हानि ही क्यों न उठानी पड़े, लेकिन इस प्रकार वे जो कुछ बचा सकते हैं बचा लेंगे और उन्हें अपनी शक्ति दोबारा प्राप्त करने का अवसर मिल जाएगा ।

एक और स्थान पर नाइमा अधिक स्पष्ट शब्दों में बात करता है, ''यह बात स्पष्ट करने के लिए लिखी गयी है कि आख़िर सम्राटों के साथ युद्धबंदी कितनी आवश्यक है और सारी धरती पर ईसाइयों के साथ सुलह अनिवार्य है, ताकि उस्मानी भू-भाग की व्यवस्था अच्छी हो और यहां के निवासियों को शांति व सुकून का अवसर प्राप्त हो सके ।''

नाइमा के उत्तराधिकारी रशीद आफ़ंदी ने इतिहास वहां से प्रारंभ किया, जहां नाअमा ने छोड़ा था । उसने 1070 हिजरी तद्नुसार 1660 ई॰ से प्रारंभ किया और 1720 ई॰ तक की घटनाएं क़लमबंद कीं । उसके वृत्तांत यूरोप के साथ उस्मानी संबंधों के एक पूरे सिलसिले को समाहित करते हैं । उसमें वियाना के दूसरे असफल घेराव (1710-1711 ई॰) में रूस के पीटर महान से युद्ध और 1714-1718 ई॰ में वीनस एवं आस्ट्रिया के साथ युद्ध में सम्मिलित हैं । इसमें

स्वीडन के सम्राट चार्ल्स द्वादश के साथ एक अजीबो-ग़रीब समझौता भी सम्मिलित है, यहां तक कि बिन बुलाए मेहमान की हैसियत से तुर्की में इस सम्राट के ठहरने का उल्लेख भी है ।

रशीद आफ़ंदी अपने मार्गदर्शक इतिहासकारों के मुक़ाबले में राजनयिक संबंधों पर अधिक ध्यान देता है । इसमें उस्मानियों के निकटतम पड़ोसियों, रूस, आस्ट्रिया और वीनस के साथ सुलह की बातचीत भी सम्मिलित है । वह यूरोप के पिछड़े देशों के बारे में भी थोड़ा-बहुत लिखता है । रशीद पहला इतिहासकार है जो यूरोपीय देशों में भेजे जाने वाले उस्मानी राजनय-प्रतिनिधियों की गतिविधियों पर अधिक विस्तार से प्रकाश डालता है । इससे पहले के वृत्तांत लेखक केवल इन प्रतिनिधियों का आना-जाना ही दर्ज करते थे । रशीद इन प्रतिनिधियों की, जो अब राजदूत की हैसियत इख़्तियार कर गये थे, उन रिपोर्टों से उद्धरण भी नक़ल करता है जो वे वापसी पर सरकार को प्रस्तुत करते थे, तथापि राजनयिक संबंधों से इतनी अधिक दिलचस्पी लेने के बावजूद रशीद भी यूरोपीय देशों के आंतरिक मामलों पर ध्यान नहीं देता और उस ज़माने में यूरोप के इतिहास में जो अत्यंत महत्वपूर्ण घट रही थी, उन पर से ख़ामोशी से गुज़र जाता है ।

रशीद के समकालीनों और उसके बाद आने वालों के बारे में भी बात कही जा सकती है । ये इतिहासकार 18वीं सदी मध्य अवधियों को आवृत्त कर रहे थे और वे भी राजनयिक संबंधों और यूरोप के शासकों के बारे में ही अधिक लिख रहे थे । उस्मानी इतिहासकार सुलहदाद ने 1697 ई० में हुए रायज़ोक समझौते का काफ़ी विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है और इस सिलसिले में तुर्की दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है ।

कई उस्मानी इतिहासकार आस्ट्रिया में सिंहासनारोहण की लड़ाई और उसी लड़ाई में शामिल पक्षों के बारे में भी लिख रहे थे । तीस वर्षीय युद्ध के पश्चात् यूरोप का यह पहला राजनीतिक तनाव था, जिसने उस्मानी इतिहासकारों का अपनी ओर अधिक ध्यान आकृष्ट किया । इसी काल का एक और इतिहासकार शमअदानी ज़ादा, सुलैमान आफ़ंदी मुक़द्दस सुल्तान रोमा के निर्वाचन की पद्धति का उल्लेख इस प्रकार करता है—"नीमचे का शासन नये राज्यों पर आधारित है, उनमें से तीन, राइन के देश में मैनेज़ कोलोन और ट्रेटर के प्रांतों में हैं । ये पहली तीन निर्वाचित संस्थाएं हैं ।"

चौथी और बाक़ी हुकूमतें चेक, बोयरया, सैक्सनी और रूस के देश में हैं । इन नये प्रांतों के अतिरिक्त सिवाये का प्रांत है जो आजकल सार्डीनिया के सम्राट के अधीन है, फिर हैसे का प्रांत है जो स्वतंत्र क्षेत्र है, सर्बियाई देश है जो स्वतंत्र लोकतांत्रिक राज्य है । शमअदानी ज़ादा इन सबके बारे में थोड़ा-थोड़ा लिखता है । वह लिखता है कि प्रूशिया देश का शासक कोई ग्रेन्डेर है । वह बताता है कि यह नाम ब्रेंडन वर्ग का बिगड़ा हुआ रूप है, जो इस प्रांत में एक क़िला है । उसका मूल नाम फ्रेड्रिक्स है । हनोवर के नवें राज्य के बारे में शमअदीनी ज़ादा लिखता है, "यह इंग्लिस्तान के वर्तमान सम्राट जोजो की पैतृक संपत्ति है ।"

स्पष्ट है जोजो जार्ज का बिगड़ा हुआ रूप है जो किसी इतालवी निवासी के द्वारा पहुंचा होगा, क्योंकि इतालवी भाषा में जार्ज जार्जियो कहलाता है । आस्ट्रिया और वहां की इन परिस्थितियों पर जो सिंहासनारोहण के युद्ध का कारण बनीं, शमअदानी ज़ादा की छपी पुस्तक में पूरे दो पृष्ठ मौजूद हैं और उस्मानी इतिहासकारों की सभी पुस्तकों में से इस पुस्तक में सर्वाधिक विस्तार है ।

का भी संक्षिप्त रूप में उल्लेख करता है और यद्यपि उसकी अधिक दिलचस्पी आस्ट्रिया और रूस से है, फिर भी वह दूरस्थ और अल्पज्ञात देशों जैसे फ़्रांस, इंग्लिस्तान, हालैंड और स्वीडन के हवाले भी देता है । वह इन देशों के आपसी वैर और मुक़ाबलों को भी जानता है, लेकिन कहता है कि मुस्लिम शत्रुता में वे सब एक हैं । अतएव 1736 ई० में जब रूस के साथ संकट पैदा हुआ तो अंग्रेज़ और वलन्देज़ी राजदूतों ने इस ख़याल से उस्मानियों को सावधानी बरतने का परामर्श दिया कि इस झगड़े में उन्हें तुर्कों की हार का ख़तरा था, लेकिन इन राजदूतों के बारे में सन्देह प्रकट किया गया कि वे रूस के साथ मिले हुए हैं ।

वासिफ़ की पुस्तक में कुछ और परिवर्तन दिखायी पड़ते हैं । यह पुस्तक 1166 हि० (1752 ई०) से 1188 हि० (1774 ई०) की घटनाओं को समाहित किये हुए है । इस प्रकार उस्मानी साम्राज्य को पेश आने वाले ख़तरों का निवारण इसमें आ जाता है, जब विजेता रूस ने लघु केनारिया की विनाशकारी संधि ज़बरदस्ती तुर्की पर थोप दी थी । वासिफ़ स्वयं इस काल में मौजूद था, जब फ़्रांस में क्रांतिकारी घटनाएं घटीं और नेपोलियन ने युद्ध लड़ा । वह

मिस्र पर फ़्रांस की चढ़ाई और क़ब्ज़े का प्रत्यक्षदर्शी था। इस पर उसने एक पृथक पुस्तक लिखी। अपने वृत्तांत में वासिफ़ वियाना और बर्लिन जाने वाले उस्मानी प्रतिनिधिमंडलों के बारे में लिखता है और उनकी लिखी हुई रिपोर्टों पर आधारित मध्य यूरोप की घटनाएं बयान करता है।

18वीं सदी में जब उस्मानी साम्राज्य यूरोप के मामलों में बहुत अधिक लिप्त था, उस समय भी आश्चर्यजनक रूप से इस बारे में बहुत कम लिख रहा था। अस्ल लड़ाइयों के बारे में तो वह बहुत कुछ लिखता जा रहा था, लेकिन वृत्तांत लेखक रूस, आस्ट्रिया और दूसरे पश्चिमी देशों के साथ उस्मानी साम्राज्य के लेन-देन पर बहुत कम लिख रहे थे, लेकिन ईरान पर अधिक ध्यान दिया जा रहा था या फिर प्रांतीय क्षेत्रों में साम्राज्य के कुलीन जनों और पाशाओं के बीच जो झगड़े चल रहे थे उन पर ध्यान दिया जा रहा था। वैदेशिक संबंधों पर थोड़ा-सा अधिक ध्यान दिया जा रहा था, लेकिन फिर भी यह बहुत सीमित था। और वृत्तांत लेखक जिन जानकारियों को अपना स्रोत बना रहे थे, वे उन्हीं माध्यमों से प्राप्त हो रही थीं, जिनसे पहले वृत्तांत लेखक जानकारियां प्राप्त करते थे। ये माध्यम थे विदेशी, फ़रार पश्चिमी निवासी या स्थानीय ग़ैर-मुस्लिम। 18वीं सदी का उस्मानी मुसलमान यूरोपीय क़ौमों के बारे में उतना ही जानता था जितना 19वीं सदी का पश्चिमी निवासी अफ़्रीक़ा के क़बीलों और आम जन के बारे में जान सकता था। इन दोनों का रवैया मनोरंजन और मनबहलाव के साथ उन लोगों के बारे में तिरस्कार वाला ही रहा। बढ़ते हुए ख़तरों ने इस रवैये में कुछ बदलाव आया, लेकिन यह चीज़ भी बहुत न्यून था।

18वीं सदी के अंत तक यूरोप के बारे में उस्मानी ज्ञान अधिक विस्तृत नहीं था। फ़ारसी में तो इन जानकारियों का बिल्कुल ही अभाव था। अरबी में भी केवल मराकशी दूतावासों की रिपोर्टें इस बारे में मौजूद थीं।

18वीं सदी में नयी परिस्थिति पैदा हुई। यह शक्ल हारों और बढ़ते हुए ख़तरों ने पैदा की थी। इससे यूरोप के साथ उस्मानियों की दिलचस्पी और बढ़ी। उसका संबंध विशेष रूप से रक्षा से था। अब जैसे ही दो संस्कृतियों को अलग करने वाली दीवार गिरी तो फिर यह संभव नहीं रहा कि दोनों के बीच ज्ञान और कलाओं के मेल-मिलाप को रोका जाए।

एक ओर युद्धक कलाओं और सैन्य विज्ञान से दिलचस्पी बढ़ी तो दूसरी ओर जासूसी की व्यवस्था को उत्तम बनाने की आवश्यकता महसूस हुई। इससे यूरोप के ताज़ा इतिहास का अध्ययन भी आवश्यक ठहरा। प्रारंभ में तो यह अध्ययन सरसरी-सा रहा, लेकिन फिर इस पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा, क्योंकि उस्मानियों को अब यह एहसास हो गया था कि उनके साम्राज्य का अस्तित्व इस बात पर निर्भर है कि वे अधिक से अधिक यूरोप के आंतरिक मामलों के बारे में सही और ठीक जानकारियां प्राप्त करें।

तुर्की में स्थापित होने वाले पहले प्रिंटिंग प्रेस में जो 1729 ई० में स्थापित हुआ और 1742 ई० में बन्द हो गया, जो पुस्तकें छपीं उनमें कई पुस्तकें इतिहास और भूगोल पर थीं। उनमें फ्रांस में तुर्क राजदूत मुहम्मद आफ़ंदी की याददाश्त (स्मारिका) भी सम्मिलित है, जो उन युद्धक कलाओं से संबंधित है जो यूरोप की सेनाएं प्रयुक्त कर रही थीं। यह पुस्तक प्रेस के संस्थापक इबराहीम मुतफ़रीक़ा ने लिखी थी। इसके अतिरिक्त ईरान में युद्ध से संबंधित एक पूरी पुस्तक भी छपायी गयी। इबराहीम ने कुछ पुरानी पुस्तकें भी छपायीं जिनमें नयी दुनिया की खोजों के बारे में 16वीं सदी की एक पुस्तक और भूगोल पर कातिब चलबी की रचनाएं भी सम्मिलित थीं।

इबराहीम के प्रेस में छपने वाली पुस्तकों के अतिरिक्त इस्तंबूल में जो कुछ क़लमी नुस्ख़े (हस्तलिखित पांडुलिपियां) मौजूद हैं उनसे स्पष्ट होता है कि यूरोप के इतिहास से दिलचस्पी में अभिवृद्धि हो रही थी। 1722 ई० के एक क़लमी नुस्ख़े में 800 से 1662 ई० तक के आस्ट्रिया के इतिहास की रूपरेखा मिलती है। यह एक तर्जुमान (दुभाषिया/अनुवादक) उस्मान आग़ा ने जर्मन भाषा से अनूदित किया था। इस काल की परिस्थितियों से संबंधित जो क़लमी नुस्ख़े मिले हैं वे 1725 ई० के निकट के हैं। उन पर किसी लेखक का नाम नहीं है। उनमें प्रत्यक्षदर्शियों के वक्तव्यों पर आधारित यूरोप की नवीनतम परिस्थितियां बयान की गयी हैं।

इस काल के यूरोप का संक्षिप्त जायज़ा, जो तुर्की में सुरक्षित रह गया है, चार क़लमी नुस्ख़ों में है। उन पर किसी लिखने वाले का नाम नहीं है। उनसे यूरोप से तुर्कों की अरुचि सिद्ध होती है। आरंभ में धार्मिक और राजनीतिक कालों की व्याख्या की गयी है, फिर यूरोप के देशों की एक गणना प्रस्तुत की गयी है। प्रारंभ किया गया है मुक़द्दस सल्तनत रोमा के क्षेत्रों की दर्जाबंदी से। इसके बाद

इतालिया राज्य (वीनस और जेनेवा आदि) का बयान है और फिर स्वीटज़रलैंड, फ़्रांस, स्पेन, पुर्तगाल, माल्टा (जिसे अंग्रेज़ों का राज्य कहा गया है), हालैंड, डेनमार्क, स्वीडन और रूस के हाल हैं ।

लेखक इंग्लिस्तान के बारे में अधिक नहीं जानता । उसने अपने काल के अंग्रेज़ सम्राट का नाम विलियम द्वितीय लिखता है (हालांकि विलियम तृतीय की मृत्यु भी इस पुस्तक से पहले 1702 ई॰ में हो गयी थी)। स्थानों के नाम लिखने में लेखक ने बहुत सावधानी से काम लिया है, लेकिन इंग्लिस्तान के बहुत-से स्थानों के नाम ग़लत लिखे हैं । यह शेष यूरोप महाद्वीप से अधिक अवगत मालूम होता है । उदाहरणार्थ, वह जानता है कि कोलोन का आर्क बिशप डियूट ऑफ़ बोयरिया का बेटा था और लैक्मन बर्ग वर्तमान काल तक रूसी क़ब्ज़े में था (वास्तव में 1716 ई॰ में) और यह कि पूर्व ज़ार (पीटर महान जिसकी 1725 ई॰ में मृत्यु हुई) ने बाल्टिक का बड़ा क्षेत्र स्वीडन से छीन लिया है और इसी प्रकार की दूसरी बातें ।

एक और मसविदे में, जो कई क़लमी नुस्ख़ों पर आधारित है, दुनिया की समुद्री सेनाओं पर रोशनी डाली गयी है । एक नुस्ख़े में लिखता है, "एक आलिम फ़ाज़िल (ज्ञानवान) राहिब (ईसाई संत) फ़्रांस के तवलुस नामक स्थान से आया और प्रधानमंत्री की उपस्थिति में इस्लाम क़बूल किया । चूंकि उसने बहुत सैर और पर्यटन किया है और दुनिया के मामलों से बहुत अधिक अवगत है, इसलिए उसके द्वारा वर्णित घटनाओं पर यह पुस्तक आधारित है ।"

दोनों उल्लिखित पुस्तकें एक ही व्यक्ति की लिखी हुई मालूम होती हैं । जिस व्यक्ति ने समुद्री मामलों पर पुस्तक संपादित की है, उसकी जानकारियों का माध्यम कोई फ़्रांसीसी निवासी है जो भाग कर तुर्की आ गया था । जिस प्रकार पश्चिमी नामों का शब्द लिखा गया है, उससे प्रकट होता है कि लिखने वाला व्यक्ति हंगरी का होगा और संभवत: वह व्यक्ति स्वयं इबराहीम मुतफ़र्रिक़ा था ।

एक और रिपोर्ट जिसका काल 1733-1734 ई॰ है, यूरोपीय देशों की ऐतिहासिक परिस्थिति से संबंधित है । यह रिपोर्ट क्लाड एग्ज़ेन्डर दी बनीवान ने लिखी थी, जो बाद में अहमद पाशा कहलाया । वह फ़्रांस के उच्च परिवार से संबंध रखता था और फिर उस्मानी साम्राज्य में सेवा करने लगा एवं मुसलमान हो गया । यह रिपोर्ट आस्ट्रिया, हंगरी, स्पेन और फ़्रांस के बारे में है और संभवत: लेखक की फ़्रांसीसी रचना से तुर्की में उसका अनुवाद किया गया है । एक इतिहासकार अब्दुर्रहमान मनीफ़ आफ़ंदी (मृत्यु 1742 ई॰) ने उच्च और कुलीन परिवारों का जायज़ा लिया है । उनमें केवल इस्लामी नेतृत्व ही सम्मिलित नहीं है, बल्कि मूर्तिपूजक और ईसाई शासक भी सम्मिलित हैं, जैसे बाजन्तीनी शासक, फ़्रांस और आस्ट्रिया के शासक ।

18वीं सदी के अंत के एक क़लमी मसविदे में जिसका नाम 'यूरोपीय मामलों का जायज़ा' है फ्रेडरिक विलियम द्वितीय के प्रूशिया और क्रांतिकारी हुकूमतों के कारण के फ़्रांस के हाल बयान किये गये हैं । 1799 ई॰ में इस्तंबूल के एक ईसाई कोस्मो को मैदास ने तुर्की भाषा में उस काल के यूरोप के शासकों, उनकी जन्मतिथि, सिंहासन पर आसीन होने की तिथि, उनकी राजधानी, उनकी उपाधियां, उनके युवराजों की सूची तैयार की । इसके अतिरिक्त भी इसमें आवश्यक जानकारियां थीं ।

दूसरे अरब देशों में जो तुर्कों के अधीन या प्रभावाधीन थे, पश्चिम से दिलचस्पी इससे भी कम थी । यह दिलचस्पी केवल ईसाई अल्पसंख्यकों में थी । मराकश ने उन राजदूतों ने जो पश्चिमी देशों में भेंजे गये थे, यूरोप के आन्तरिक राजनैतिक यूनिटों के बारे में जानकारियां जुटायी थीं, लेकिन 19वीं सदी से पहले इतिहास से दिलचस्पी वहां भी नहीं थी । उस्मानियों के अधीन पूरबी अरब में जब फ़्रांसीसी और बरतानवी प्रभाव बढ़ने प्रारंभ हुए तो 18वीं सदी के अंत और 19वीं सदी के प्रारंभ में वहां यूरोप के बारे में जानने का शौक़ पैदा हुआ, लेकिन उस समय जो कुछ लिखा गया वह एक तो संख्या में कम है, दूसरे उन रचनाओं में विशेष रूप से पूरब में फ़िरंगियों की गतिविधियों के बारे में ही लिखा गया ।

इस बात पर विचार नहीं किया गया कि वे क्या परिस्थितियां और घटनाएं थीं जिन्होंने इन क़ौमों को अपने देश से बाहर निकलने पर आमादा किया । 1820 ई॰ की अवधि तक भी पश्चिमी पुस्तकों के अनुवाद नहीं मिलते । इस अवधि में पहली बार पश्चिमी पुस्तकों के अनुवाद प्रकाशित होते हैं । ये अनुवाद मिस्र के प्रगतिशील शासक मुहम्मद अली पाशा के क़ायम किये हुए प्रिंटिंग प्रेस में छपे । ये प्रेस क़ाहिरा में लगाए गये थे । दूसरे अरब देशों और ईरान में, मुसलमानों के अन्दर पश्चिम को जानने का शौक़ बहुत बाद में पैदा हुआ और वह भी वहां यूरोपीय निवासियों की मौजूदगी का नतीजा था ।

पश्चिम और धर्म

मुसलमानों की दृष्टि में धर्म ही उनकी अपनी और दूसरे लोगों की पहचान का आधार था । उनके लिए शिष्ट और सुसंस्कृत एवं सभ्य दुनिया थी दारुल इस्लाम (इस्लाम का घर), जहां मुसलमानों का शासन हो, इस्लामी क़ानून लागू हों और ग़ैर-मुस्लिम प्रजा मुसलमान हुकूमत की रवादारी व सहिष्णुता से फ़ायदा उठा रही हो, शर्त यह है कि वह उनकी शर्तें स्वीकार करती हो । उनके और बाहरी दुनिया के बीच बुनियादी अन्तर इस्लाम का क़बूल करना था । प्राकृतिक और भौगोलिक पारम्परिक शब्दावलियां उनके लिए द्वितीयक हैसियत रखती थीं ।

हम देख चुके हैं कि मुसलमान लेखक इस वास्तविकता से परिचित थे कि उत्तरी सीमाओं के पार ऐसे लोग रहते हैं जो रोमन, फ़्रैंक, स्लाफ़ और दूसरे नामों से पहचाने जाते हैं और आश्चर्यजनक रूप से विभिन्न प्रकार की भाषाएं बोलते हैं, लेकिन उनके लिए केवल यही बात ध्यान देने योग्य नहीं थी । इस्लामी हुकूमत में भी बहुत-सी नस्लें आबाद थीं, यद्यपि मुसलमानों ने कारोबार, हुकूमत, व्यापार और सांस्कृतिक मामलों के लिए बहुत ही सीमित भाषाओं का इस्तेमाल पसन्द किया । फिर भी उनके यहां यूरोप की भांति ही भाषाओं की स्थानीय शैलियों और स्थानीय मुहावरों की भरमार थी ।

मौलिक अन्तर धर्म का था । जो लोग इस्लाम को मानते थे वे इस्लामी बिरादरी का हिस्सा थे, चाहे वे किसी भी देश से संबंध रखते थे या किसी भी शासक की प्रजा थे, वे मुसलमान थे । जो लोग इस्लाम को नहीं मानते थे वे काफ़िर कहलाते थे । अरबी शब्द 'काफ़िर' का अर्थ है इन्कार करना और यह सामान्यत: उन लोगों के लिए बोला जाता था जो इस्लाम का सन्देश नहीं मानते और इस्लाम के हक़ (सत्य) होने से इन्कार करते हैं ।

अब काफ़िर की शब्दावली तमाम ग़ैर-मुस्लिमों के लिए इस्तेमाल होती है (यह लेखक का ख़याल है, जो वास्तविकता के विपरीत है । 'काफ़िर उसे कहा जाता है जो इस्लाम के संदेश को मानने से इन्कार कर दे । –अनुवादक) लेकिन पहले अरबी, फ़ारसी और तुर्की भाषा में यह ईसाई का समानार्थी थी । इस प्रकार 'दारुल हर्ब' उन देशों को कहा जाता था जो विरोधी अक़ीदे या धर्म से संबंध रखते थे । ये पहले ईसाई थे, फिर यूरोपीय क़रार पाये । वैसे मुसलमान यह जानते थे कि ईसाइयों के अलावा भी काफ़िर हैं । हिन्दू और बौद्ध लोग मुसलमानों से इतनी दूर थे कि उन्होंने मध्य-पूर्व के मुसलमानों की 'कुफ़्र' की अवधारणा पर कुछ अधिक प्रभाव नहीं डाला ।

अफ़्रीक़ा के ग़ैर-मुस्लिम उनसे बहुत निकट थे और उनके साथ निकट संबंध भी थे, लेकिन वे बुनियादी तौर पर मुशरिक (शिर्क करने वाले) और मूर्तिपूजक माने जाते थे । मध्य-पूर्व में केवल दो धर्म और पहचाने जाते थे : एक ज़रदुश्ती और दूसरा यहूदी धर्म । लेकिन ये दोनों धर्म इतने छोटे थे कि मुसलमानों की दृष्टि में उनका कोई विशेष महत्व नहीं था । दोनों धर्म अपनी राजनैतिक शक्ति खो चुके थे और उनकी अब मुसलमानों के साथ युद्ध की स्थिति में गणना नहीं होती थी । यहूदी केवल 'ज़िम्मी' माने जाते थे और ज़रदुश्तियों के जो बचे-खुचे लोग रह गये थे, उन्हें भी 'ज़िम्मी' का दर्जा प्राप्त था । उस्मानी काल आते-आते 'काफ़िर' शब्दावली सरकारी इस्तेमाल में यहूदियों के लिए बाक़ी नहीं रही थी ।

आर्थिक और दूसरी ऐसी दस्तावेज़ों में जो ग़ैर-मुस्लिमों से संबंधित थीं, उस्मानी फ़ार्मूला यह था कि काफ़िर और यहूदी अलग-अलग लिखा जाए, अर्थात काफ़िर में यहूदी शामिल नहीं थे । इसका एक अर्थ ईसाइयों का महत्व स्वीकार करना था और एक दृष्टि से यह भी मानता था कि यहूदी एकेश्वरवाद के क़ायल है । उस्मानी (और आधुनिक) तुर्की मुहावरे में काफ़िर के स्थान पर 'गोवर' की शब्दावली प्रयुक्त होने लगी । यह शब्दावली सामान्य काफ़िरों के लिए साधारणतया और ईसाइयों के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त की जाती थी । यह शब्द वास्तव में काफ़िर का ही बिगड़ा हुआ रूप है और संभवत: फ़ारसी के शब्द 'ग़बर' से लिया गया है ।

'ग़बर' शब्द पहले ज़रदुश्तियों या अग्निपूजकों के लिए प्रयुक्त किया जाता था । बाद में इसे ईसाइयों के लिए भी

प्रयुक्त किया जाने लगा । यही धार्मिक दर्जाबन्दी उस्मानी कस्टम के नियमों में भी अपनायी जाती थी । इन नियमों के अनुसार शुल्क की तीन दरें थीं । यह दर माल और सामग्रियों के आधार पर निर्धारित की जाती थी, बल्कि व्यापारी विशेषकर व्यापारी के धर्म के आधार पर निर्धारित की जाती थी । तीन दरों में से सबसे कम दर मुसलमानों के लिए थी । उनमें उस्मानी और दूसरे सभी मुसलमान सम्मिलित थे । बीच की दर ज़िम्मियों के लिए थी । शुल्क की सबसे अधिक दर 'हरबियों' से वसूल की जाती थी, अर्थात उन व्यापारियों से जो 'दारुल हर्ब' से आते थे ।

दिलचस्प बात यह है कि यहूदी चाहे किसी क़ौम के हों, यहां तक कि वे यूरोप से भी आये हो, उनसे ज़िम्मियों वाली दर वसूल की जाती थी । विपरीत दिशा में भी यही तरीक़ा प्रचलित था । इसका अंदाज़ा ईरानियों के बयान से लगाया जा सकता है कि किस प्रकार रूस से 19वीं सदी के प्रारंभ में उन्होंने ज़बरदस्ती रियायतें प्राप्त की थीं । ये रियायतें रूसी ईसाइयों को तो दी जाती थीं, लेकिन रूसी साम्राज्य के मुसलमानों को नहीं दी जाती थीं ।

अतएव काफ़िर विशेष रूप से ईसाई ही थे और वे देश थे जिनके बारे में मुसलमानों का कहना था कि वे काफ़िरों का भू-भाग है अर्थात ईसाइयों का भू-भाग धर्म के आधार पर भेदभाव हर जगह आम था । यूरोप से जो लोग इस्लामी दुनिया में आते थे, वे अपने आपको अंग्रेज़, फ़्रांसीसी, इतालवी या जर्मन आदि कहा करते थे कि वे मराकश, ईरानी या तुर्की क़ौम में आये हैं ।

इसके विपरीत यूरोप में जाने वाला मुसलमान, चाहे वह मराकश से आ गया हो या तुर्की और ईरान से, अपने आपको केवल मुसलमान ही समझता था । ऐसा मुसलमान जो यूरोप में आया है । वह अपने मेज़बान से किसी क्षेत्रीय या क़ौमी पहचान के हिसाब से अपना परिचय नहीं कराता था और न वह स्वयं ऐसा समझता था । सामान्यत: वह अपने देश का हवाला 'इस्लामी भू-भाग' के रूप में देता था और अपने शासकों को 'इस्लामी आज्ञापक' कहता था या इसी प्रकार का और शब्द प्रयुक्त करता था ।

18वीं सदी के अंत में कहीं जाकर यूरोप आने वाले उस्मानी राजदूतों ने अपने आपको और अपने देश को उस्मानी कहना आरंभ किया । इस प्रकार उन्होंने अपने आपको संयुक्त इस्लामी पहचान से अलग किया । इधर जैसे मुस्लिम मुसाफ़िर अपने आपको मुसलमान और अपनी बिरादरी को इस्लामी बिरादरी कहते थे उसे ही प्राय: बिना अपवाद के यूरोपीय मेज़बानों को काफ़िर कहते थे । 18वीं सदी का एक तुर्क मुसाफ़िर आस्ट्रिया में बैठकर कहता है, "आस्ट्रिया के हाकिम (शासक) ने हमसे मिलने के लिए तीन काफ़िर भेजे । काफ़िर की शब्दावली केवल उस समय ही प्रयुक्त नहीं की जाती थी, जब किसी यूरोपीय निवासी का क़ौमी या राजनैतिक पद बयान करना होता था । इस शब्दावली को आदमी, व्यक्ति या इन्सान के लिए भी प्रयुक्त किया जाता था ।

यूरोपीय निवासी केवल इसलिए भिन्न नहीं था कि वह किसी और क़ौम से संबंध रखता था या किसी दूसरे शासक की प्रजा था, किसी दूसरे स्थान पर रहता था या कोई और भाषा बोलता था, बल्कि वह इसलिए भिन्न था कि वह दूसरे धर्म का अनुपालन करता था । इस कारण उसके बारे में यह अंतर भी कर लिया जाता था कि वह शत्रु है और न्यून है । यूरोपीय ईसाई उससे ख़ूब फ़ायदा उठाते थे और आजकल के ज़माने के दुष्प्रचार और प्रसार के ढंगों के अनुसार वे मुसलमानों की इन बातों को उनके ख़िलाफ़ ख़ूब अच्छा लेते थे । शायद ही कोई यूरोपीय क़ौम, गरोह या व्यक्ति ऐसा हो जिसे मुसलमान काफ़िर न कहते हों ।

इतिहास की पुस्तकों में जब विभिन्न ईसाई क़ौमों और देशों के निवासियों के बीच अंतर करना होता था तो अंग्रेज़ काफ़िर, फ़्रांसीसी काफ़िर, रूसी काफ़िर आदि लिखा जाता था । यदि उनका अपमान करना होता था तो उनके लिए अपमान के समानार्थी शब्द प्रयुक्त किये जाते थे, जैसे अंग्लेज़ वन्सेस्ज़ (धर्म से निस्पृह अंग्रेज़) फ़्रांसेज़ जान्सेज़ (फ़्रांसीसी बेरूह), ऐग्रूस मन्हूस (मन्हूस हंगरी वाले), रूस मअकूस (रूसी बदमाश), अल्मान बेईमान (जर्मन बेईमान) आदि ।

मुसलमानों के लिए सकारात्मक और नकारात्मक दोनों ही विशेषताएं प्रयुक्त होती थीं, लेकिन 'गोवर' (गबर) के बाद विशेषताएं नकारात्मक थीं और जब उनके प्रति सद्भावना प्रकट करना अभिप्रेत होता तो ये 'विशेषताएं' हटा दी जाती थीं । मध्यकाल की रचनाओं में किसी यूरोपीय निवासी के नाम के साथ लानत-मलामत के शब्द अवश्य लगाए जाते थे । यह मलामत यूं ही नहीं की जाती थी बल्कि इसे अधिक अर्थपूर्ण बनाने के लिए इस पर आग्रह किया जाता

था ।

ईसाइयों को काफ़िर कहने का रिवाज इतना आम था कि मुसलमान शासक ईसाई सम्राटों को जो मैत्री और सद्भावना के पत्र लिखते थे, उनमें भी यह शब्द प्रयुक्त किया जाता था । अतएव सुल्तान मुराद तृतीय ने इंग्लिस्तान (इंग्लैंड) की महारानी एलिज़ाबेथ को जो पत्र भेजा है, उसमें महारानी को आस्ट्रिया और हंगरी के काफ़िरों पर अपनी विजय और "अपमानित काफ़िरों का भू-भाग" की ओर अपनी सेनाओं के आगे बढ़ने की सूचना देता है और आग्रह करता है कि आप भी "हस्पानवी काफ़िरों" पर चढ़ाई करें ।

अल्लाह के अनुग्रह से आप उन पर विजय प्राप्त करेंगी । फिर "पोलिशी और पुर्तगाली काफ़िरों" के प्रति सद्भावना प्रकट करता है, "जो आपके मित्र हैं" यहां तक कि कातिब चलबी भी जो 18वीं सदी के मध्य में लिख रहा है, जब भी फ्रैंक के बारे में लिखता है तो यह आवश्यक समझता है कि उनके प्रति 'धिक्कारा हुआ, जहन्नमी, खुदा उन्हें विनष्ट करे' जैसे शब्द लिखे ।

18वीं सदी के मध्य में एक उस्मानी अफ़सर ने जो सीमाओं पर सीमांकन आयोग का सदस्य था, बलग्राद पर दोबारा अधिकार प्राप्त करने की रिपोर्ट देते हुए लिखता है कि "आस्ट्रिया को चोर काफ़िरों के हाथों से 'दारुल जिहाद' आज़ाद करा लिया गया है ।" सामान्यत: यूरोपीय सरकारों और व्यक्तियों को कामों के बारे में लिखा जाता था कि अमुक बदनुमा ने ऐसा किया या अमुक षड्यंत्रकारी या शरारत पसन्द व्यक्ति ने ऐसा किया । हो सकता है कि कुछ परिस्थितियों में यह धिक्कार और कटाक्ष ठीक हो, लेकिन प्रत्येक रचना में इसे मुहावरे के रूप में प्रयुक्त किया जाता था । यह आदत उस काल तक जारी रही, जब उस्मानी सल्तनत (साम्राज्य) सीधे यूरोप के मामलों में व्यस्त हो गयी थी और यूरोप में उसके विरोधियों के साथ एकता भी मौजूद थी ।

उस्मानी हाकिम और इतिहासकार यूरोप के अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों की अच्छी बातों पर भी ध्यान देने लगे थे । आख़िर 18वीं सदी में इन अपमानजनक शब्दों का प्रयोग समाप्त हो गया । फिर भी मुसलमान राजनयिक उन लोगों को जिनसे यूरोप में मिलते थे, काफ़िर ही कहते थे । अलबत्ता 19वीं सदी में सरकारी दस्तावेज़ों और ऐतिहासिक रचनाओं में इसका प्रयोग समाप्त हो गया । यह और बात है कि आम बोल-चाल में यह बहुत बाद तक जारी रहा ।

चूंकि मुसलमानों के चिंतन और व्यवहार में धर्म का बहुत अधिक प्रभाव था, इसलिए यह आशा की जा सकती है कि उन्होंने पश्चिमी दुनिया के धर्म पर भी ध्यान दिया होगा, लेकिन ऐसा नहीं हुआ । मुसलमान राजनयिक और इतिहासकार धार्मिक मामलों के बहुत हवाले देते हैं, लेकिन उन्होंने यूरोपीय ईसाइयत से कुछ अधिक दिलचस्पी नहीं जतायी ।

इस सिलसिले में वे बहुत ही कम जानकारियां उपलब्ध कराते हैं । बहरहाल ईसाइयत उनके लिए कोई नयी चीज़ नहीं थी । यह धर्म इस्लाम का सर्वकालीन था और उस समय भी ईसाई निवासी मुसलमान देशों में एक बड़ी और उल्लेखनीय अल्पसंख्यक थे, लेकिन मुसलमानों की दृष्टि में ईसाई धर्म की सत्यता समाप्त हो चुकी थी, क्योंकि अब इस्लाम आ गया था ।

मध्यकाल में मुसलमान आलिमों के पास ईसाई धारणाओं पर अरबी भाषा में काफ़ी रचनाएं मौजूद थीं, जिनसे यह संभव था कि ईसाई धर्म का प्रारंभिक इतिहास, उसके विभिन्न वैचारिक केन्द्र और फ़िरक़ों के बारे में काफ़ी जानकारियां प्राप्त की जा सकें । उन्होंने पहले यह ज्ञान प्राप्त भी किया । लेकिन यह दिलचस्पी अधिक समय तक बनी नहीं रह सकी । उस्मानी आलिम ईसाई धारणाओं पर जो वाद-विवाद करते थे, उनकी निर्भरता प्राचीन अरब मुसलमानों की कृतियों पर ही होती थी । इस विषय पर जो नये विचार और नयी टिप्पणियां एवं व्याख्याएं सामने आ रही थीं, वे उनके सामने नहीं थीं ।

अतएव कातिब चलबी ने 1655 ई॰ में यूरोप पर जो लेख लिखा, उसमें ईसाई धर्म के बारे में विशेष रूप से मध्यकाल की व्याख्याओं को ही आधार बनाया । उसने अपने पाठकों को बताया कि इस धर्म का आधार चार इंजीलें हैं । यह संख्या उसने ठीक बतायी है । फिर उसने कहा कि इसका आधार पांच उसूलों पर है अर्थात बपतिस्मा, तश्लीस, ईसा के शरीर में खुदा का प्रवेश, ईश्वर का परमप्रसाद और गुनाहों की स्वीकारोक्ति । उसने इनमें से एक-एक अलग-अलग लिखा ।

तश्लीस (त्रयवाद) के संदर्भ में वह आरंभिक कलीसाओं के मतभेद पर बहस भी करता है । इस विषय पर ईसाइयों

की प्राचीन अरबी रचनाओं में काफ़ी सामग्री मिल जाती है । वह नीक्यान धारणा पर एक अरबी रचना का हवाला देता है और लिखता है कि ईसाई तीन बड़े फ़िरक़ों (जिन्हें वह धर्मों के रूप में देखता है) में विभक्त हैं । ये तीन ध र्म हैं । याक़ूबी अर्थात शामी (सीरियाई), कलीसा के मानने वाले देशीय और नस्तूरी । कातिब चलबी इन तीनों धारणाओं में हज़रत ईसा (अलैहि॰) के इन्सानी और उनके शरीर में ईश्वर के प्रवेश की विशेषता के संबंध में व्याख्या करता है । याक़ूबी फ़िरक़े से उसका तात्पर्य शाम के जैकब ब्रादेस के मानने वालों से है । संभवत: वह इसका अभिप्राय वे सभी धारणाएं लेता है जो हज़रत ईसा (अलैहि॰) और ख़ुदा को एक मानते हैं, क्योंकि अधिसंख्या याक़ूबी आर्मेनियाई थे । देशीय धारणा के लोग वे थे जो आर्थोडक्स कहलाते थे और वे रोम अर्थात रोमा और यूनान के मत से संबंध रखते हैं ।

कातिब चलबी के काल तक जैकब ब्रादेस और नस्तोवी कलीसा (चर्च) प्राय: समाप्त हो चुके थे और उनका कोई महत्व नहीं था । आर्मेनियाई और कितबी ईसाई मुसलमानों के अधीन आ चुके थे । ईसाई धर्म के भीतर बाद में कई फ़िरक़े (संप्रदाय) पैदा हुए जैसे देशीय कलीसा, यूनानी आर्थोडक्स पूर्व में और रोमन कैथोलिक पश्चिम में, विभक्त हुआ या रोमन कैथोलिक धर्म में प्रोटेस्टेंट के आने के बाद उसका दो टुकड़े होना ऐसे धार्मिक विवाद थे जिनसे कातिब चलबी को अवगत होना चाहिए था, लेकिन वह इन नये फ़िरक़ों और नयी बहसों के बजाय पुरानी बहसों में ही उलझा हुआ है । वह ऐसा क्यों करता है ? इस बारे में वह कुछ नहीं बताता ।

फिर भी सभी उस्मानी इतिहासकार कैथोलिक और प्रोटेस्टेंट विवाद से बेपरवाह नहीं थे । एक उस्मानी इतिहासकार यूरोप में इस धार्मिक लड़ाई की व्याख्या भी प्रस्तुत करता है । वह कहता है–एक दिन आस्ट्रिया का सम्राट शोक में डूबा बैठा था और उसकी आंखों में आंसू थे । उसकी महारानी ने, जो हस्पानिया के सम्राट की पुत्री थी, पूछा कि आपको क्या परेशानी है ? सम्राट ने कहा, मेरी परेशानी का कारण मेरे और उस्मानी सुल्तान के बीच विद्यमान अन्तर है ।

उस्मानी सुल्तान अपने राज्यों के हाकिमों को जब भी बुलाता है कि वे अपनी सेनाओं के साथ आएं और सुल्तान के सैनिकों की सहायता करें तो वे तुरंत आ जाते हैं और अपनी सेवाएं सुल्तान को प्रस्तुत कर देते हैं, लेकिन आस्ट्रिया का सम्राट हंगरी के हाकिम को ऐसा ही संदेश भेजता है तो उन्हें एहसास तक नहीं होता कि सम्राट का आज्ञापालन उनका कर्तव्य है । इस पर महारानी ने उत्तर दिया, "उस्मानी सम्राट के जान न्योछावर करने वाले उसके अपने धर्म से संबंध रखते हैं, इसलिए उसके आदेश का अनुपालन करते हैं ।

हंगरी के हाकिम आपका आदेश इसलिए नहीं मानते कि वे दूसरी धारणा के अनुयायी हैं ।" सम्राट इस तर्क से बहुत प्रभावित हुआ और तुरंत अपने प्रतिनिधि एवं पादरी हंगरी के हाकिमों के पास भेजे और आदेश दिया कि "अपनी मौलिक धारणा पर वापस आ जाओ ।" कुछ लोगों ने ऐसा किया और कुछ ने इन्कार कर दिया । इससे बहुत उपद्रव पैदा हुआ और विद्रोह के स्वर उठे । "और इसीलिए अल्लाह तआला ने जो किसी भी नश्वर इन्सान से ग़ाफ़िल नहीं चाहे वह क़ब्र में ही क्यों न हो उसके विरुद्ध इस्लाम के सैनिक भेजे ।

औलिया चलबी जो इससे कुछ अवधि पहले हंगरी और आस्ट्रिया गया था । वह इन दोनों फ़िरक़ों के ख़िलाफ़ बयान करता है और कहता है कि हंगरी वाले लूथर को मानते और आस्ट्रिया के निवासी पोप के वफ़ादार है एवं इसीलिए वे एक-दूसरे के जानी दुश्मन हैं, लेकिन मुसलमानों के विरुद्ध वे सब एक हैं, क्योंकि औलिया चलबी के कथनानुसार "वे सभी सहधर्मी है ।"

प्रोटेस्टेंट और कैथोलिक ईसाइयों की लड़ाई और इससे इस्लाम के लिए संभावित फ़ायदों के बारे में आलिमों के मुक़ाबले में उस्मानी सरकारी हाकिम अधिक बाख़बर थे । इसका एक कारण तो यह था कि हस्पानिया से आने वाले मुसलमान मुहाजिर (अल्लाह की राह में घर-बार छोड़ने वाले) इस बारे में जानकारियां ला रहे थे ।

दूसरा कारण यह था कि प्रोटेस्टेंट प्रतिनिधि व्यापार आदि में उस्मानियों से अधिक रियायतें प्राप्त करने के लिए यह दावा कर रहे थे कि उनका धर्म इस्लाम के अधिक निकट है, क्योंकि वे चित्रों की पूजा करने वालों और एक से अधिक ख़ुदाओं को मानने वालों के मुक़ाबले में एक ईश्वर के अधिक क़ायल हैं । उस्मानी यद्यपि इन दावों को अधिक महत्व नहीं देते थे, लेकिन कभी-कभी उनकी

परीक्षा अवश्य लिया करते थे ।

1568-1570 ई॰ में जब मोरयस्को (हस्पानिया में उत्तरी अफ़्रीक़ा के निवासियों की नस्ल) ने हस्पानिया में बग़ावत की तो तुर्की के सुल्तान ने अपना विशेष प्रतिनिधि उन्हें यह बताने भेजा कि लूथर के अनुयायियों ने "उन लोगों के ख़िलाफ़ जिहाद कर रखा है जो यूरोप और उसके विचार-केन्द्र के गुलाम हैं ।" बाग़ियों को परामर्श दिया गया कि वे लूथर के अनुपालकों से गुप्त संपर्क रखें और जब वे पोप के ख़िलाफ़ युद्ध करें तो कैथोलिक क्षेत्रों और उनके सिपाहियों को उनके अपने घरों में विनष्ट कर डालें । सलीम सानी ने तो यहां तक किया कि अपना गुप्तचर हस्पानवी हालैंड में प्रोटेस्टेंट रहनुमाओं से भेंट करने भेजा ।

एक उस्मानी राजकीय पत्र में लूथरी ईसाइयों के साथ साझा हितों का उल्लेख भी किया गया और कहा गया कि वे भी कैथोलिक ईसाइयों के विरुद्ध लड़ रहे हैं और मूर्तिपूजा को वे भी रद्द करते हैं । "चूंकि आप लोगों ने पोपवाद के विरुद्ध अपनी तलवार उठायी है और चूंकि आप स्थायी रूप से उनकी हत्या कर रहे हैं, इसलिए हमारा राजकीय अनुग्रह और कृपा प्रत्येक दृष्टि से आपके क्षेत्र की ओर है ।

जैसा कि आप अपने तौर पर मूर्तियों की पूजा नहीं करते, आपने कलीसाओं से मूर्ति, चित्र और घंटियां निकाल बाहर की हैं और यह कहकर अपने ईमान को प्रकट किया है कि अल्लाह एक है और हज़रत ईसा (अलैहि॰) उसके रसूल और बन्दे हैं, इसलिए आपके दिल और आपकी आत्मा सच्ची धारणा की खोज में हैं, लेकिन ईमान से परे । वह व्यक्ति जिसे पापा कहा जाता है अपने स्रष्टा को अकेला नहीं मानता, हज़रत ईसा के शरीर में खुदा के प्रवेश जैसी विशेषता वाला ठहराता है और उन मूर्तियों एवं चित्रों की पूजा करता है जो उसने अपने हाथों से बनायी हैं ।

इस प्रकार वह अल्लाह के एकत्व पर संदेह करता है और कितने ही अल्लाह के बन्दों को गुमराह करता है ।" बाद में महारानी ऐलिज़ाबेथ के नाम उस्मानीं पत्र में प्रोटेस्टेंट ईसाइयों के साथ इसी तरह की दिलचस्पी जतायी गयी है ।

पोपवाद की संस्था मुसलमानों की नज़रों से छिपा हुआ नहीं था और बहुत से मुसलमान लेखक रोम के 'शासक' की अजीबोग़रीब परिस्थिति पर टिप्पणी कर रहे थे कि वह पुरोहित सम्राट है । उसे वे 'अलबाब' अर्थात पोप कहते थे । इस्लाम में न पोपवाद जैसी कोई चीज़ है और न ही चर्च की श्रेणी व्यवस्था और एक सुव्यवस्थित ईसाई कलीसा मुसलमानों की समझ से परे था । केवल उस्मानी काल में पूर्वी कलीसा की श्रेणी व्यवस्था के परिचय ने इस व्यवस्था से मुसलमानों को अवगत कराया । पहला व्यक्ति जिसने पोप का उल्लेख किया है वह अरब युद्धबंदी हारून इब्न यह्या था जो 886 में रोम गया था । उसने लिखा कि "रोम एक नगर है, जिस पर एक सम्राट शासन करता है जिसे 'अलबाब' अर्थात पोप कहा जाता है ।" वह इस उपाधि का स्पष्टीकरण नहीं करता और लगता है कि उसने इसे सम्राट का नाम ही समझा है ।

याक़ूत के भौगोलिक शब्दकोष में रोम के बारे में विस्तार से सामग्री विद्यमान है, "वर्तमान काल में रोम फ़िरंगियों के हाथों में है और उसका सम्राट शाह अलमान कहलाता है । उसमें पोप रहता है, फ़िरंगी जिसका आज्ञापालन करते हैं और जो उनके लिए इमाम (रहनुमा) की हैसियत रखता है । जो भी उसकी अवज्ञा करता है, उसे बाग़ी, गुनहगार कहा जाता है और देश-निर्वासन और मौत की सज़ा का पात्र ठहरा दिया जाता है । वह उनके लिए आदेश जारी करता है, उनकी स्त्रियों से संबंधित, शरीर की पवित्रता से संबंधित एवं खाने-पीने से संबंधित आदेश देता है और कोई उसके आदेशों का उल्लंघन नहीं करता ।

इस विचित्र संस्था के बारे में उड़ती-उड़ती ख़बरें इस्लामी दुनिया के पूर्वी भागों में पहुंच गयी थीं । 13वीं सदी का ईरानी कवि ख़ाक़ानी एक व्यंग्यपूर्ण प्रशंसा-काव्य में बतरीक़ ज़मानी बाब बतरूस का नाम लेता है । मालूम होता है कि उसने पोप को पूर्वी कलीसा के लाट पादरी से गड्मड् कर दिया है । बाद में आने वाले उस्मानी भी यह ग़लती करते रहे ।

पोप के अधिकारों के बारे में जो आरंभिक रचनाएं सामने आती हैं, उनमें शाम (सीरिया) के इतिहासकार इब्न वासिफ़ की एक रचना है जो 1261 ई॰ राजनयिक प्रतिनिधि की हैसियत से दक्षिणी इटली गया था । वह पोप के बारे में लिखता है, "वह उनके नज़दीक हज़रत ईसा का ख़लीफ़ा और नायब है, जिसे नगर के चतुर्दिक सत्ता-आदेश जारी करने के अधिकार प्राप्त हैं ।" उसके बाद भी बहुत-से लेखकों ने ऐसी ही टिप्पणियां कीं । उनमें तुर्की का एक लेखक है जिसने किताब 'मुहिमात जम' लिखी, इससे भी

अधिक आश्चर्यजनक बातें लिखता है । वह कहता है कि ईसाइयों का मानना है कि पोप गुनाहों को क्षमा करता है ।

पोप का यह अधिकार ऐसा था जिस पर इस्लामी दुनिया से आने वाला प्रत्येक व्यक्ति हैरत ज़ाहिर करता था । मुसलमान धार्मिक सत्ता-स्वरूप से परिचित थे, लेकिन इस्लाम ने मानवजाति में आध्यात्मिक और धार्मिक उच्च सत्ता के बीच कभी भेद नहीं किया और उनकी दृष्टि में पोप के साथ जो अधिकार संबंध किये जाते थे वह केवल ईश्वर को प्राप्त थे । इब्न वासिफ़ लिखता है, ''वही (पोप ही) सम्राटों की ताजपोशी करता है और उन्हें सिंहासनारूढ़ करता है एवं उनकी शरीअत में उसको माध्यम बनाए बिना काम नहीं हो सकता ।'' वह राहिब (ईसाई संत) है और जब उसकी मृत्यु होती है तो उसी राहिबों जैसे अधिकार वाला व्यक्ति उसका स्थान लेता है ।''

क़लक़संदी दरबारी इस्तेमाल के लिए जो आदेश-पत्र लिखता है, वह उसमें पोप के बारे में ये शब्द लिखता है–''पोप को संबोधित करने के आदाब । वह देशवासियों का सर्वोच्च नेता है जो उनके बीच ख़लीफ़ा का दर्जा रखता है ।

हैरत व आश्चर्य की बात है ? 'शक़ीफ़' (दरबारी शिष्टाचार की एक पुरानी पुस्तक) का लेखक उसे तातारियों के 'ख़ाने आज़म' का दर्जा देता है, हालांकि वस्तुस्थिति यह है कि 'ख़ान' तातारियों में महान सम्राट का दर्जा रखता था, पोप ऐसा नहीं है, उसके अधिकार केवल धार्मिक मामलों तक सीमित हैं, जिनमें यह आदेश देने का अधिकार भी है कि किस बात की अनुमति है और क्या चीज़ निषिद्ध है ।

उसे संबोधित करने के आदाब (शिष्टाचार) ये हैं– अल्लाह तआला आपकी रोबीली मुख-कान्ति में अभिवृद्धि करे, आदर-आश्रय, पवित्र, आध्यात्मिक गुरु, रोम के उपस्थित पोप, ईसाई क़ौम के महान व्यक्तित्व, हज़रत ईसा की बिरादरी के लिए आदर्श, ईसाई दुनिया के सम्राटों का सिंहासनारोहण कराने वाला...पल्लों और नहरों का रक्षक... पादरियों, बिशपों और राहिबों की शरण स्थली, इंजीलों का अनुपालक, वह जो अपने अनुयायियों को आदेश देता है कि क्या चीज़ निषिद्ध है और क्या नहीं, और सम्राट का मित्र ।''

क़लक़संदी ने 'शक़ीफ़' के लेखक का निम्नलिखित उद्धरण नक़ल किया है–

''सबने दस्तावेज़ों में यही पाया, लेकिन मेरे ज़माने में उसे कुछ भी नहीं लिखा गया और मैं नहीं जानता कि इससे पहले किन चीज़ों पर उसे कुछ लिखा गया था ।''

पोपवाद के बारे में रशीदुद्दीन की पुस्तक 'तारीख़े आलम' (विश्व इतिहास) में भी हवाला देता है । यह पुस्तक 14वीं सदी के प्रारंभिक काल में ईरान में लिखी गयी थी और जैसा कि बताया जा चुका है कि यह पोप के एक प्रतिनिधि के बयान और पोप संबंधी सामग्रियों पर निर्भर है । राजकुमार जिसके रोम के पोप से व्यक्तिगत संबंध थे । उसकी जीवनी का लेखक उन आचारों और रस्मों का बहुत ही गड़बड़ी पैदा करने वाला चित्रण प्रस्तुत करता है, जो नया पोप चुनते समय अदा की जाती थीं । इस अवसर पर हंगामे वाले दृश्य सामने आते थे ।

कातिब चलबी यूरोप पर अपनी पुस्तिका में पोप पर भी एक अध्याय लिखता है, जिसमें उस समय तक जितने पोप निर्वाचित हुए थे उनकी और उनके निर्वाचन की तिथियों की सूची प्रस्तुत करता है और यह भी लिखता है कि कौन कितनी अवधि तक पोप रहा । प्रारंभ वह पीटर से करता है और पाल तृतीय पर समाप्त करता है जिसके बारे में कहता है कि वह 1535 ई॰ में पोप बना । चूंकि कातिब चलबी की रचना में पाल तृतीय की मृत्यु का उल्लेख नहीं है जो 1549 ई॰ में हुई, इसी प्रकार उसके उत्तराधिकारियों की मृत्यु का हवाला भी नहीं है, इसलिए अंदाज़ा है कि कातिब की जानकारियों का माध्यम जो भी था वह एक सौ वर्ष पुराना अवश्य था ।

दूसरे बहुत-से मामलों की भांति इस मामले में भी मुसलमान लेखक नवीनतम जानकारियां प्राप्त करना आवश्यक नहीं समझते थे या फिर उन्हें इसका अवसर नहीं मिलता था । चूंकि ईसाई धर्म के बारे में कातिब चलबी की जानकारियां एक हज़ार वर्ष पुरानी हैं, इसलिए कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि उसने रोम के पोप की जो सूची बनायी है, वह एक सौ वर्ष से भी अधिक पुरानी है ।

पोपवाद की अधिक अच्छी व्याख्या बल्कि यूरोपीय ईसाइयत का ही अधिक विस्तार मराकश के राजदूत अल-वज़ीरुल ग़सानी ने प्रस्तुत किया है । वह 17वीं सदी के अंत में हस्पानिया गया था । वह केवल पोप के बारे में ही नहीं बल्कि पोपवाद की पूरी संस्था, कार्डीनल की भूमिका यहां तक कि इस कार्यशैली के बारे में भी बहुत कुछ बताया है जिससे पोप का निर्वाचन होता था ।

मालूम होता है कि पोपवाद की भूमिका से ही वह खुश नहीं है, अतएव जब भी वह पोप का उल्लेख करता है, उसके प्रति अपमानजनक शब्दों का अवश्य प्रयुक्त करता है । ग़सानी हस्पानिया की अदालती पकड़, यहूदियों पर जुल्म, धर्म-सुधार का इतिहास और उसके बाद ईसाई दुनिया में उभरने वाले धार्मिक विभेदों जैसे मामलों पर अपने विचार प्रकट करता है । वह इंग्लिस्तान में धर्म-सुधार का हवाला देता है और उसे हेनरी अष्टम की दाम्पत्य-समस्याओं का विवाद क़रार देता है, जो निश्चय ही उसे उसके हस्पानवी मेज़बानों ने बताया होगा ।

वह हस्पानिया में प्रचलित कैथोलिक धर्म का उल्लेख तनिक विस्तार से करता है और मसीही कुंवारियों (Nuns) राहिबों और गुनाह की स्वीकारोक्ति की रस्म का भी उल्लेख करता है और कहता है कि इससे बड़ी गुमराही फैल रही है । उसके बाद के मराकशी राजदूतों ने भी इसी की मिसाल पर अमल किया और उन्होंने भी कलीसा और उसकी संस्थाओं से बहस की है । उनमें से अधिकतर ने उस अदालती पकड़ पर अधिक प्रकाश डाला है जो हस्पानिया में मुसलमानों और यहूदियों पर जुल्म ढाने के लिए किया जाता था और जिसके द्वारा मुसलमानों को जबरन ईसाई बनाया जाता था ।

एक और विषय जो यूरोप आने वाले मुसलमानों के ध्यान का केन्द्र बना, वह स्वयं इस्लाम या उससे संबंधित मामले थे । जिन देशों पर ईसाइयों ने दो बार क़ब्ज़ा कर लिया था, उनमें से कुछ देशों में कुछ मुसलमान शेष रह गये थे । ये लोग स्वाभाविक रूप से ध्यान का केन्द्र बने । इब्न वासिल यह जानना चाहता था कि दक्षिणी इटली में टारमन शासकों के अधीन जो मुसलमान हैं उनका क्या हाल है ?

"जिस स्थान पर मैं ठहरा था उसके निकट ही एक शहर था जिसका नाम था लोसीरा । उसकी सारी आबादी सिसली से आये मुसलमानों की थी । वहां जुमा की नमाज़ अदा की जाती थी और मुसलमान खुलेआम इबादत करते थे । यह अमल मैन्फ्रेड के पिता सम्राट (फ्रेडरिक द्वितीय) के काल से जारी था । मैन्फ्रेड ने वहां एक साइंस भवन का निर्माण प्रारंभ किया है, जहां काल्पनिक विद्याओं की सभी शाखाओं को इकट्ठा किया जाएगा । मैंने देखा कि उसके अधिकतर नागरिक मुसलमान हैं जो उसके निजी मामलों की देखभाल भी करते हैं और उसके कैंप में खुलेआम अज़ान दी जाती है और नमाज़ पढ़ी जाती है ।"

इब्न वासिल लिखता है कि पोप ने मैन्फ्रेड को धर्म से बाहर कर दिया था क्योंकि वह मुसलमानों के साथ सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करता था ।

आख़िर मुसलमान सिसली और इटली के अस्ल भू-भाग से निकाल ही दिये गये । 11 फ़रवरी 1502 ई० को जो आदेश जारी किया गया उसमें कास्तील राज्य के मुसलमानों से कहा गया था कि वे ईसाई हो जाएं या देश छोड़ दें या फिर मृत्यु स्वीकार कर लें । हस्पानिया के सभी देशों में भी यही आदेश जारी किया गया । फिर भी इसके बाद भी चोरी-छिपे रहने वाले मुसलमानों की एक छोटी-सी आबादी वहां रही । इन मुसलमानों को 'मोरेस्को' कहा जाता था । यह आबादी भी अधिक समय वहां नहीं रह सकी । लेकिन इस अवधि में उसने कई बग़ावतें भी कीं यहां तक कि इन मुसलमानों ने एक संक्षिप्त-सी अवधि के लिए ग़रनाता पर क़ब्ज़ा भी कर लिया था ।

हस्पानिया के मुसलमानों ने अपनी अंतिम हार से पहले भी और बाद में भी उस्मानियों से सहायता मांगी थी, लेकिन उसका कोई नतीजा नहीं निकला था, हालांकि उस समय उस्मानी साम्राज्य बहुत बड़ी शक्ति था । अलबत्ता उस्मानियों ने 'मोरेस्को' मुसलमानों के साथ बातचीत की थी और विभिन्न माध्यमों से उन्हें परामर्श देने का और कभी-कभी सहायता का प्रयास भी किया था। गुप्त रूप से एक प्रतिनिधि भेजा गया था ताकि हस्पानिया उत्तरी अफ़्रीक़ा और इस्तंबूल के बीच संपर्क स्थापित हो सके और आवश्यक सूचनाएं पहुंचती रहें । लेकिन ये सारे प्रयास व्यर्थ थे, क्योंकि अंततः 'मोरेस्को' भी अपने पहले के मुसलमानों की भांति क्षेत्र छोड़ने पर विवश हो गये ।

मध्य यूरोप से उस्मानियों के पराजय के पश्चात भी इसी प्रकार की परिस्थिति उत्पन्न हुई थी । अधिकतर स्थानों से जहां ईसाइयों ने पुनः क़ब्ज़ा किया, मुसलमानों को वहां से निकल जाने पर विवश होना पड़ा । अलबत्ता रूसी क्षेत्र के तातरिस्तान बसे रहे । यही एक ईसाई क्षेत्र था, जहां 19वीं सदी तक मुसलमानों की बड़ी आबादी रह गयी थी । शेष सभी क्षेत्रों में अतीत की इस्लामी यादगारें और उनकी पुरानी यादें ही बाक़ी रह गयी थीं । स्पेन में तैनात मराकशी राजनय-प्रतिनिधि और दक्षिणी यूरोप में उस्मानी प्रतिनिधि उन क्षेत्रों से गुज़रते थे जहां कभी मुसलमानों की हुकूमत रह

चुकी थी ।

जिस प्रकार पूरब में यूरोपीय यात्री प्राचीन ईसाई अतीत के चिन्हों को खोज करते थे, वैसे ही यूरोप जाने वाले मुसलमान भी वहां इस्लामी चिन्ह देखते और मुसलमानों के अतीत के चिन्हों को देखकर भाव प्रवण हो जाते । ये चिन्ह उन्हें अपने अतीत की याद दिलाते । ये मुसलमान प्राचीन स्मृति चिन्हों की खोज करते, बल्कि यह भी मालूम करते कि वहां कुछ बचे-खुचे मुसलमान शेष हैं या नहीं ।

अतएव मराकशी राजदूत अल-ग़ज़ाल लिखता है कि हस्पानिया में एक स्थान वल फ्रांका पीलाश्यूज़ के निवासी उन्दुलुसी मुसलमानों के परिवार के हैं । उनकी रगों में अरब ख़ून है । उनकी जीवन-शैली विदेशियों (अजमियों) से भिन्न है । मुसलमानों से उनके श्रम, हमारे साथ मिलने-जुलने की इच्छा और हमारे प्रस्थान के समय उनका शोकाकुल होना सिद्ध करता है कि ये लोग उन्दुलुसी मुसलमानों के परिवार के हैं । लेकिन उन्हें इन्कारियों के बीच रहते एक ज़माना हो चुका है, खुदा हमें अपनी पनाह में रखे ।'' अल-ग़ज़ाल यह भी दावा करता है कि उसने एक छिपे हुए मुसलमान को खोजा जो अपनी लड़की के साथ उसके पास आया । उसका नाम ब्लास्को था । लड़की की शक्ल अरबों जैसी थीं । वह व्यक्ति गुप्त संकेत कर रहा था जिससे प्रकट होता था कि वह वास्तव में छिपा हुआ मुसलमान है ।

उस्मानी राजनय प्रतिनिधि भी हंगरी और यहां तक कि दक्षिणी पोलैंड के क्षेत्रों से गुज़रते तो अपनी पहले की प्रजा की आंखों में अपने लिए सहानुभूति के भाव देखते और महसूस करते कि उस्मानी सल्तनत से वे प्रेम करते हैं । अतएव अज़्मी आफ़ंदी 1790 ई० में जब हंगरी से गुज़रा तो उसने देखा कि वहां के लोग उसकी ख़ूब आवभगत कर रहे हैं और जिस उद्देश्य से वो वहां गया था उस उद्देश्य से भी सहानुभूति प्रकट कर रहे हैं ।

दिलचस्प बात यह है कि इसी प्रकार के मनोभाव 18वीं सदी में भी मराकशी राजदूत ने महसूस किये । कुछ राजनयिक यह विश्वास रखते थे कि स्पेन के निवासी केवल ऊपर से ही ईसाई हैं उनके भीतर अभी तक मुसलमानों के साथ निष्ठाभाव शेष है जो किसी समय भी प्रकट हो सकती है ।

यूरोप जाने वाले मुसलमान यात्री यह देखकर सख़्त परेशान हो जाते थे कि वहां मुसलमानों के चिन्हों के रूप बिगाड़ दिये गये हैं, बल्कि उन्हें ईसाई रूप दे दिया गया है । मराकशी राजदूत अल-ग़ज़ाल ने एक स्थान पर पहुंच कर देखा कि एक पत्थर पर जो अरबी में कुछ खुदा है वह पत्थर उलटा रखा हुआ है । उसने वहां लोगों से कहा कि उसे सीधा करो और खुले स्थान पर रखो ताकि वह पढ़ा जा सके । वह कहता है कि क़रतबा की मस्जिद में क़ुरआन की आयतें उत्कीर्ण किया हुआ एक पत्थर सीढ़ियों पर रखा था जिस पर से चलकर लोग ऊपर जाते थे । उसने आग्रह करके उसे वहां से हटाया ।

मस्जिद के मीनार तो मुसलमानों के लिए और भी आघात पहुंचाने वाले थे, क्योंकि उन्हें 'लाइट हाउस' के रूप में प्रयुक्त किया जा रहा था । सर्बिया में ऐसी ही एक मीनार को घंटाघर बना दिया गया था । ईसाइयों ने मुसलमानों के स्नानघरों को भी नहीं बख़्शा था । बलग्राद पर आस्ट्रिया के क़ब्ज़े के फ़ौरन बाद एक तुर्क यात्री ने देखा कि एक स्नानघर को आवास के रूप में प्रयुक्त किंया जा रहा है । यह देखकर वह बहुत विषाद में पड़ गया, इससे इन्कारियों की ग़लत आदतों का पता चला ।

मुसलमानों की रचनाओं में यह एहसास हर जगह मौजूद है कि पूर्वी यूरोप हो या पश्चिमी यूरोप, दोनों ही मुसलमानों के क्षेत्र हैं जिन पर ईसाइयों ने अवैध रूप से क़ब्ज़ा कर लिया है और आज नहीं तो कल ये पुनः मुसलमानों को मिल जाएंगे, यहां तक कि जिन क्षेत्रों पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा बहुत ही कम अवधि के लिए रहा उन्हें भी वे अपना ही समझते थे । अतएव 1763 ई० में रज़्मी आफ़ंदी पोलैंड के क़िला कामीनैत गया तो उसकी मीनार देखकर उसका दिल भर आया । उन मीनारों पर क़ुरआन की आयतें लिखी थीं और क़िले के निर्माण की तिथि अरबी भाषा में लिखी थी । यह क़िला 1672 ई० से 1699 ई० तक तुर्कियों के क़ब्ज़े में रहा था ।

वह लिखता है, ''मैंने वह रचना देखी तो मेरे दिल से यह दुआ (प्रार्थना) निकली, ऐ गौरव के स्वामी अल्लाह ! ये स्थान शीघ्र ही मुसलमानों को प्रदान कर दे, ताकि इन मीनारों से सत्य और सच्चाई की आवाज़ बुलंद होने लगे ।'' 1799 ई० में भी स्पेन में तैनात मराकशी राजदूत मुहम्मद इब्न उस्मान अल मक्नासी जब भी किसी स्थान का नाम लेता है तो उसके साथ यह अवश्य लिखता है, ''अल्लाह तआला! इसे इस्लाम के लिए बहाल करे ।''

समग्र रूप से मुसलमान ईसाइयत को इस्लाम के लिए धार्मिक रूप से ख़तरा नहीं समझते थे, यहां तक कि जब ईसाई सेनाएं स्पेन में और बाद में दक्षिणी यूरोप में एक के बाद दूसरा क्षेत्र जीतती जा रही थीं तो इसे राजनैतिक और सैनिक ख़तरा ही समझा जा रहा था । इसे इस्लाम धर्म के लिए कोई ख़तरा नहीं महसूस किया जा रहा था । उनकी दृष्टि में यह ख़याल अत्यंत मूर्खतापूर्ण था कि मुसलमान इस्लाम से पहले के किसी धर्म को स्वीकार कर लेंगे । और यह वास्तविकता भी है कि अपनी इच्छा से ईसाई धर्म स्वीकार करने वाले मुसलमान बहुत ही कम थे ।

इस्लामी दुनिया में इस्लाम से फिर जाना गंभीर व जघन्य अपराध है। ईसाई क्षेत्रों में भी मुसलमानों से कहा जाता था कि वे वहां से निकल जाएं और ईसाई धर्म स्वीकार न करें । जहां मुसलमानों को ज़बरदस्ती ईसाई बना लिया गया था, वहां समझा जाता था कि इन लोगों ने दिल से यह धर्म नहीं स्वीकार किया ।

मुसलमानों की धारणाओं को पश्चिम से जो पहला ख़तरा महसूस हुआ वह फ्रांसीसी क्रान्ति से था । उस समय पहली बार जिस दुष्प्रचार का रुख़ मुसलमानों की ओर किया गया वह किसी प्राचीन धर्म दुष्प्रचार नहीं था बल्कि एक नये दृष्टिकोण का प्रचार था । इस ख़तरे से आगाही के चिन्ह उस स्मारिका में नज़र आते हैं जो उस्मानी चीफ़ सेक्रेट्री ने 1798 ई॰ वसंत ऋतु में तैयार की थी और जिसमें राज्य के उच्च दरबार से मार्गदर्शन चाहा गया था ।

फ़्रांस की हाल की घटनाओं के कारणों पर प्रकाश डालते हुए उसने कहा, ''प्रसिद्ध नास्तिक वाल्टेयर, रूसो और उनके जैसे दूसरे भौतिकवादियों ने ऐसी पुस्तकें लिखीं और प्रकाशित करायी हैं जिनमें नऊज़ बिल्लाह (अल्लाह की पनाह) सच्चे पैग़म्बरों और प्राचीन सम्राटों का अवमान किया गया है और कहा गया है कि सभी धर्मों को समाप्त कर दिया जाए और उन पर प्रतिबंध लगा दिया जाए । इसके अतिरिक्त मानव समानता और लोकतंत्र की प्रशंसा की गयी है । ये सभी बातें इतनी सुगम शैली में लिखी गयी हैं कि सबकी समझ में आ जाएं ।

मिस्र पर फ़्रांसीसी आक्रमण ने इस नये संकट को घर के द्वार तक पहुंचा दिया और उस्मानी साम्राज्य (सल्तनत) को विवश किया कि वह वापसी मुहिम चलाए जिसे आजकल मनोवैज्ञानिक युद्ध कहा जाता है । अतएव अरबी और तुर्की में जो आदेश जारी किया गया उसमें सुल्तान की मुसलमान प्रजा को क्रान्तिकारियों की गुमराहियों से इस प्रकार अवगत कराया गया–

''फ़्रांसीसी क़ौम (अल्लाह उनकी बस्तियां नष्ट करे और उनके ध्वजों का अवमान हो क्योंकि वह ज़ालिम काफ़िर और चरित्रहीन है ।), धरती व आकाशों के स्रष्टा के एक होने को नहीं मानते और न न्याय दिवस में सिफ़ारिश करने वाले के सन्देश पर ईमान रखती है, बल्कि उसने सभी धर्मों को छोड़ दिया है और पारलौकिक जीवन (आख़िरत) एवं उसके पुरस्कार व दंड की भी इन्कारी है । वह न्याय दिवस को नहीं मानती और दावा करती है कि केवल दिन व रात का गमनागमन ही हमें विनष्ट करता है और यह कि यहां और कुछ नहीं है सिवाय मां के गर्भाशय के जो हमें बाहर निकालता है और सिवाय धरती के जो हमें हड़प कर लेगी और इसके आगे न्याय दिवस नहीं है और कोई पूछताछ नहीं है, कोई परीक्षा और यातना नहीं है, कोई प्रश्न, कोई उत्तर नहीं है ।

इस क़ौम के लोग कहते हैं कि पैग़म्बर जो पुस्तकें लाये वे ग़लत हैं और यह कि क़ुरआन, तौरात और इंजील सिवाय झूठ और व्यर्थ बातों के और कुछ नहीं है और यह कि जिन लोगों ने पैग़म्बर होने का दावा किया...उन्होंने जाहिल (अज्ञानी) लोगों से झूठ बोला...यह कि सभी लोग बराबर हैं और सब इन्सान होने के कारण एक जैसे हैं । किसी को किसी दूसरे पर योग्यता के आधार पर श्रेष्ठता प्राप्त नहीं है और प्रत्येक व्यक्ति अपनी आत्मा का स्वामी है और इस जीवन में अपनी आजीविका का स्वयं अर्जन करता है ।

उन्होंने इस मूर्खतापूर्ण धारणा और अशिष्ट व ओछे विचार के साथ नये सिद्धांत और नये क़ानून संपादित किये हैं और शैतान ने उनके कामों में जो फूंकता है उसे उन्होंने लागू किया है और धर्म का आधार नष्ट कर दिया है। और उन्होंने ग़लत चीज़ें अपने लिए विहित (हलाल) कर लिया है जो उनकी मनेच्छा चाहती है और उन्होंने जनसामान्य को बहका लिया है जो पागल हो गये हैं । उन्होंने धर्मों में बग़ावत के बीज बो दिये हैं और सम्राटों एवं राज्यों के बीच दुश्मनी पैदा कर दी है ।''

आदेश जारी करने वालों ने अपने पाठकों को फ़्रांसीसियों की चिकनी-चुपड़ी बातों से इस प्रकार सावधान किया–

''झूठी पुस्तकों और दिलकश फ़रेब के साथ वे हर एक

के पास जाते हैं और कहते हैं, 'हम तुममें से ही हैं। तुम्हारी बिरादरी और तुम्हारे धर्म से संबंध रखते हैं।'' और वे बेहूदा दावा करते हैं और ख़तरनाक धमकियां देते हैं।

यूरोप में तबाही मचाने के बाद फ़्रांसीसियों ने अपना ध्यान पूरब की ओर केन्द्रित किया। फिर उनकी आंतरिक बुराई और शैतानियत का रुख़ उम्मते मुहम्मदी (मुसलमानों) की ओर हो गया।

निश्चय ही ऐसा हुआ। इस्लाम के उदय के बाद पहली बार इस्लाम को एक ऐसे वैचारिक और दार्शनिक चुनौती का सामना करना पड़ा, जो इस्लाम की धारणा और इस्लामी समाज के लिए ख़तरा बन रहा था। मुसलमानों के अनुभव में इससे पहले ऐसी कोई चुनौती नहीं आयी थी। मध्य-पूर्व को विजित करने और वहां के समाजों को अपने अन्दर समाहित करने के पश्चात इस्लाम को तीन संस्कृतियों का मुक़ाबला करना पड़ा था। ये संस्कृतियां थीं हिन्दुस्तान, चीन और यूरोप की।

इन तीनों में से केवल तीसरी संस्कृति ऐसी थी जिसके पास कोई ध्यातव्य धर्म था और वह इस्लामी संस्कृति के लिए एक गंभीर राजनैतिक एवं सैनिक विकल्प बन सकता था, लेकिन ईसाई धर्म इस्लाम के सामने सदैव पराजित हुआ और ईसाई शक्ति अधिक से अधिक इतना कर सकी कि मुसलमानों की बढ़ती हुई शक्ति के सामने अपनी जगह डटी रही।

यह ठीक है कि मध्यकाल में इस्लामी जीवन-व्यवस्था को यूनानी दर्शन और विज्ञान से मुक़ाबला करना पड़ा। लेकिन यह चुनौती बहुत सीमित थी, अतः चुनौती की अग्रसरता रोक दी गयी, फिर हेलनी या यूनानी विरासत का एक हिस्सा मुसलमानों ने अपने अन्दर समाहित कर लिया, शेष को रद्द कर दिया।

अब यूरोप के सेक्यूलरिज़्म से इस्लाम को जो नयी चुनौती मिली वह भिन्न प्रकार की है। वह अपनी व्यापकता, शक्ति और प्रभाव बढ़ाने की दृष्टि से अधिक बड़ी थी और किसी विजित दुनिया की ओर से नहीं बल्कि विजयी दुनिया की ओर से आयी थी। सेक्यूलरिज़्म ऐसा दर्शन था जो प्रत्यक्षतः ईसाई व्याख्या और तवज्जो से आज़ाद था और एक ऐसे समाज में प्रस्तुत किया गया था जो धनी, शक्तिशाली और विस्तारवादी था। कुछ मुसलमानों को इसमें यूरोप की सफलता का राज़ नज़र आया और यह भी महसूस हुआ कि उनकी अपनी कमज़ोरी, निर्धनता, मुहताजी और हार का उपचार भी इसमें निहित है।

19वीं और 20वीं सदी में यूरोप के सेक्यूलरिज़्म और उससे फूटने वाले राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टिकोणों ने आने वाली मुसलमान नस्लों को अपनी ओर आकृष्ट किया।



आजीविका : अनुभूति और संपर्क

नवीं सदी में बग़दाद (युद्ध बग़दाद) के एक लेखक ने 'व्यापार पर एक स्पष्ट दृष्टि' शीर्षक से पुस्तिका लिखी, जिसमें उसने उन विभिन्न चीज़ों का उल्लेख किया जिनका व्यापार होता था । इन चीज़ों के प्रकार, नाम और जहां वे पैदा होती हैं, उन स्थानों का उल्लेख भी किया । पुस्तिका के एक भाग में उन चीज़ों की सूची थी जो दूसरे देशों से इराक़ आयात की जाती थीं । दूसरे देशों में एशिया और अफ़्रीक़ा उस समय के पिछड़े मुसलमान देश ही सम्मिलित थे । केवल चार देश ऐसे थे जो मुस्लिम राज्य से बाहर थे । वे थे : ख़ज़ार (यूरेशिया के मैदानी क्षेत्रों में एक तुर्क राज्य), हिन्दुस्तान, चीन और बाज़नतीन । ख़ज़ार से गुलाम, दासियां, जिरहबक्तर (कवच), लोहे की टोपियां और हिन्दुस्तान से शेर, चीते, हाथी, चीते की खाल, अक़ीक़, सफ़ेद चंदन की लकड़ी, आब्नूस (एक प्रकार की काली लकड़ी) और नारैल, चीन से विभिन्न प्रकार के इत्र, चीनी मिट्टी के बरतन, काग़ज़, रोशनाई, मोर, घोड़े, घोड़ों की काठी, ऊनी कपड़े, दारचीनी और रैवन्द चीनी और बाजन्तीन से चांदी और सोने के बरतन, जड़ी-बूटियां, कशीदाकारी वाले कपड़े, घोड़े, दासियां, लाल तांबे के नेवार, ताले बनाने वाले, सिंचाई और खेती-बाड़ी के विशेषज्ञ, पत्थर काटने वाले और हिजड़े आयात किये जाते थे । यहां यूरोप का कोई उल्लेख नहीं है। वहां से इतना कम माल मंगाया जाता था कि उसका उल्लेख करने की आवश्यकता ही महसूस की गयी । लेकिन संभव है जिन चीज़ों का उल्लेख बाज़न्तीन की सूची में किया गया हो उनमें से कुछ पश्चिमी यूरोप से मंगायी जाती हों ।

मध्यकाल के भूगोलशास्त्रियों ने उन चीज़ों की जो सूची दी है जो पश्चिम यूरोप से मंगायी जाती थीं, वे बहुत ही कम हैं, रूस के रास्ते स्केन्डेनीविया से जो चीज़ें मंगायी जाती थीं वे अलबत्ता अधिक थीं । इस व्यापार का प्रमाण वे सिक्के उपलब्ध कराते हैं जो स्केन्डेनेविया विशेषकर स्वीडन में मिले हैं । ये सिक्के मध्य एशिया की तकनीक से ढाले हुए हैं ।

मध्यकाल के लेखक पश्चिम की आर्थिक परिस्थिति के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारियां उपलब्ध करते हैं । इब्न याक़ूब अतरीश्ट के बारे में लिखता है–

''यह फ़िरंगियों के भू-भाग में एक बड़ा शहर है । इसके साथ बड़े मैदान हैं । इसकी मिट्टी खारी और बंजर है । यहां कोई बीज या पौधा नहीं उगता । आम लोग मवेशियों, उनके दूध और ऊन से रोज़ी कमाते हैं । ईंधन के लिए उनके पास लकड़ी जलाने को नहीं है, बल्कि उनके पास एक प्रकार की मिट्टी होती है जिसे वे ईंधन के रूप में प्रयुक्त करते हैं । बस यहां जो कुछ होता है वह यही है ।

गर्मियों में जब पानी सूख जाता है तो वे अपने खेतों में जाते हैं और कुल्हाड़ी से यूनिटों के रूप में मिट्टी काटते हैं । प्रत्येक व्यक्ति अपनी आवश्यकता के अनुसार मिट्टी काटता है और धूप में सुखाने के लिए रख देता है । वह बहुत हल्की हो जाती है और जब उसे आग के पास ले जाते हैं तो वह आग पकड़ लेती है । आग उसे ऐसे पकड़ती है जैसे लकड़ी को और उससे बहुत ऊंची-ऊंची लपटें निकलती हैं जिनमें बहुत गर्मी होती है । इतनी प्रचंड गर्मी जैसे शीशा बनाने वाली धौंकनी के आग में होती है । जब उसका टुकड़ा जल जाता है तो राख रह जाती है, कोयला नहीं रहता ।''

इब्न याक़ूब दूसरे उन शहरों के बारे में भी ऐसी ही टिप्पणी करता है जहां वह पहले गया है या जिसके बारे में उसने सुना है । वह कहता है, ''बोर्दयो पानी, वृक्षों, फलों और विभिन्न प्रकार की खाने-पीने की चीज़ों से भरा हुआ है । इस शहर के समुद्र तट पर बहुत अच्छा अंबर पाया जाता है ।'' इसी शहर के बारे में वह लिखता है–

''सीन नदी के किनारे बहुत ही क्रम से पत्थर लगाए गये हैं । वृक्ष और बेलें वहां बिल्कुल नहीं उगतीं, लेकिन गेहूं और चौपायों के चारे के लिए जोई बहुत पैदा होती है । उनकी नदी में एक मछली पकड़ी जाती है जिसे वे 'सामन' कहते हैं । एक और छोटी मछली होती है जिसका स्वाद खीरे जैसा होता है...सर्दी के मौसम में जब बहुत ठंड होती है तो एक प्रकार की सफ़ेद बत्तख़ वहां आती है जिसके पैर और चोंच लाल रंग के होते हैं...यह क़िस्म केवल निर्जन द्वीप में अंडे देती है । यदि कोई जहाज़ विनष्ट हो जाता है

और उसके लोग उस द्वीप पर पहुंच जाते हैं तो वे सप्ताह और महीने भर तक उनके अंडों और बच्चों पर गुज़ारा कर सकते हैं ।''

शलेसोग नगर के बारे में वह लिखता है–''नगर में कुछ चीज़ें अच्छी हैं और वे ख़ुदा की नेमत हैं । इन लोगों का भोजन अधिकतर मछली है जो बहुत है । किसी के यहां बच्चा पैदा होता है तो वे ख़र्चा बचाने के लिए उसे समुद्र में फेंक देते हैं ।''

मैनेज़र नगर से वह बहुत अधिक प्रभावित हुआ है । वह लिखता है–

''बहुत ही बड़ा नगर है । इसका कुछ हिस्सा आबाद है शेष में झाड़ियां हैं । यह फ़िरंगियों के भू-भाग में है राइन नदी कें किनारे । यह गेहूं, जौ, जोई, नारंगी और फलों से मालामाल है । यहां दिरहम चलता है जो 301-302 हिजरी (तदनुसार 934-935 ई॰) में ढाला गया था । उस पर सम्राट का नाम और तिथि उत्कीर्ण है । आश्चर्य की बात यह है कि यद्यपि यह नगर नितांत पश्चिम में है, लेकिन यहां गरम मसाले नहीं होते । वे केवल सुदूर पूरब में पाये जाते हैं, जैसे काली मिर्च, अदरक, लौंग, जोलंजान (एक प्रकार का अदरक)–ये चीज़ें हिन्दुस्तान से लायी जाती हैं जहां ये बहुत पैदा होती हैं ।''

मध्यकाल के अंतिम वर्षों में मुसलमान लेखक अधिक बाख़बर हो गये थे । जैसे इदरीसी काफ़ी विस्तार के साथ जानकारियां उपलब्ध कराता है । अब इंग्लिस्तान जैसा अविकसित (उस समय) देश भी उनकी रचनाओं में नज़र आने लगा है । अतएव इब्न सईद इंग्लिस्तान का आश्चर्य इन शब्दों में वर्णित करता है–

''इस द्वीप में केवल वर्षा का पानी है और वर्षा के पानी से ही ये लोग फ़सलें बोते हैं...इस द्वीप में सोने, चांदी, तांबे और टीन की खाने हैं । अधिक ठंड के कारण यहां अंगूरों के बाग़ नहीं हैं । लोग खानों से खनिज फ़्रांस भेजते हैं और विनिमय में शराब प्राप्त करते हैं । यही कारण है कि फ़्रांस के सम्राट के पास इतना अधिक सोना, चांदी है...।''

ईरान का इतिहासकार रशीदुद्दीन भी इंग्लिस्तान के धन से बहुत प्रभावित हुआ । वह लिखता है, ''इंग्लिस्तान में सोने, चांदी, तांबे, टीन और लोहे की अनगिनत खाने हैं और अनेक प्रकार के फल हैं ।'' रशीदुद्दीन लिखता है कि वहां फ़िरंगी व्यापारी हैं जो मिस्र, शाम, उत्तरी अफ़्रीक़ा, अनातोलिया और तबरेज़ का सफ़र कर चुके हैं । ये लोग जेनेवा से रवाना होते थे ।

मध्य और पश्चिमी यूरोप में जो चीज़ें पैदा होती थीं उनमें से तीन चीज़ों ने मुसलमान लेखकों को अपनी ओर आकृष्ट किया । वे थीं स्लावी, ग़ुलाम, फ़िरंगी हथियार और इंग्लिस्तान की ऊन, चूंकि इस्लामी शरीअत के अनुसार किसी आज़ाद मुसलमान को या ऐसे आज़ाद ग़ैर-मुस्लिम को ग़ुलाम नहीं बनाया जा सकता जो इस्लामी राज्य का वैधानिक नागरिक हो और जिज़्या अदा करता हो, इसलिए इस्लामी देशों के लिए ग़ुलाम दो तरीक़े से प्राप्त किये जाते थे । जन्मजात (ग़ुलाम माता-पिता के बच्चे धर्म के भेदभाव के बिना) और विदेश से लाये जाने वाले लोग । ग़ुलाम माता-पिता के बच्चों की संख्या बहुत शीघ्र ही अपर्याप्त हो गयी ।

रोमन और अन्य प्राचीन राज्यों की भांति इस्लामी राज्य में अपराधियों, ऋणी लोगों या ग़रीब लोगों को ख़रीद कर ग़ुलाम नहीं बनाया जा सकता था, इसलिए ग़ुलामों की कमी इस्लामी भू-भाग से बाहर से ग़ुलाम प्राप्त करके पूरी की जाती थी । ये ग़ुलाम ख़िराज (कर), गिरफ़्तारी या ख़रीदारी के द्वारा प्राप्त किये जाते थे ।

इससे मुसलमान और इससे पहले के राज्यों के बीच अन्तर का पता चलता है । प्राचीनकाल में ग़ुलामों में अधिकतर स्थानीय लोग होते थे । इसके विपरीत इस्लामी राज्य में ग़ुलाम मुस्लिम भू-भाग के बाहर से लाये जाते थे । इससे मुसलमान देशों के आसपास के क्षेत्रों में ग़ुलामों के व्यापार को ज़बरदस्त बढ़ावा मिला ।

इस्लामी देशों में ग़ुलामों की आबादी पूरी करने वाले दो बड़े साधन थे । एक, उत्तर में यूरोप और एशिया की सीमावर्ती मैदानी क्षेत्र जहां से श्वेत ग़ुलाम आते थे और जिनमें अधिकतर तुर्क होते थे जो सेना में काम आते थे । और दूसरे विषवत रेखीय अफ़्रीक़ा जहां से अश्वेत ग़ुलाम पकड़े जाते थे या ख़रीदे जाते थे । ये ग़ुलाम घरेलू कामों के लिए होते थे । दूसरे भी क्षेत्र थे जहां से ग़ुलाम प्राप्त किये जाते थे । उनमें एक यूरोप था । स्पष्ट है यूरोपीय ग़ुलाम मुसलमानों के पश्चिमी देशों विशेषकर हस्पानिया में अधिक विशिष्ट स्थान रखते थे । दूसरी सीमाओं की भांति ये ग़ुलाम पहले पहल लड़ाइयों में पकड़े जाते थे । लड़ाई के मैदान में पकड़े जाने वाले इन्कारियों को ग़ुलाम बनाना जायज़ (वैध) था । अतएव एक अवधि तक ये ग़ुलाम प्राप्त होते

A
Restockist of
Hindustan Unilever Ltd.

ALBA TRADERS

19, Rathod Layout, Near Noori Masjid
Jafar Nagar Ring Road, Nagpur - 440 013
Mobile No. : 9158428686
E-mail : albatraders@rediffmail.com

Mirza Sharique Baig
M : 9372425965, 9660020163

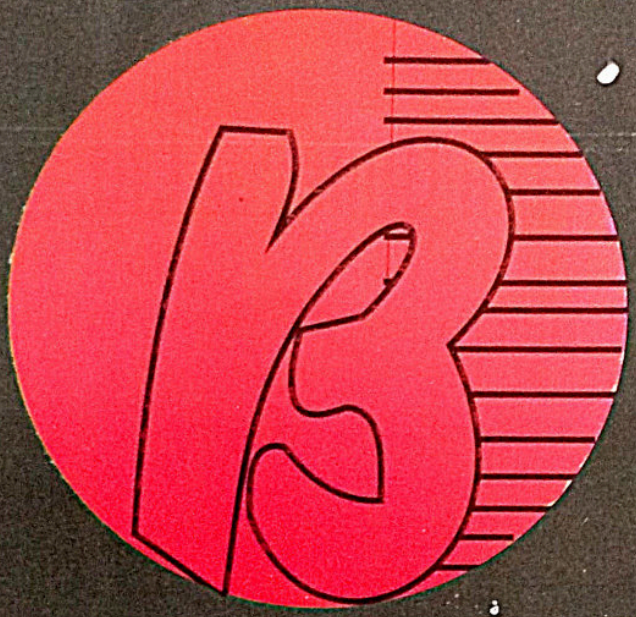

Babbu
HOTEL

Mominpura Chowk, Nagpur
Ph. 0712-6068333
E-mail : sharikbaig@yahoo.co.in

With Best Compliment From

DR. M. A. PATANKAR

Al-Khaleej Diagnostic Centre









M-2, 2nd Floor, Above SBI Bank
South Extension Part-2, New Delhi-110049
Email : alkhaleejdc@yahoo.com
Tel. No. : 011-26262680-41646577

AL-KABIR POLYTECHNIC
JAMSHEDPUR

A Muslim Minority Vnaided Institution
Recognised by SBTE, Govt. of Jharkhand
& Approved by AICTE Govt. of India

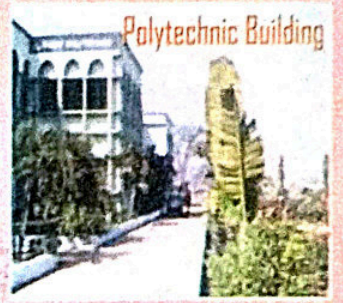

The institute in its academic program imparts three year diploma courses in engineering in following branches.

- Civil Engg.
- Electrical Engg.
- Mechanical Engg.
- Automobile Engg.
- Computer Science & Engg.
- Electronics & Communication Engg.



Laboratories and workshop

★ ★ ★

Kabir Nagar, P.O. Kopali, Via-Mango,
Jamshedpur-831012, Jharkhand
Tel. : 06591-260092, Tele Fax : 06591-260414
E-mail : principal_akpjsr@rediffmail.com
Website : www.al-kabirjsr.com



A. A. SYED
Chairman

APPLE TRAVELS

INTERNATIONAL HRD CO.
Authorised by Govt. of India as International Recruitment Co.



68, DCB BANK BLDG., 3RD FLOOR,
PALTON ROAD, CRAWFORD MARKET,
MUMBAI-400001 (INDIA)
Phone : 0091-22-6631-1733, 6631-6946
0091-22-6635-5519, 6610-7869,
Fax : 0091-22-66310937
Mobile : 0091-9820673953
E-mail : hr@appleconsultancy.com
Website : www.appleconsultancy.com

TANWAR HOSPITAL

(CRITI CARE AND MATERNITY CENTRE)

P. K. ROAD, THANE, MAHARASHTRA

DR. M. A. TANWAR
(M. D. MEDICINE)
Internist
&
Intensivist

WE ARE OFFERING THE BEST UNIQE AND WELL EQUIPPED CLEAN AND SPACIOUS HOSPITAL CARE AND INTENSIVE CARE UNIT THAT CAN PROVIDE

ALL MEDICAL FACILITIES LIKE

- INTENSIVIST-CRITICAL CARE PHYSICIAN
- AVAILABLE 24 HORS.
- ADVANCES VENTILATOR (LIFE SAVING MACHINE)
- MULTIPARA CARDIAC MONITOR
- ARTERIAL BLOOD GAS AND ELECTROLYTE ANALYSIS
- ALL BLOOD TEST AND X-RAY AVAILABLE
- SPACIOUS LOBBY FOR RELATIVES COMFORT
- FULL FLEDGE WELL EQUIPPED OPERATION THEATRE
- CASHLESS ADMISSION AND MEDICALAIM
- FACILITIES FOR ALL MAJOR TPA'S

TANWAR TOWER, OPP. SONALI HOTEL, P. K. ROAD,
OFF MIRA BHAYANDAR ROAD, MIRA ROAD (E), THANE (MAHARASHTRA)
TEL. : 28552002, 28127304, CELL. : 9820520198/9322510406
FAX : 28114700, MORNING 10.00 TO 12.00 A. M.



With Best Compliments from :

MAKING THE
[EXTRA] ORDINARY

LIS (INDIA)
CONSTRUCTION CO. PVT. LTD.

BUILDERS & DEVELOPERS

Regd. office: A/2, Swati Apartment, Juhu Lane, Andheri (W), Mumbai - 400 058
Ph.: 2625 5702-34 Fax: 262 88474 Email: lis.co.in.@gmail.com



SULEMAN USMAN MITHAIWALA

No-3, Minara Masjid Mohd. Ali Road, Mumbai-400003

Zakir Bhai
9764391490

Iqbal Bhai
8087788878

WBCM

WADI BHANDARA
CARGO MOVERS





Head Office : Beside Sandesh Dawa Bazar, Near Hajj House
C.A. Road, Gandhibagh, Nagpur. Ph. : 0712- 2731982, 6631176

Wadi : Behind Gulshan Petrol Pump, Naka No. 10
Amrawati Road, Wadi, Nagpur. Ph. : 9823717933, 8888458926

Bengal Footwear Co.

Kohinoor's

Stockist : Moti, Apollo, Ashoka, Uttam, SSC etc.



ख़ुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तक़दीर से पहले
ख़ुदा बन्दे से ख़ुद पूछे कि बता तेरी रज़ा क्या है ।

Bengal Footwear Co.

39, Rabindra Sarami,
Kolkata-700073

With Best Compliments From :

DILKUSHA NURSING HOME PVT. LTD

94A, Dilkusha Street, Kolkata-700 017
Phone : (033) 2287 4318, 22803639, 2290 1971
Fax : (033) 2290 1970
E-mail : ddilkusha@gmail.com

- This is a 36 bedded Modern Nursing Home including 6 bedded Elegant INTENSIVE CARE UNIT general surgery LAPAROSCOPIC, GALL BLADDER, APPENDEX AND ORTHOPAEDIC Surgery with latest C-ARM IMAGE INTENSIFIER and also provision for all categories of patients including Maternity and Modern Nursery attached with full fledged DIAGNOSTIC DIVISION equipped with latest U.S.G., X-Ray machines and PATHOLOGY UNIT etc.
- Maxillofacial & Microvascular Reconstruction of the Oro-Facial Region with Radial Forearm Flap. Plastic and Cosmetic Surgery Piles Removal by imported IRC etc. are regularly done. Specialists in all streams including Oncolgy, Urology, Gastroenterology etc.
- Polyclinic, In-house Medicine Shop, 24-hours expert Doctors, RMOs, Matrons, Trained Nursing Staff.
- charges moderate.



AAF



Res. (0832) 2732406
Mob.: 9422058677
9422439911
9225904060
9225903421

K. ABOOBAKER

Fish Merchants & Commission Agent

Wholesale Fish Market, Margao, Goa-403601

Yusuf Akbani
+91-9823256756
yusuf@primetimbers.in

PRIME TIMBERS

TIMBER IMPORTER,
EXPORTER & MANUFACTURER

यह उपदेश प्रत्येक उस व्यक्ति को दिया जाता है जो अल्लाह और परलोक पर विश्वास रखता हो और जो अल्लाह से डरता है, अल्लाह उस के लिए (संकट से) निकलने का कोई मार्ग उत्पन्न कर देगा (अत- तलाक़ : 2)

224, New Timber Market, Lakadganj, NAGPUR 440008

ph. (O) +91-712-2766587 Fax +91-712-2760287 (M) +91-9370966587

SERVICES OFFERED AT

Prop. : Yacub Shaikh

my Idea
Authorised Centre

PRODUCTS

- Postpaid Connection
- Attractive tariffs on Individual & Group connections
- Prepaid Connection
- Blackberry Connection
- 3G Net Setter
- VAS products & GPRS Packs
- E-Recharges
- Prepaid to Postpaid Migration
- Postpaid to Prepaid Migration

SERVICES

- Postpaid bill payment-Cash/Credit Card/Cheque
- Prepaid Recharge
- Service change requests
- Queries/Request/Complaints Resolution
- Postpaid Bills on E-mail
- Sim Exchange-Postpaid & Prepaid

IMPACT MOBILE SERVICE

E-10, Saldanha Business Towers
Nr. Court Junction, Altinho Mapusa-403 507

Also repairs Mobiles out of Warranty

Sweets



Shabana's

Tingle's your taste buds...

Delicious Sweets

Sweets Cake Cookies
Snacks Bread Toast
and others bakery Products

Our Branches :

Shabana M Bakery
Chhaoni

Afzal Bakery
Near Friends Colony

Shabana's Bakery
Sadar

Shabana's
Near Futala Lake

New Shabana Bakery
Godhni Road

Shabana Bakery
Officer's Club



Sweets
Shabana's





SHABANA MODERN BAKERY Chhindwara Road, Chhaoni, Nagpur - 440013.
Call + 91 7122594571 / + 91 9766580395

LIKE US ON
www.facebook.com/shabanabakery

BUY ONLINE
www./shabanabakery.in

fssai

KEEP YOUR CITY CLEAN & GREEN

"वह दिन जबकि
आसमान को हम यूं लपेटकर
रख देंगे जैसे पंजी में पन्ने लपेट
दिए जाते हैं । जिस तरह पहले
हमने सृष्टि का आरंभ किया था
उसी तरह हम फिर उसकी
पुनरावृत्ति करेंगे । यह एक वादा
है हमारे ज़िम्मे और यह काम हमें
हर हाल में करना है ।"
(क़ुरआन, 2:104)

A Well Wisher

SARMAD TRADERS, SIMOGA

रहे ।

मुसलमानों का आगे बढ़ना रुक जाने, परिस्थितियों में कुछ अवधि के लिए गतिरोध पैदा हो जाने और फिर मुसलमानों की पराजय के साथ ही युद्धबंदियों की संख्या पहले जैसी नहीं रही और जो गिरफ़्तार किये गये थे उन्हें भी तावान के लिए या अपने बंदियों से तबादले के लिए आज़ाद करना पड़ा । इसके बाद गुलामों की ख़रीदारी शुरू हुई जिससे यूरोपीय गुलामों का कारोबार ख़ूब फला-फूला । मुस्लिम हस्पानिया और उत्तरी अफ़्रीक़ा के लिए यूरोपीय स्त्री और पुरुष ख़ूब ख़रीदे जाते थे । इन श्वेत गुलामों को अरबी में 'सक़ालबा' कहा जाता था, जो 'सकलबी' का बहुवचन है ।

यूरोपीय भाषा में स्लेव (Slave) एक सामाजिक शब्दावली बन गयी और एक नस्ल स्लाव या स्लाफ़ कहलाई जाने लगी । 'स्लेव' शब्द भी अरबी के 'सक़लबी' से ही निकला है । भूगोलशास्त्रियों की रचनाओं में 'सक़ालबा' शब्दावली मध्य और पूर्वी यूरोप के विभिन्न स्लाबी लोगों के लिए प्रयुक्त की जाती थी । मुस्लिम हस्पानिया के वृत्तांतों में मिस्र से पहले यह नाम क़रतबा के उमैया ख़लीफ़ों की सुरक्षा में लगे गुलामों के लिए प्रयुक्त किया गया था । इसके बाद पूरबी ख़िलाफ़त में अधीनस्थ तुर्क शासकों ने भी यही नाम प्रयुक्त किया । ख़याल रहे कि हस्पानिया में पहले 'सक़ाबला' लोग थे जिन्हें जर्मनों ने पूरबी यूरोप पर हमलों के दौरान गिरफ़्तार किया और मुस्लिम हस्पानिया में बेच दिया ।

समय बीतने के साथ यह नाम उन सभी श्वेत गुलामों का पड़ गया जो सेना में या घरों पर सेवा-कार्य कर रहे थे । 10वीं सदी के अरब पर्यटक इब्न होक़ल ने, जो पूरब से हस्पानिया गया था, लिखता है कि जिन यूरोपीय गुलामों से वह मिला वे केवल पूर्वी यूरोप से ही नहीं आये थे, बल्कि उनमें फ़्रांस, इटली और उत्तरी हस्पानिया के निवासी भी सम्मिलित थे । उनमें से कुछ अब भी उनको गिरफ़्तार करने वालों द्वारा बेचे जा रहे थे । यह गिरफ़्तारी ज़मीनी रास्ते से हुए हमलों के द्वारा नहीं होती थी, बल्कि समुद्री रास्तों से होती थी । फ़्रांस के ज़मीनी रास्ते से गुलामों को ले जाना जारी रहा, जहां एक हालैंडवासी इतिहासकार राइन हार्ट डवरी के कथनानुसार "वरदन नामक स्थान पर हिजड़ा (नपुंसक) बनाने का कारख़ाना लगा हुआ था ।"

मुस्लिम समाज के आदाब और नियम ऐसे थे कि वहां गुलाम भी शक्तिशाली और प्रभावी हैसियत हासिल कर लेते थे । इस कारण मुस्लिम हस्पानिया में 'सक़ालबा' समाज का अत्यंत महत्वपूर्ण अंग बन गये थे । हम देखते हैं कि वे जनरल तक बन गये । मंत्री बन गये, उनके पास धन-वैभव था, जागीरें थीं, यहां तक कि उनके अपने गुलाम भी थे । उन्होंने अरबी भाषा अपना ली थी तो उनमें से बड़े-बड़े आलिम, फ़ाज़िल, शायर और वैज्ञानिक पैदा हुए । उनकी संख्या इतनी अधिक थी और वे इतने उभरे हुए थे कि हिशाम सानी (976-1013) के ज़माने में उनमें से एक ने उन्दुलुस के स्लावी निवासियों के कारनामों पर पूरी एक पुस्तक लिख दी । इस पुस्तक की कोई प्रति सुरक्षित नहीं रही ।

10वीं सदी के प्रारंभ में फ़ातिमियों ने तोंस में अपना राज्य स्थापित किया और लगभग पचास वर्ष बाद मिस्र पर क़ब्ज़ा किया तो उनकी सफलता में स्लावी गुलामों का भी बड़ा हाथ था । जौहर, जो मिस्र को विजित करने वाली सेनाओं का नायक था और जिसकी गणना क़ाहिरा के संस्थापकों में की जाती है, संभवत: स्लावी नस्ल का था ।

मुस्लिम दुनिया को गुलामों की सप्लाई में बहुत-से यूरोपीय लोग लिप्त थे । उनमें इटली और फ़्रांस के नगरों के व्यापारी और पूर्वी रोम सागर के क्षेत्रों में कारोबार करने वाले गुलामों के यूनानी मालिक भी शामिल थे । वीनस के व्यापारियों ने भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । उन्होंने आठवीं सदी में ही इस कारोबार में यूनानियों का मुक़ाबला करना शुरू कर दिया था ।

यूरोप के व्यापारियों को हस्पानिया और उत्तरी अफ़्रीक़ा में ईसाई गुलाम मुसलमानों के हाथों बेचते कोई शर्म नहीं आती थी, हालांकि शालमीन और उसके बाद पोप ज़ेकेरी एवं हेडरीन प्रथम ने इस काम पर प्रतिबंध लगा दी थी, वे यह कारोबार बन्द करना चाहते थे । इस मामले में वीनस के व्यापारी सबसे आगे थे, वे रोम के शहर से स्त्री और पुरुष दोनों ही ख़रीदते थे । मुस्लिम और बाज़न्तीनी दरबारों को हिजड़े उपलब्ध कराने में भी वीनस ही सबसे आगे था । यह कारोबार इतना फैला कि एक ज़माने में अपमान का कारण बन गया, जिस पर वीनस के शासक ने यह व्यापार निषिद्ध ठहरा दिया, लेकिन यह प्रतिबंध अधिक समय तक प्रभावी नहीं रह सका ।

यह कारोबार इतना लाभकारी था कि इस पर हर प्रकार का प्रतिबंध और इसकी निंदा असफल सिद्ध हुई । वीनस की भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि वह स्लावी भू-भाग के किनारे पर था और समुद्री मार्गों से मुस्लिम देशों तक वह सुगमता के साथ पहुंच जाता था, इसलिए वहां के व्यापारी सब पर बाज़ी ले गये । अतएव एडरबाटिक समुद्र का पोला द्वीप जो उस समय वीनस के क़ब्ज़े में था, गुलामों की सबसे बड़ी मंडी बन गया ।

गुलामों को उपलब्ध कराने के दूसरे साधन भी थे । हस्पानिया, सिसली और उत्तरी अफ़्रीक़ा के मुसलमान रोम सागर के ईसाई समुद्र तटों पर आक्रमण करते थे । ये आक्रमण विशेष रूप से 10वीं, 11वीं और 12वीं सदी में बहुत अधिक हुए । इन आक्रमणों में बड़ी संख्या में क़ैदी बनाए जाते थे ।

कहा जाता है कि 928 ई॰ में एड्रियाटिक पर केवल एक आक्रमण में 12 हज़ार क़ैदी बनाए गये जो तोंस की बंदरगाह महदिया ले जाए गये । इस आक्रमण का नेतृत्व साबिर नामक एक व्यक्ति ने किया, जो सिसली के शासक का आज़ाद किया हुआ गुलाम था और इटली एवं दूसरे देशों के समुद्र तटों पर आक्रमण करता रहता था ।

यह कारोबार पूरे मध्यकाल में जारी रहा । 15वीं सदी में कहीं जाकर उसकी समाप्ति के चिन्ह दिखायी पड़े । कारोबार समाप्त होने का एक कारण यह था कि गरम मसालों के पश्चिमी व्यापारियों की भाँति गुलामों के मुसलमान व्यापारियों ने भी गुलाम हासिल करने का सीधा रास्ता तलाश कर लिया था । अब रोम सागर के दलालों की आवश्यकता नहीं रही थी ।

जिस प्रकार पुर्तगाली व्यापारी अफ़्रीक़ा के चतुर्दिक चक्कर लगाते हुए सीधे हिन्दुस्तान और दक्षिण पूर्व एशिया पहुंचते और गरम मसाले प्राप्त करते, उसी प्रकार तुर्क बलक़ान और काला सागर के क्षेत्रों से होते हुए सीधे मध्य एवं पूर्वी यूरोप पहुंचते और गुलाम हासिल करते । इस प्रकार यूरोप के वे दलाल बीच से निकल गये जो यूरोप से स्लावी गुलाम हासिल करते और मध्य-पूर्व एवं उत्तरी अफ़्रीक़ा में जाकर बेचते । 15वीं और 16वीं सदी में गुलामों की सप्लाई का बड़ा ज़रिया दक्षिण पूर्व यूरोप था, जहां उस्मानी अग्रसरता के कारण अलबानियों, स्लावी, हंगरियन और दूसरे ईसाई गुलामी की स्थायी और प्रचुर संख्या में सप्लाई जारी रही । उनमें से कुछ तो राज्य की प्रजा में से होते थे जो ईसाई नवयुवकों की बनायी जाने वाली सेना में भरती किये जाते थे और कुछ युद्ध क्षेत्र में बन्दी बनाए जाते थे । 17वीं सदी में ईसाई लड़कों की सेना, जिसे 'दोशर्मे' कहा जाता था, समाप्त कर दी गयी । इसके साथ ही हैसबर्ग के साथ उस्मानियों की लड़ाई में जो गतिरोध पैदा हुआ, उसका परिणाम यह हुआ कि उस्मानी समाज की आवश्यकता पूरी करने के लिए गुलामों को उपलब्ध कराने का सिलसिला कम हो गया ।

लेकिन शीघ्र ही इसका वैकल्पिक माध्यम मिल गया । क्रीमिया के तातार ख़ानों ने, जो उस्मानी ख़िलाफ़त को मानते थे, गुलामों की गिरफ़्तारी और उनके व्यापार का एक बहुत बड़ा सिलसिला शुरू कर रखा था । वे रूस, पोलैंड और यूक्रेन के निवासी पकड़ते और क्रीमिया ले जाते जहां से उन्हें इस्तंबूल भेज दिया जाता । इस्तंबूल से उन्हें उस्मानी साम्राज्य के दूसरे क्षेत्रों की मंडियों में भेज दिया जाता । तातारी इसे मैदानों की फ़सल काटना कहते थे । गुलामों और दासियों की यह सप्लाई 18वीं सदी के अंत तक जारी रही । अंततः रूस ने क्रीमिया पर क़ब्ज़ा कर लिया तो यह कारोबार बंद हुआ ।

उस्मानी टुकड़ियों में बलक़ान के ईसाई लड़कों की जो भरती होती थी उसने इस कारोबार में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । उनमें से बहुत-से लड़के सेना या दूसरी सेवाओं में विधिवत शामिल हो गये । एक ज़माने में ये लड़के बहुत प्रभावशाली हो गये थे । इससे दूसरे वर्गों में बेचैनी पैदा हुई । शिकायतें करने वालों में काकेशिया के गुलाम भी शामिल थे जो उनके प्रतिद्वंद्वी थे, यहां तक कि आज़ाद मुसलमानों को भी शिकायतें पैदा हुईं और उन्होंने इन नवमुस्लिम गुलामों के सामने अपना-अपना अपमान महसूस किया ।

शायर वेसी ने 17वीं सदी के प्रारंभ में उस्मानी साम्राज्य पर आने वाली आपदा पर एक मसनवी (काक) लिखी जिसमें दूसरे कारणों के अतिरिक्त इसका बड़ा कारण यह भी बताया-"कितने आश्चर्य की बात है कि जो लोग दर्जों और शक्ति के मज़े लूट रहे हैं वे सब अलबानिया और बोस्निया के हैं और अल्लाह के पैग़म्बर की उम्मत (अर्थात पुराने मुसलमान और अरब) अपमान सहन कर रहे हैं ।"

वास्तव में इन ईसाई नवयुवकों का प्रभाव बहुत अधिक

था । बहुत-से तो उन्नति करके उच्च पदों तक पहुंच गये, कुछ ने धर्म ज्ञान, अध्यात्म और शायरी (कविता) में नाम पैदा किया यहां तक कि कई ऐसे भी थे, जो क़ाज़ी, (जज), फ़क़ीह (धर्मशास्त्री) बन गये । फिर भी पूर्वी यूरोप के उन किसानों के बारे में अधिक पता नहीं चलता । जिन्हें तातारियों ने गिरफ़्तार करके भेजे थे । ये लोग अधिक प्रसन्न नहीं रहे । ये उच्च स्थानों तक नहीं पहुंच सके और छोटा-मोटा काम ही करते रहे । इनका काम केवल घरेलू सेवाएं करना ही था । सामान्य विचार के विपरीत इन गुलामों को आर्थिक मामलों में भी इस्तेमाल किया जाता था ।

मध्यकाल में इन गुलामों को खेतों और खानों में भी काम में लाया जाता था, लेकिन यह चीज़ बहुत अधिक आम नहीं थी । ऐसी जानकारियां विद्यमान हैं कि उस्मानी काम में इन गुलामों से बड़े खेतों और बाग़ों में काम लिया जाता था, यद्यपि ये बाग़ और खेत अधिकतर सरकारी नहीं होते थे ।

विभिन्न नस्लों के गुलामों का क्या महत्व था ? इसका अनुमान इस विषय पर मुसलमानों की पुस्तकों से किया जा सकता है । अरबी, फ़ारसी और तुर्की में ऐसी पुस्तकें मिलती हैं जो मध्यकाल के प्रारंभ से 18वीं सदी तक को समाविष्ट करती हैं । इनमें गुलामों की विभिन्न नस्लों की विशेषताएं बतायी गयी हैं और यह भी बताया गया है कि किस नस्ल से कहां काम लिया जा सकता है । प्राचीन पुस्तकों में विशेष रूप से एशिया और अफ़्रीक़ा के गुलामों का उल्लेख है । उस्मानी पुस्तकों में स्लखी गुलामों पर ध्यान दिया गया है, लेकिन कुछ एक के सिवा किसी ने पश्चिमी यूरोप के गुलामों का उल्लेख नहीं किया ।

बाद के ज़मानों में पश्चिमी यूरोप के गुलाम हासिल करने वाले केवल उत्तरी अफ़्रीक़ा के लोग ही रह गये थे । ये लोग समुद्रों में जहाज़ पकड़ लेते और कभी-कभी ईसाई देशों के समुद्र तटों पर हमले करते । 17वीं सदी के प्रारंभ में ये गतिविधियां और भी तेज़ हो गयीं । अब ये लोग ब्रितानिया और आइसलैंड जैसे अविकसित स्थानों तक अपने जहाज़ ले जाते, लेकिन इनके क़ैदी तावान उसूल करने के काम आते । वे व्यापारिक माल के रूप में इस्तेमाल नहीं किये जाते थे ।

फिर भी कुछ ऐसे भी होते जो स्वयं ही वहां रह जाते और मुसलमानों के साथ ही रहना पसन्द करते । इस प्रकार का जो पहला गरोह था जिसमें पुरुष अधिक थे, उसने इस्लाम क़बूल कर लिया और उत्तरी अफ़्रीक़ा की मुस्लिम हुकूमतों की सेवाएं प्राप्त कर लीं और वहां काफ़ी उन्नति की । ये लोग 17वीं सदी के यूनानी समुद्री लड़ाकों की भांति इस्लामी सरकारों की सेवाओं में लगे रहे । इनके साथ यूरोप से मुसलमान देशों में नये शिल्प और कलाएं भी आयीं जैसे, जहाज़साज़ी, तोपसाज़ी और जहाज़रानी । अनेक अवसरों पर ये लोग यूरोप के पिछड़े स्थानों पर भी भेजी जाने वाली सैनिक मुहिमों में भी शामिल हुए और इन्होंने युद्ध में शत्रुओं की काफ़ी धन-संपत्ति प्राप्त की । ऐसा कोई प्रमाण नहीं मिलता कि इन लोगों ने अपने मेज़बान देशों पर कोई विशेष प्रभाव डाला हो । वहां के समाजों पर उनके प्रभाव बहुत ही सीमित थे ।

उत्तरी अफ़्रीक़ा के मुसलमानों ने यूरोप के जिन निवासियों को गिरफ़्तार किया, उनमें से ऐसे भी थे जो अपनी इच्छा के विरुद्ध मुस्लिम देशों में रहते थे, लेकिन वहां उनका स्थायी वास था । वे स्त्रियां थीं जो अपनी सुन्दरता के कारण दासियों के रूप में वहां रहीं और उन्हें दूसरे हाकिमों के हरम के लिए उनके हाथ बेचा गया । उनमें से जो बहुत अधिक पसन्द की जाती थीं वे उस्मानी दरबार में स्थान पाती थीं और सुल्तान के हरम में या उनके मंत्रियों के हरम में पहुंचायी जाती थीं ।

अतएव उस्मानी सुल्तानों के बारे में तो सब जानते हैं, लेकिन उनकी माताओं के बारे में बहुत कम जानकारियां उपलब्ध हैं । उनमें अधिकतर दासियां थीं, जिनकी पहचान और असलियत जान-बूझकर छिपायी जाती थी । उनमें से कुछ स्त्रियों की असलियत के बारे में अटकलें भी लगायी जाने लगीं कि वे दासी के रूप में हरम में गयीं और फिर उन्होंने सुल्तान की माता की हैसियत से पहुंच और प्रभाव प्राप्त किया । सुल्तानों की माताओं के बारे में बहुत-सी बातें कही जाती हैं । इन स्त्रियों में कई यूरोप की थीं । इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध महारानी नक्शे दिल थी जो सुल्तान महान मुहम्मद सानी की माता थीं ।

एक प्रसिद्ध उल्लेख के अनुसार उनका मूल नाम ऐमी दोबोदी रयूरी था । वह मारतीनेक की फ़्रांसीसी स्त्री थी और ज़ौजफ़ीन वीबोहाने की चचा की पुत्री थी, लेकिन इस उल्लेख की कहीं से पुष्टि नहीं होती । अलबत्ता नूरबानो के बारे में अधिक प्रमाणिक जानकारियां विद्यमान हैं । वह

सुल्तान सलीम सानी की दासी और उसके उत्तराधिकारी सुल्तान मुराद सालिस की मां थी । वह कोरख़ू के गवर्नर की पुत्री थी और उनका जन्म वेनिस में हुआ था । उसका अस्ल नाम सैलिया वनियर बाफ़ो था । तुर्कों ने उसे 12 वर्ष की अवस्था में गिरफ़्तार किया था । उसे सुल्तान सुलैमान ज़ीशान को उपहार के रूप में दिया गया था, जिसने उसे अपने पुत्र क हवाले कर दिया । बाद में उसने और उसकी उत्तराधिकारिणी ने, जो सुल्तान मुहम्मद सालिस की बहन थी, वीनस और इंग्लिस्तान को पत्र भेजे ।

इस बात की संभावना कम ही है कि इन स्त्रियों ने यूरोप के बारे में मुसलमानों के ज्ञान में अभिवृद्धि की, यहां तक कि उन्होंने अपने बच्चों को भी कुछ अधिक नहीं बताया होगा चाहे वे बच्चे राज परिवार के ही क्यों न हों । सामान्यत: वे अल्पायु में ही हरम में आयी थीं और मुस्लिम समाज की रिवायतों के अनुसार उनके प्रभाव हरम से बाहर कम ही पड़े होंगे ।

गुलामों के मुक़ाबले में हथियारों के व्यापार में लगातार वृद्धि होती रही । सलीबी लड़ाइयों से पहले भी अरबी पुस्तकों में ऐसी रचनाएं मिलती हैं जिनमें फ़िरंगी और यूरोपीय हथियारों के उच्च स्तर की प्रशंसा की गयी है । सलीबी लड़ाइयों तक यह एक महत्वपूर्ण आयात-सामग्री बन गयी थी, जिससे यूरोप और मुस्लिम देशों के बीच व्यापार का संतुलन बेहतर हुआ । अन्यथा यह संतुलन बहुत बिगड़ा हुआ था । यूरोप से मुस्लिम देशों को हथियारों के निर्यात को पोप आदि और कभी-कभी सम्राटों के विरोध का सामना करना पड़ा ।

मुसलमानों को केवल फ़िरंगी हथियार ही बहुत अधिक लाभप्रद और अच्छे नज़र नहीं आते थे, बल्कि उनको बनाने और उन्हें इस्तेमाल करने वाले भी उनके लिए उपयोगी थे । एक मिस्री रिसाले (पुस्तिका) में उन फ़िरंगियों का उल्लेख है जो कारीगरों की हैसियत से सेवा में रखे गये थे । वे फ़ातिमी काल में सरकार की नौसेना और दूसरी सेनाओं के लिए अस्त्र-शस्त्र बनाते थे । हस्पानिया से उत्तरी अफ़्रीक़ा और लघु एशिया तक मुस्लिम शासकों को फ़िरंगी सिपाही मिल जाते थे जो केवल धन के लिए यह काम करते थे । उनमें पश्चिमी यूरोप के भी थे । हम जेनेवा और यूरोप के सिपाहियों के बारे में भी सुनते हैं, जो मध्य-पूर्व के शासकों और विशेष मंगोलों की सेवा में लग गये थे ।

तुर्ककाल तक हथियारों का व्यापार बहुत बढ़ चुका था । इसमें कच्चे माल का व्यापार भी सम्मिलित था । पोप क्लीमेंट सप्तम ने 1527 ई॰ में धर्माज्ञा जारी की जिसमें उन सभी लोगों को धर्म से निष्कासित करने की घोषणा की गयी जो 'सारसेन' (अरब मुसलमान), तुर्कों और ईसाइयों के अन्य शत्रुओं को घोड़े, हथियार, लोहा, फ़ौलादी तार, तांबा, कांस्य, क़लमी शोरा, गंधक और वे सभी चीज़ें जो तोपख़ानासाज़ी के काम आती हों और ऐसे उपकरण, हथियार और युद्धक सामान जो ईसाइयों के ख़िलाफ़ लड़ाई में काम आता हो, इनके अतिरिक्त रस्सी और इमारती लकड़ी एवं जहाज़साज़ी का दूसरा सामान एवं निषिद्ध चीज़ें उपलब्ध कराते हों । एक सौ वर्ष के पश्चात इसी प्रकार की धर्माज्ञा पोप अर्बन सप्तम ने जारी की जिसमें एक लंबी सूची दी गयी थी । इसमें उन लोगों को भी धर्म से निष्कासित करने की घोषणा की गयी थी जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से तुर्कों और ईसाई धर्म के अन्य शत्रुओं को सुविधा या जानकारियां पहुंचाते हैं ।

केवल वेटिकन ही इस कारोबार से चिंतित नहीं था, बल्कि यूरोपीय सरकारें भी शिकायत करती थीं कि उनकी विरोधी यूरोपीय शक्तियां तुर्कों को युद्धक सामग्री और सैनिक विशेषज्ञता प्रदान करती रहती हैं । 16वीं के अंत में और 17वीं सदी के आरंभ में कैथोलिक देश प्रोटेस्टेंट देशों विशेषकर इंग्लिस्तान पर अनवरत रूप से आरोप लगाते रहते थे कि वे अनेक प्रकार के युद्ध संबंधी सामान विशेष रूप से टीन उपलब्ध करते रहते हैं । "तुर्क विशेष रूप से अंग्रेज़ों के साथ इसलिए मैत्री इच्छुक है, क्योंकि उनके पास टीन है और जो पिछले कई वर्षों से वहां भेजा जा रहा है और जो उनके लिए बहुत ही मूल्यवान है, क्योंकि उनके बिना वे अपनी तोपें नहीं ढाल सकते ।

इस व्यापार से अंग्रेज़ बहुत फ़ायदा उठा रहे हैं, अर्थात वे उत्तरी अफ़्रीक़ा से केवल इसी माल का व्यापार कर रहे हैं । एक इंग्लिस्तानी जहाज़ पकड़ा गया जो तुर्की जाने वाले माल से लदा हुआ था । उसमें बारीक ऊनी कपड़े की दो सौ गांढ़ें, बन्दूक़ें, दो सौ तलवार के फल, सोने के डलों से भरा एक कनस्तर, बीस हज़ार सोने के सिक्के, बहुत-से चांदी के सिक्के और दूसरी क़ीमती चीज़ें शामिल थीं । इनके अतिरिक्त कपड़े पर कशीदा की हुई एक रचना भी मिली जो तुर्की भाषा में थी और वे सुल्तान के आदेश थे ।"

लेकिन धर्म से निष्कासित करने के ये आदेश और दूसरी धमकियां उन लोगों के लिए व्यर्थ सिद्ध हुए जो इस लाभप्रद कारोबार में लगे थे । ईसाई शक्तियों की ओर से उस्मानी और दूसरी मुस्लिम हुकूमतों के साथ हथियारों और युद्ध संबंधी सामानों का व्यापार क्रमशः बढ़ता रहा और एक समय ऐसा आया जब यह एक बड़ा कारोबार बन गया । गुलामों और युद्ध संबंधी सामानों एवं उपकरणों के अतिरिक्त यूरोप के पास ऐसी कम ही चीज़ें थीं जिनके प्रति मुसलमान ख़रीदारों का कोई आकर्षण हो ।

अलबत्ता एक और ऐसी चीज़ थी जिसका उल्लेख मुसलमानों की रचनाओं में बार-बार आता है और वह थी इंग्लिस्तान का कपड़ा । यह कपड़ा मध्यकाल में पश्चिमी दुनिया में पहले ही बहुत जन प्रिय था । दसवीं सदी का पर्यटक इब्न याक़ूब, शाशी द्वीप (संभवतः एंग्लो सैक्शन इंग्लिस्तान) के बारे में लिखता है–

''वहां एक प्रकार का अत्यंत सुंदर ऊन होता है जिसकी मिसाल किसी और भू-क्षेत्र में नहीं पायी जाती । कहा जाता है कि इसका कारण है कि उनकी स्त्रियां सूअर की चर्बी से उसे चिकना करती हैं । इससे उसमें निखार आ जाता है । इसका रंग सफ़ेद या फ़िरोज़ी होता है और बहुत ही मनमोहक होता है ।''

इसके बाद का एक भूगोलशास्त्री इब्न सईद इस विवरण में यह वृद्धि करता है–

''बारीक क़िरमिज़ी कपड़ा वहां (इंग्लिस्तान में) बनता है । इस द्वीप में उनके पास ऐसी भेड़ें हैं जिनका ऊन रेशम की भांति नरम होता है । वे लोग अपनी भेड़ों को वर्षा, धुएं और धूल-गर्द से बचाने के लिए ढांके रखते हैं ।''

इब्न सईद के इस बयान को बाद में आने वाले भूगोलशास्त्रियों ने भी नक़ल किया है । एक हवाला रशीदुद्दीन ने भी दिया है । उसने लिखा है–

''दोनों द्वीपों (आयरलैंड और इंग्लिस्तान) में उनके पास ऐसी मादा भेड़ें हैं जिनके बालों से बारीक ऊनी कपड़ा और क़िरमिज़ी कपड़ा बनता है ।''

इस कपड़े को 'इश्कारलात' लिखा गया है, लेकिन यह शब्द कहां से निकला, इसका पता नहीं चलता । ख़याल है कि अरबी और फ़ारसी में यह शब्द पश्चिम के शब्द से लिया गया है । पश्चिम में यह शब्द पश्चिम से नहीं आया । इस पर काफ़ी वाद-विवाद हो चुका है कि 13वीं सदी में यह शब्द विशेष रंग के लिए प्रयुक्त होता था या किसी प्रकार के कपड़े के लिए ? अनुमान है कि यह कपड़े के लिए प्रयुक्त होता होगा । स्कारलेट हो कुछ भी था वह 13वीं सदी में इंग्लिस्तान की एक बड़ी पैदावार या वस्तु थी । और इसके व्यापार का पूर्वी देशों में उल्लेख काफ़ी महत्व रखता है ।

ऊपर जिन स्रोतों का हवाला दिया गया है उनसे स्पष्ट होता है कि स्कारलेट ऐसी चीज़ थी जो सुनी-सुनायी बातों तक ही सीमित थी और वह यूरोप के अविकसित क्षेत्रों में पायी जाती थी । फिर भी 15वीं सदी तक उस्मानी दस्तावेज़ों में स्पष्ट रूप से इंग्लिस्तान के कपड़े का उल्लेख मिलता है जो उस्मानी साम्राज्य में आयात किया जाता था ।

18वीं सदी के अंत तक व्यापार का संतुलन मध्य-पूर्व और उत्तरी अफ़्रीक़ा के मुस्लिम देशों के विरुद्ध और पश्चिमी देशों के पक्ष में बहुत अधिक हो गया । मध्यकाल के अंतिम और आधुनिक कालों के प्रारंभ में यूरोप के उद्योग-धंधों में जो परिवर्तन और विकास हुआ एवं व्यापारिक

0291-2658786

HOTEL Crown Plaza

A/C & Non A/C Air Cooled Rooms & Dormitory

Opp. Minerva Centre,
Railway Station Road, Jodhpur-342001 (Raj.)
Cell : 9784856007, 9414110345

½ km from the railway station

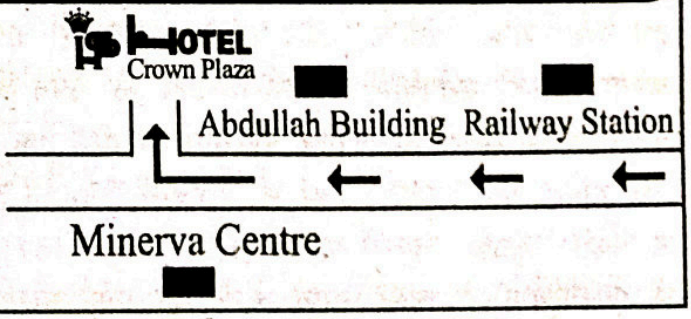

गतिविधियों में जो वृद्धि हुई, उसने इस अमल को तेज़ करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । समुद्री मार्ग खुलने और उनके विकास से मध्य-पूर्व का मार्ग महत्वहीन हो गया ।

अब ईरान के रेशम का व्यापार जो कभी तुर्की के लिए कच्चे माल की उपलब्धता और टैक्स की आय के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण था, यूरोपीय व्यापारियों के हाथ में चला गया, क्योंकि अब व्यापार का मार्ग बदल गया था । नयी दुनिया में यूरोप में नयी बस्तियां बनीं, वहां व्यापारियों ने अपने व्यापारिक केन्द्र बना लिये, इस प्रकार स्वयं यूरोप के भीतर उद्योग-धंधों के लिए भी अवसर पैदा हुए जिससे यूरोपीय व्यापारियों के पास इतना प्रचुर माल हो गया जो वे मध्य-पूर्व के ख़रीदारों के हाथ बेच सकते थे ।

मुसलमानों और ईसाई दुनिया के बीच अब सही अर्थ में व्यापार का रुख़ बदल गया था । पहले जहां यूरोप मध्य-पूर्व से कपड़ा आयात करता था, वहां अब वह बुना हुआ कपड़ा बेच रहा था और कच्चा माल आयात कर रहा था । इसकी एक सबसे बड़ी मिसाल कॉफ़ी है । पहले कॉफ़ी और उसे मीठा करने वाली शकर दोनों ही मध्य-पूर्व से आती थी । कॉफ़ी जो बुनियादी तौर पर लाल सागर के क्षेत्रों में लायी गयी और फिर वह सारे यूरोप में फैली ।

17वीं सदी के अंतिम 25 वर्षों तक मध्य-पूर्व से यूरोप को निर्यात की जाने वाली चीज़ों में कॉफ़ी एक अत्यंत महत्वपूर्ण चीज़ थी, लेकिन 18वीं सदी के दूसरे दशक तक हॉलैंड निवासी जावा में कॉफ़ी उगा रहे थे और यूरोपीय मंडियों को भेज रहे थे एवं फ़्रांसीसी यहां तक पहुंच गये थे कि पश्चिमी हिन्द के द्वीपों में पैदा होने वाली कॉफ़ी को निर्यात कर रहे थे । 1739 ई० तक पश्चिमी हिन्द का कॉफ़ी का हवाला पूर्वी तुर्क के दूरस्थ स्थान रोम में भी मिलता है । नयी आबादियों में पैदा की जाने वाली कॉफ़ी लाल सागर की कॉफ़ी से सस्ती थी, इसलिए लाल सागर की कॉफ़ी की मांग बहुत कम हो गयी ।

शकर का आविष्कार मूलत: पूरब में ही हुआ है । यूरोप इसे मिस्र, शाम (सीरिया) और उत्तरी अफ़्रीक़ा से आयात करता था और यूरोपवासी ही इसे सिसली और स्पेन लेकर गये थे । वहां से यह अटलांटिक महासागर के द्वीपों तक और नयी दुनिया तक पहुंची । यहां भी पश्चिमी हिन्द के द्वीपों ने अवसर जुटाया, जिससे फ़ायदा उठाया गया । 1671 ई० में फ़्रांसीसियों ने शकर साफ़ करने का एक कारख़ाना ब्रसेल्ज में लगाया, जहां से वे तुर्की को शकर निर्यात करते थे ।

तुर्कों ने जब अपनी कॉफ़ी को मीठा करना प्रारंभ किया तो शकर की मांग में अचानक वृद्धि हो गयी । कॉफ़ी को मीठा करने की आवश्यकता संभवत: इसलिए पड़ी थी कि पश्चिमी हिन्द की कॉफ़ी तीखी होती थी । इससे पहले वे मिस्री कॉफ़ी इस्तेमाल करते थे । पश्चिमी हिन्द की कॉफ़ी सस्ती थी, इसलिए वह मध्य-पूर्व की मंडियों पर छा गयी । 18वीं सदी के अंत तक हालत यह हो गयी कि तुर्क का पश्चिम निवासी कॉफ़ी की जो प्याली पीता था, उसकी कॉफ़ी और शकर दोनों ही मध्य अमेरिका में उपजायी जाती और फ़्रांसीसी या हालैंड के व्यापारियों द्वारा आयातित होती । केवल गरम पानी स्थानीय होता ।

नये व्यापार में एक और नयी चीज़ तम्बाकू थी । इस्लामी दुनिया के लिए यह नयी चीज़ थी और व्यापारी इसे अमेरिका की नयी आबादियों से लाए थे । इतिहासकार पजवी 1635 ई० में यह लिखते हुए कि, "तम्बाकू के इस बदबूदार और क़ै उत्पन्न करने वाले धुएं", तम्बाकू के बारे में लिखता है, "फ़िरंगी इन्कारी इसे 1009 सन हिजरी (तदनुसार 1601 ई०) में लाये और स्राव से उत्पन्न होने वाले कुछ रोगों की चिकित्सा के लिए बेचा", लेकिन इसका इस्तेमाल तेज़ी के साथ चिकित्सा के अतिरिक्त भी बढ़ने लगा ।

वह लिखता है, "इसने भोग-विलास के मतवालों और यौनाचारियों को क़ाबू में कर लिया और बहुत-से बड़े आलिम और सत्तासीन लोग भी इसकी चंगुल में आ गये ।" पजवी ने तम्बाकू को स्वीकार किये जाने के कारण का विस्तारपूर्वक उल्लेख करते हुए लिखा है, "कॉफ़ीख़ानों के लफ़्गों के न समाप्त होने वाले धुएं से कॉफ़ीख़ाने नीले धुएं से ऐसे भरे रहते हैं कि वहां मौजूद लोग एक-दूसरे को देख भी नहीं सकते । सार्वजनिक स्थानों पर भी नशा करने वाले हवा को ज़हरीला कर देते हैं ।" उनके पाइप कभी उनके हाथ से नहीं छूटते । एक-दूसरे के चेहरों पर और आंखों में धुआं छोड़ते हुए ये लोग सारी सड़कों और बाज़ारों को दुर्गंध युक्त कर देते हैं ।" ऐसी परिस्थिति और इसके बुरे प्रभावों के बावजूद "1045 सन हिजरी (तदनुसार 1635-1636 ई०) के प्रारंभ तक यह चीज़ सब जगह फैल चुकी थी और यह इतनी प्रचलित हो चुकी थी कि न इसका वर्णन किया

जा सकता है और न इस पर लिखा जा सकता है ।''

18वीं सदी के अंत तक मध्य-पूर्व की आर्थिक दशा यूरोप के मुक़ाबले में अत्यंत ख़राब हो चुकी थी । अतएव उसने आने वाली सदी में दूसरों के सैनिक और राजनैतिक वर्चस्व का मार्ग खोल दिया, लेकिन मुसलमान लेखकों के यहां इसका एहसास बिल्कुल नज़र नहीं आता । मुसलमान पाठक यूरोप की उन पुस्तकों से बिल्कुल बेख़बर थे, जहां यूरोपीय लेखक आर्थिक विषयों पर लिख रहे थे । इस विषय-पर यूरोप की एक भी पुस्तक का अरबी, फ़ारसी या तुर्की में अनुवाद नहीं किया गया । यह काम कहीं 19वीं सदी के अंत में किया गया । उस समय तक जो थोड़ी- बहुत रचनाएं मौजूद थीं, वे यूरोप के राजनैतिक और सैनिक मामलों से संबंधित थीं ।

यूरोप की अर्थव्यवस्था के बारे में कुछ भी नहीं था, लेकिन संभवतः मराकश का राजदूत एक अपवाद था जो 1690-1691 ई० में मैड्रिड गया था । अमेरिका में स्पेन की सफलताओं से उत्पन्न होने वाले प्रभावों पर उसने जो कुछ लिखा उसमें उसकी दूरदर्शिता और इब्न ख़लदून के जनसंख्या संबंधी दर्शन के स्वर सुनायी पड़ते हैं–

''पश्चिमी हिन्द में बहुत-से सूबे और विस्तृत क्षेत्र अभी तक हस्पानिया के क़ब्ज़े में हैं । और प्रत्येक वर्ष वहां से जो कुछ हस्पानियाई लाते हैं, उससे वे धनी हो रहे हैं । भारतीयों की ज़मीनों पर क़ब्ज़े और उनके शोषण से अपार धन जो वे वहां से प्राप्त कर रहे हैं उससे आज हस्पानवी क़ौम के पास सबसे अधिक धन है और सभी ईसाइयों में उनकी आय सबसे अधिक है । लेकिन भोग-विलास और आराम व चैन उन पर अपना प्रभाव डाल चुका है और आप यदा-कदा ही इस क़ौम का कोई आदमी देखेंगे जो व्यापार में लगा हो या कारोबार के लिए विदेश-यात्रा करता हो ।

जिस प्रकार दूसरी क़ौमें जैसे वलन्देज़ी (हॉलैंडी), अंग्रेज़, फ़्रांसीसी, जेनेविया वाले या ऐसे दूसरे लोग कर रहे हैं, उसी प्रकार निचले तबक़े में तो दस्तकारी और उद्योग-धंधे हैं, लेकिन बड़े तबक़े इसे तुच्छ समझते हैं और वे अपने आपको दूसरी ईसाई क़ौमों से श्रेष्ठ मानते हैं । उद्योग-धंधों से जुड़े जो लोग हैं उनमें बहुतायत फ़्रांसीसियों की है । इसका कारण यह है कि उनके अपने देश में बहुत कम मज़दूरी मिलती है । ये लोग हस्पानिया की ओर भागते हैं काम और धन की खोज करने, थोड़ी ही अवधि में वे ख़ूब धन कमा लेते हैं ।'' उस्मानी राजदूत वासिफ़ ने भी जो 1787-1788 ई० में स्पेन में राजदूत रहा, अमेरिकी सोने से उत्पन्न होने वाले कुछ प्रभावों पर टिप्पणी की है । वह लिखता है, ''प्रत्येक तीन वर्ष बाद लगभग पांच छह हज़ार हस्पानवी खनिक नयी दुनिया के खानों में काम करने के लिए भेजे जाते हैं । यह इसलिए आवश्यक है कि अधिकतर खनिक वहां का मौसम सहन नहीं कर सकते और मर जाते हैं ।

सोना और चांदी मैड्रिड के टेक्साल में आते हैं, लेकिन आबादी बहुत कम है और कृषि का बुरा हाल है जिसके कारण हस्पानवी मराकश से खाद्य सामग्रियां आयात करने पर विवश हैं । यही कारण है कि वे मराकश के सम्राट को खुश रखने की कोशिश करते हैं । वे बिना ढले सोने और चांदी की बड़ी मात्रा मैड्रिड भेजते हैं । मैड्रिड में उनके भेजे हुए सांचे के अनुसार सिक्के ढाले जाते हैं, जिन पर मराकश के सम्राट का सिक्का उत्कीर्ण होता है ।

वज़ीर अल-ग़सानी आर्थिक मामलों पर और भी बहुत कुछ कहता है । मुहम्मद आफ़ंदी भी इस पर टिप्पणी करता है और उन कारख़ानों से बहुत प्रभावित दिखायी पड़ता है जिनमें वह गया । उन कारख़ानों में कपड़ा और शीशे का सामान बनता था ।

18वीं सदी के अन्तिम वर्षों में रज़मी और अज़मी जैसे राजनयिक उन देशों के व्यापार और उनकी चीज़ों का बार-बार हवाला देते हैं जहां वे गये । रज़मी, जो रोमानिया और पोलैंड होता हुआ 1777 ई० में बर्लिन पहुंचा, कई बातें बताना है । वह लिखता है, ''पोलैंड की राजधानी में पोलिश लोगों के अतिरिक्त रूसी और यहूदी एवं दूसरी दो क़ौमें भी हैं । रूसी कृषि और दूसरे मशक़्क़त के काम करते हैं और यहूदी शहरों के अन्दर गेहूं और दूसरी चीज़ों का कारोबार करते हैं । इसके अतिरिक्त क्रय-विक्रय का मुनाफ़े वाला कारोबार भी वही करते हैं, लेकिन सबसे अधिक फ़ायदा पोलिश निवासियों का ही है जो सोने की धातुओं से बने चौड़ी आस्तीनों वाले कोट पहनते हैं और भेड़ों के बच्चे की नरम ख़ाल वाली टोपी ओढ़ते हैं ।'' प्रूशिया में वह शकर और कपड़े के कारख़ाने देखता है और देखता है कि वहां जो कारख़ाने हैं उनकी मशीनें भी बर्लिन शहर में बनायी गयी हैं ।

रज़मी लिखता है कि प्रूशिया के लोग चीनी के बरतनों

के बहुत शौक़ीन हैं । ये बरतन पहले चीन और हिन्दुस्तान से आयात किये जाते थे, लेकिन फिर वे स्वयं ही बनाने लगे । पहले ये बरतन सैक्सनी में तैयार हुए और अब हाल ही में बर्लिन में बनने लगे हैं । उसका उत्तराधिकारी अज़मी, जो 1790 ई॰ में बर्लिन गया, यद्यपि सैनिक और राजनैतिक मामलों से अधिक दिलचस्पी लेता था, लेकिन वह प्रूशिया की उस सफल कोशिश का उल्लेख करता है जो उसने कारख़ाने लगाने के लिए की और जिसके कारण देश की उन्नति हुई और वह समृद्धशाली हुआ ।

उस्मानी काल की साहित्यिक रचनाओं में 19वीं सदी से पहले यूरोप का हवाला यदा-कदा ही मिलता है । इसका एक उदाहरण कवि हशमत के क़सीदे (प्रशंसात्मक काव्य) में मिलता है जो उसने 1757 ई॰ में सुल्तान मुस्तफ़ा सालिस के सिंहासनारोहण के अवसर पर लिखी थी । इस क़सीदे में वह नये सुल्तान के सिंहासनारोहण की शान व शौकत बयान करता है और काव्यालक शैली में एक स्वप्न का वर्णन करता है कि धरती के सारे सम्राट इस्लामी जगत के इस सम्राट की सेवा में उपस्थित होते हैं और अपनी वफ़ादारी का विश्वास दिलाते हैं । स्वप्न में एक-एक सम्राट आता है और अपनी इच्छाएं प्रकट करता है और निवेदन करता है कि उसे वह रुतबा दिया जाए जो वह चाहता है । प्रत्येक सम्राट अपने देश की विशेषताएं वर्णित करता है और नये सुल्तान के दरबार में सेवा करने का आग्रह करता है । चीन का सम्राट शाही महल में 'ख़ासादार बनने का निवेदन करता है ताकि वह चीनी के बरतनों की देख-भाल कर सके । यमन का शासक कॉफ़ी बनाने की ज़िम्मेदारी संभालना चाहता है । इसके बाद यूरोप के छह शासक आते हैं । उनके आगमन का क्रम यह है ।

पहले रूस का ज़ार आता है जो 'ख़ैयात आला' बनने का इच्छुक है कि वह शाही परिधान तैयार करेगा । आस्ट्रिया का शासक शीशासाज़ी में निपुण होने का दावा करता है और निवेदन करता है कि उसे शीशा और आईनासाज़ों का अफ़सर बना दिया जाए । वीनस गणराज्य का उच्चाधिकारी क़ीमती धातुओं से संबंधित अपनी निपुणता का उल्लेख करता है और कहता है कि उसे इस विभाग का अफ़सर बना दिया जाए ।

इंग्लिस्तान का सम्राट अपने देश में बारूद और युद्ध संबंधी सामग्री व उपकरण के उत्पादन का उल्लेख करता है एवं निवेदन करता है कि उसे सैन्य उत्पादन का प्रभारी नियुक्त कर दिया जाए । हॉलैंड का सम्राट बड़े गर्व से अपने देश में पैदा होने वाले फूल ट्यूलिप और दूसरे फूलों का हवाला देता है और कहता है कि उसे बाग़बान बना दिया जाए । अंत में फ़्रांस का सम्राट आता है जो अपने देश में बनने वाले 'लठे' और दूसरे कपड़े का उल्लेख करता है और आग्रह करता है कि उसे शाही परिधानों का देखभाल के लिए नियुक्त कर दिया जाए । इनके अतिरिक्त किसी दूसरे यूरोपीय शासक का उल्लेख इस क़सीदे में नहीं किया गया है ।

आजीविका के इतिहास के रूप में हशमत के स्वप्न का कोई महत्व नहीं है, लेकिन इससे यह अनुमान किया जा सकता है कि यूरोप के देशों और उनकी पैदावार एवं चीज़ों के बारे में उस्मानी साम्राज्य की क्या कल्पना थी ।

अबू तालिब ख़ान, जो 18वीं सदी के अंत में इंग्लिस्तान गया, अपनी पुस्तक का एक अध्याय उन कारख़ानों पर है जो उसने देखे । कारख़ानों की संख्या और उनके उच्च स्तर का उल्लेख करते हुए वह कहता है कि इंग्लिस्तान के धन और उसकी बड़ाई का यही राज़ । यही कारण है कि इंग्लिस्तान ने अपने अधिकार और अपनी सत्ता दूरस्थ क्षेत्र तक फैला ली है और यही कारण है कि उसके पड़ोसी फ़्रांस के लिए अपनी सभी शक्ति और संकल्प व साहस के बावजूद उसका मुक़ाबला करना असंभव हो गया है ।

अबू तालिब ने कई प्रकार की मशीनों का उल्लेख किया है । वह अपने वर्णन का प्रारंभ करता है साधारण-सी मशीन से जो मकई के दाने पीसती है और अंत में बड़ी इस्पाती फाउंडरियों का विस्तार से वर्णन करता है जो स्टीम से चलती है । वह तोपसाज़ी का हवाला देता है और धातु की चादरों और सुई का उल्लेख करते हुए कपड़ा बुनने वाली स्पिनिंग जेनी की तेज़ी और तत्परता की ख़ूब प्रशंसा करता है । इस करघे या खड्डी का उल्लेख करते हुए वह कहता है कि इस मशीन के द्वारा अधिक तीव्रता के साथ बहुत अधिक कपड़ा बुनना संभव हो गया है और इस प्रकार अधिक काम करने वालों की आवश्यकता ही नहीं रही । फिर भी वह हिन्दुस्तान के कपड़े के मुक़ाबले में इंग्लिस्तान के कपड़े के स्तर को न्यून ठहराता है । अबू तालिब काग़ज़ बनाने वाले और दूसरे कारख़ानों में गया और हाईड्रोलिक पम्प से बहुत प्रभावित हुआ, जिसके द्वारा लंदन को पानी

उपलब्ध किया जाता था । उसने इस सफ़र में यह भी सुना था कि बावर्चीख़ाने में इस्तेमाल के लिए भी मशीन बन गयी है ।

वह लिखता है, "इस राज्य के लोग बहुत ही अधीर हैं और मेहनत, मुशक़्क़त से जी चुराते हैं, इसलिए उन्होंने बावर्चीख़ाने में इस्तेमाल करने के लिए मशीन बना ली है । यह मशीन मुर्ग़ भूनती है, गोश्त का क़ीमा बनाती है और प्याज़ काटती है ।

मालूम होता है कि अबू तालिब इंग्लिस्तान के बहुत-से कारख़ानों में गया था । उसने वहां जो कुछ देखा, उससे बहुत प्रभावित हुआ । अपने प्रारंभिक वाक्यों में वह इस देश की सैनिक और आर्थिक शक्ति का बार-बार उल्लेख करता है । कला संबंधी और आर्थिक उन्नति का राजनैतिक और सैनिक शक्ति के साथ जो संबंध है उस पर अधिक विस्तारपूर्वक कुछ समय के पश्चात आने वाले उस्मानी पर्यटक ख़ालिद आफ़ंदी ने लिखा । ख़ालिद आफ़ंदी 1803 ई० से 1806 ई० तक पेरिस में तुर्क राजदूत रहा । वह फ़्रांसीसियों और दूसरे यूरोपीय देशों को पसन्द नहीं करता था और उनका अनुकरण करने के सख़्त ख़िलाफ़ था । उसकी दृष्टि में इसका हल आसान था । वह लिखता है–

"अल्लाह की कृपा और उसके अनुग्रह से मेरा विचार यह है कि यदि आपात उपाय अपनाए जाएं और प्रत्येक तीन या चार वर्ष पश्चात 25 हज़ार अशरफ़ियों की थैलियां प्राप्त कर ली जाएं, पांच कारख़ाने सूंघने के तम्बाकू के, काग़ज़ के, शीशे के, कपड़े के और बरतनों के क़ायम कर दिये जाएं । इनके अलावा भाषा और भूगोल के केन्द्र खोल दिये जाएं तो केवल पांच वर्ष में उनके लिए कुछ नहीं रह जाएगा, क्योंकि उनका अस्ल व्यापार इन्हीं पांच चीज़ों का होता है । अल्लाह तआला हमारे आक़ाओं को साहस प्रदान करे, आमीन ।"

ख़ालिद ने शैक्षिक उन्नति की जो बात की है उसका एहसास 18वीं सदी के सुधारकों को भी था । उसने यूरोप की शक्ति का एक कारण औद्योगिक पैदावार को ठहराया, चाहे उसने कितनी ही सादगी से यह बात की, लेकिन उसने मध्य-पूर्व के लोगों के सामने एक समस्या प्रस्तुत कर दी थी । अतएव 19वीं सदी में तुर्की, मिस्र और ईरान आदि के सुधारवादी शासकों के लिए इस समस्या ने विशेष महत्व प्राप्त कर लिया था और वे साइंस और उद्योग को ऐसी तिलस्मी छड़ी समझने लगे थे जिससे पश्चिम के अमूल्य कोष प्राप्त किये जा सकते थे ।



शासन और न्याय

एक मुसलमान के लिए केवल वह समुदाय ही पूरी दुनिया का केन्द्र था जिसका वह स्वयं एक सदस्य था क्योंकि अल्लाह के साथ किसी के शरीक न होने की सच्चाई और ईश्वरीय जीवन-व्यवस्था का ज्ञान रखने वाला वही समुदाय था। इस इस्लामी दुनिया में केवल एक राज्य था और वह था ख़िलाफ़त। और एक ही उच्चाधिकारी था, वह था ख़लीफ़ा, जो इस्लामी समुदाय का वैध नेतृत्व और इस्लामी शासन-व्यवस्था का अधिपति था।

पहली सदी या इससे कुछ अधिक अवधि तक यह अवधारणा वास्तव में यथार्थ पर आधारित थी। निस्संदेह इस्लामी बिरादरी में एकत्व था और मुसलमानों की राजनीति में भी एकता थी। इन चीज़ों में बिना किसी गतिरोध के तेज़ी के साथ प्रगति हुई। उस काल के लोगों को निश्चय ही स्पष्ट दिखायी पड़ता होगा कि यह तीव्रगामी उन्नति और इसके साथ विजयों एवं इस्लाम स्वीकार करने वालों की बढ़ती हुई संख्या बहुत शीघ्र ही सारी मानवजाति को इस्लाम की गोद में ले आएगी।

आठवीं सदी में अरब के मुसलमान अपने उत्कर्ष को पहुंच गये, लेकिन फिर धीरे-धीरे यह वास्तविकता प्रकट होनी प्रारंभ हुई कि मुस्लिम राज्य और आस्था की अग्रसरता में अंतराल और गतिरोध उत्पन्न हो गया है। कोंस्टंटी नोपल (बाद में कुस्तुन्तुनिया) पर क़ब्ज़ा करने की बड़ी योजना स्थगित कर दी गयी। इसे कई सदी बाद उस्मानी तुर्कों ने उस समय पुनः जीवित किया, जब मुस्लिम विजयों की नयी लहर आयी, लेकिन इसके साथ ही मध्य यूरोप में यह अग्रसरता रुक गयी।

एक ऐसे विश्वव्यापी इस्लामी समुदाय की अवधारणा तो बनी रही जिसमें सारी मानवजाति सम्मिलित होगी, लेकिन इस अवधारणा को वास्तविक रूप देने का कार्य कठिन हो गया। कुछ समय बाद इस्लामी सल्तनत के अन्दर ही ऐसे स्वतंत्र राज्य अंस्तित्व में आये, जो केवल प्रतीकात्मक रूप से ही ख़लीफ़ा की अधीनता स्वीकार करते थे। धीरे-धीरे मुक़ाबिल ख़िलाफ़तें क़ायम हो गयीं और 1258 ई० में मंगोलों के हाथों बग़दाद में ख़िलाफ़त के समाप्त होने के बाद वैचारिक रूप से मुसलमानों की राजनैतिक एकता का समापन हो गया। फिर भी एकमात्र इस्लामी नेतृत्व का उद्देश्य मुसलमानों के दिल और दिमाग़ पर छाया रहा। इसका प्रकटन ख़िलाफ़त काल समाप्त होने के बाद मुसलमान सम्राटों को धार्मिक 'तक़द्दुस' (बुज़ुर्गी) प्रदान करने की सूरत में होता रहा। मध्यकाल से 19वीं सदी तक इस्लामी दुनिया में सबसे अधिक विशेष बात यह नज़र आती है कि इसमें कोई स्थानीय और समग्र क्षेत्रीय या क़ौमी एकत्व शेष नहीं था, यहां तक कि ऐसा कोई राजकीय मर्तबा या पद भी नहीं था जैसे यूरोप में आरंभ ही में मौजूद था जैसे फ़्रांस के सम्राट, इंग्लिस्तान के सम्राट, डेनमार्क के सम्राट या और इसी प्रकार क़ौमी सम्राट।

मुस्लिम मध्य-पूर्व में ऐसा कोई पद नहीं था। इससे प्रकट होता है कि मध्यकाल के राज्यों में निरंतर परिवर्तन होता रहता था और वह स्थिरता नहीं थी। उस काल में ऐसा नहीं था कि एक ही क्षेत्र में एक शासक के बाद उसका उत्तराधिकारी शासन करे। मंगोल हमले के बाद यद्यपि मुसलमान हुकूमतें अपेक्षाकृत अधिक स्थिर और सुदृढ़ हो गयी थीं। इसके बावजूद एक के बाद एक शासकों का परिवर्तन एक स्थायी समस्या बनी रही। 1500 ई० तक मध्य-पूर्व में केवल तीन ऐसी सल्तनतें थीं, जिन्हें कोई महत्व प्राप्त था। एक तुर्की, दूसरी ईरान और मिस्र की सल्तनतें। फिर मिस्र और उसको ख़िराज देने वाले राज्यों पर तुर्क क़ब्ज़े के बाद दो ही सल्तनतें शेष रह गयीं। लेकिन उनके लिए वही शब्दावली प्रयुक्त होती थी अर्थात सुलतान-ए-तुर्की, शाह-ए-ईरान और सुल्तान-ए-मिस्र। ये शब्दावली या उपाधि वे स्वयं प्रयुक्त नहीं करते थे, बल्कि उनके प्रतिपक्षी या विदेशी लोग प्रयुक्त करते थे।

उनकी दृष्टि में किसी क्षेत्र के शासक की हैसियत से पहचाना जाना उनके अपमान के समान था, अर्थात इस प्रकार वे एक क्षेत्र तक सीमित हो जाते थे। अतएव मिस्र, ईरान या तुर्की के शासक जब स्वयं अपना हवाला देते थे तो वे सुल्तान-ए-इस्लाम या उम्मते मुस्लिमा (मुस्लिम समुदाय) के बादशाह या इस्लामी भू-क्षेत्र के शहंशाह कहते थे, तुर्की,

ईरान या मिस्र के बादशाह नहीं ।

दूसरे मामलों की भाँति इस मामले में भी आम रुझान यह था कि मुसलमानों और ग़ैर-मुस्लिमों दोनों को वे अपने जैसा ही समझते थे । वे दूसरों में भी अपना ही प्रतिबिम्ब देखना चाहते थे । चूंकि 'दारुल इस्लाम' (इस्लाम का घर) में भी एकत्व था, इसलिए स्वाभाविक बात थी कि 'दारुल हर्ब' (युद्ध का घर) में एकत्व माना जाए । इस्लामी भू-भाग से बाहर इन्कारियों के अन्दर क़ौमों या क्षेत्रों का विभाजन उनके लिए दिलचस्पी का कारण नहीं था और न उनके लिए इसका कोई महत्व था ।

एक ओर इतिहासकारों का ध्यान इस्लामी समुदाय और उनके शासकों तक ही सीमित था तो दूसरी ओर उनके अपने शासक इन इन्कारियों और वहशियों के साथ किसी न किसी प्रकार के मामले तय करने के प्रयासों में लगे हुए थे । इस उद्देश्य के लिए उनके बारे में जानकारियां भी इकट्ठा कर रहे थे ।

इन्कारियों की शासन-व्यवस्था और उनकी राजनीति के विभाजन के सिलसिले में सबसे पहली समस्या यह थी कि विभिन्न शासकों की पहचान की जाए । इससे कुछ और दिलचस्प समस्याएं पैदा हो गयीं । आरंभिक मुस्लिम रिवायतों में जब इस काल का उल्लेख किया जाता था, तब इस्लाम अभी अरब प्रायद्वीप तक ही सीमित था । उस समय ऐसे तीन सम्राटों का नाम लिया जाता था जो आसपास के क्षेत्रों पर क़ाबिज़ थे ।

ये तीन सम्राट थे–किसरा, क़ैसर और नज्जाशी । इनमें से किसी का भी नाम क़ुरआन में नहीं आया । केवल क़ुरआन की टीका और व्याख्या करते समय इनके नाम लिखे गये । ये सभी बाहर के नाम हैं जो संभवत: आरामी भाषा से अरबी में आये थे । किसरा 'ख़ुसरू' से, क़िसरा 'सेयर्ज़' से और नज्जाशी इथियोपिया के 'नेक्स' से निकला था । मुसलमान इन नामों को इन देशों के सम्राटों के व्यक्तिगत नाम समझते थे, हालांकि वे उस काल में उन तीन अत्यंत महत्वपूर्ण देशों पर शासन करने वालों की उपाधियां थीं । हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की एक हदीस बयान की जाती है कि "यदि किसरा समाप्त हो जाता है तो उसके बाद कोई किसरा नहीं आएगा । और यदि क़ैसर मर जाता है तो उसके बाद कोई क़ैसर नहीं आएगा । क़सम उसकी जिसके हाथ में मेरी रूह है, तुम उनके ख़ज़ाने अल्लाह की राह में ख़र्च करोगे ।"

निश्चय ही किसरा समाप्त हुआ और निस्संदेह उसके बाद कोई दूसरा किसरा नहीं आया । सासानी सल्तनत पर मुसलमानों का क़ब्ज़ा हुआ और उसे 'दारुल इस्लाम' में शामिल कर लिया गया । इसके साथ ही जरतुश्ती सम्राटों का सिलसिला भी समाप्त हो गया । इथियोपिया (हब्शा) की सल्तनत बाक़ी रही, लेकिन वह चारों ओर से घिरी रही और उसका कम महत्व शेष रह गया । केवल पूर्वी रोमन सल्तनत मुसलमानों के पड़ोसी के रूप में बनी रही । तथापि मुसलमानों ने बाज़न्तीनी सम्राटों के लिए 'क़ैसर' की उपाधि कभी प्रयुक्त नहीं की । कभी-कभी उन्हें अपमानजनक शब्दों से याद किया जाता था । उनके लिए एक शब्द जो सामान्य रूप से बोला जाता था, वह था "ताग़िया", जिसका अर्थ था ज़ालिम और तानाशाह । बाद में ये शब्द यूरोप के सम्राटों के लिए भी प्रयुक्त हुए, लेकिन ये अधिकतर उत्तरी अफ़्रीक़ा के लेखकों ने प्रयुक्त किया ।

एक और संबोधन शैली जो थी वह ख़लीफ़ा हारून रशीद के प्रसिद्ध पत्र से स्पष्ट हो जाता है । ये पत्र ख़लीफ़ा ने बाजन्तीन के सम्राट निके फ़ोर्स को भेजा था । पत्र इस प्रकार आरंभ होता है, "हारून रशीद अमीरुल मोमिनीन की ओर से निके फ़ोर्स कल्बे रोम को, सलाम अलैक", अर्थात अमीरुल मोमिनीन हारून रशीद की ओर से निके फ़ोर्स, रोम के कुत्ते के नाम।

फिर भी बाजन्तीन और अन्य ईसाई शासकों के लिए जो सामान्य शब्दावली प्रचलित थी, वह 'मलक' अर्थात सम्राट थी । अरबी शब्द, 'मलक' और इबरानी के शब्द 'मलख' के उस हवाले से भी जो 'अहदनामा अतीक़' में आया है, बहुत ही नकारात्मक अर्थ रखता था और जब इसे किसी इन्सानी शासक के लिए प्रयुक्त किया जाता था तो इससे अभिप्रेत सांसारिक और अधार्मिक शासक था ।

इस्लाम की प्रारंभिक सदियों में मुस्लिम भू-क्षेत्र के भीतर यह शब्द उस समय बोला जाता था जब किसी की निन्दा करनी होती थी और यह जताना होता था कि वह अल्लाह की ओर से नियुक्त ख़लीफ़ा के मुक़ाबले में केवल सांसारिक शासक ही है । यह तो जब ईरानी रिवायतें इस्लामी राजनीति का हिस्सा बनीं तो शहंशाहियत की सोच पैदा हुई और यह शब्दावली सम्मान के साथ प्रयुक्त की गयी । फिर भी इसका नकारात्मक पहलू किसी न किसी सीमा तक बना

रहा। इसका अंदाज़ा इस बात से भी होता है कि ईसाई शासकों को 'मलूकुल कुफ़्फ़ार' या 'मलूकुलकुफ़्र' कहा जाता था ।

कुछ शासकों के लिए तो 'मलक' या 'बादशाह' की शब्दावली भी उनके लिए बहुत अधिक सम्मानजनक समझी जाती थी । सलीबी सेनाओं ने मुसलमानों से जो क्षेत्र छीना था और वहां छोटे-छोटे राज्य क़ायम किये थे । उन्हें वैध हुकूमत स्वीकार नहीं किया जाता था । राजनयिक शिष्टाचार की एक मिस्री पुस्तक में क़बरज़ और आर्मेनिया के शासकों को संबोधित करने के लिए जो उपाधि दी गयी है वह 'मलक' भी नहीं है, बल्कि 'मुतमलक' है ।

अरबी में इसका अर्थ है वह व्यक्ति जो सम्राट नहीं है, लेकिन सम्राट होने का ढोंग रचाता है । वैसे 'मलक' शब्द बिना किसी भेद के फ़िरंगी राजकुमारों, अफ़्रीक़ा और हिन्दुस्तान के क़बायली सरदारों, बाज़न्तीन और चीनी सम्राटों एवं यूरोप के सम्राटों सबके लिए प्रयुक्त होता था ।

'मलक' के अतिरिक्त 'साहब' या 'अज़ीम' (महान) शब्द भी प्रयुक्त किया जाता था । पत्रों में जो दुआ (प्रार्थना) के शब्द लिखे जाते थे उनका ढंग भी भिन्न था । यदि एक मुसलमान शासक दूसरे मुसलमान शासक को लिखता तो 'अस्सलामु अलैकुम' लिखता, लेकिन जब किसी ग़ैर-मुस्लिम को लिखता तो इस प्रकार लिखता, "सलामती हो उन पर जो सीधे मार्ग पर हैं ।" अतएव मराकश का राजदूत जब स्पेन के सम्राट के सामने पेश हुआ तो उसने इसी अंदाज़ से सम्राट को संबोधित किया । वह लिखता है कि "हस्पानवी 'ताग़या' (सम्राट) इस पर बहुत हैरान हुआ, लेकिन मजबूरन ख़ामोश रहा, क्योंकि वह जानता था कि मैं किसी और प्रकार से उसे संबोधित नहीं करूंगा ।" इससे सदियों पहले शहज़ादा ज़िम के जीवनी लेखक ने लिखा था कि शहज़ादे ने पोप के हाथ-पैर या घुटने का चुंबन देने से इन्कार कर दिया । उसने पश्चिमी संस्कृति के अनुसार पोप के कंधे पर चुंबन लिया था ।

आरंभिक सदियों में ग़ैर-मुस्लिम शासकों के साथ जो राजनयिक पत्राचार होता था उसकी दस्तावेज़ें मौजूद नहीं हैं, फिर भी इतना अवश्य ज्ञात होता है कि लड़ाई छिड़ने से तनिक पहले हारून रशीद ने जिस प्रकार 'कल्बे रोम' (रोम का कुत्ता) कहकर बाज़न्तीनी सम्राट को संबोधित किया था, उसका सामान्य प्रचलन नहीं था, बल्कि एक अपवाद था, जिसका एक ही उदाहरण मिलता है । इस सिलसिले में मध्यकाल की जो अच्छी जानकारियां मिलती हैं, वे मिस्री माध्यम से हैं, जहां सबसे पहले नवीं सदी में बाज़न्तीनी सम्राट को लिखे जाने वाले पत्रों का सुराग़ मिलता है, इसके बाद मिस्र के सरकारी काग़ज़ों से और उन दस्तावेज़ों से उनका पता चलता है जो अधिकतर यूरोप के संग्रहालयों में सुरक्षित हैं ।

लेकिन पूरी जानकारियां इस उस्मानी काल से पहले नहीं मिलतीं । जब पहली बार केवल रोज़नामचे ही नहीं पूरी दस्तावेज़ें भी तैयार की गयीं । इन रोज़नामचों से पता चलता है कि उस्मानियों को सही यूरोपीय उपाधियां इस्तेमाल करने की चिन्ता ही नहीं थी । अतएव सुलतान सलमान जीशान का इतिहासकार कमाल पाशाज़ादा प्रसिद्ध यूरोपीय सम्राटों को तुर्की की उपाधि 'ब्रे' से संबोधित करता है, जैसे बेफ़ास, बेअमान-उस्मानी साम्राज्य में 'बे' की उपाधि प्रांतीय प्रशासकों को दी जाती थी । इस प्रकार यूरोपीय राज्यों को 'विलायत' कहा जाता था । उस्मानी साम्राज्य में 'विलायत' राज्य के छोटे भागों को कहा जाता था ।

उस्मानी पत्रों में सामान्यत: यूरोपीय शासकों को 'क़र्ल' भी कहा जाता था और इस्लामी संस्कृति एवं परंपराएं बनाए रखते हुए उनकी वे उपाधियां भी प्रयुक्त की जाती थीं, जिनसे वे स्वयं अपने आपको संबोधित करते थे । इंग्लिस्तान की महारानी एलिज़बेथ प्रथम को जो पत्र लिखा गया वह इस प्रकार प्रारंभ होता है, "सलामती हो हज़रत ईसा की उम्मत पर, ईसाई जनता की प्रतिष्ठित स्त्रियों की नेता, नसरानी फ़िरक़े के मामलों की पंच जो 'तक़दुस' (बुज़ुर्गी) और शान व शौकत के ठाठ में रहती हैं और जो इंग्लिस्तान की धरती की महारानी हैं । अल्लाह तआला आपके हक़ में अच्छा परिणाम प्रदान करे ।" यूरोप के ईसाई शासकों को जो पत्र लिखे जाते थे, उनमें उपाधि और शिष्ट वचन लिखने का यही ढंग प्रचलित था, इसमें धर्म का उल्लेख विशेष रूप से किया जाता था ।

महारानी एलिज़बेथ प्रथम को जो पत्र लिखा गया है, उसमें तीन बार उनकी ईसाई पहचान को उजागर किया गया है । इसके बाद कहीं जाकर इंग्लिस्तान का ज़िक्र आता है । महारानी ईसाई शासकों में से एक हैं । ईसाइयों के व्यापक एकत्व में वे विलायत इंग्लिस्तान की शासक हैं ।" जिस प्रकार पत्र में दुआ दी गयी है, उससे यह आशा करना

अभीष्ट है कि मरने से पहले वह मुसलमान हो जाएगी और उसे शाश्वत आनन्द प्राप्त हो जाएगा ।

महारानी एलिज़बेथ प्रथम के काल में तुर्की से इंग्लिस्तान को बहुत कम लोग जानते थे और उसके शासक के बारे में कुछ पता नहीं था । मध्य यूरोप के संबंध में वे अधिक जानते थे, जहां वियाना के सम्राट और बाद में प्रूशिया के सम्राट को भी इसी उपाधि से संबोधित किया जाता था, लेकिन इससे पहले उनके सही संबोधन भी सम्मिलित किये जाते थे ।

काफ़ी समय तक उस्मानी दरबार ने ईसाई शासकों को 'बादशाह' से अधिक और कोई उपाधि नहीं दी । मराकश के सुल्तान तो दूसरे मुस्लिम शासकों यहां तक कि ग़ैर-मुस्लिम शासकों को भी 'सुल्तान' की उपाधि से संबोधित कर लेते थे, लेकिन उस्मानी किसी और को यह उपाधि देने को तैयार नहीं थे । दूसरे मुस्लिम और ग़ैर-मुस्लिम शासकों को वे निम्न उपाधि से याद करते थे यहां तक कि मुक़द्दस रोमन सम्राट को भी सामान्यत: इसी प्रकार 'बादशाह' कहकर संबोधित किया जाता था, इसका एक उद्देश्य उसका अपमान करना भी था ।

पहला यूरोपीय संम्राट जिसे किसी हद तक सम्मानजनक ढंग से संबोधित किया गया वह फ़्रांस का फ़्रांस प्रथम था, जिसे तुर्की और फ़्रांस के बीच समझौते में 'पादशाह' कहा गया । हालांकि 'पादशाह' शब्द तुर्की के सुल्तान केवल अपने लिए ही प्रयुक्त करते थे । अगली सदी ही में कहीं जाकर आस्ट्रिया, रूस और दूसरे यूरोपीय शासकों को अधिक सम्मानजनक उपाधि से संबोधित किया गया । अब आम रिवाज यह हो गया कि उनकी अपनी उपाधि ही प्रयुक्त की जाने लगी । आस्ट्रिया के शासकों को अब 'कासिर' कहा जाता था जो क़ैसर का ही एक रूप था । रूस का सम्राट ज़ार था ।

रूसियों ने उपाधि और शिष्टाचार के इस झगड़े को अपने सम्मान का प्रश्न बना लिया । उन्होंने 1774 ई० में होने वाले लिथक कनारया के समझौते में इसे विशेष रूप से शामिल कराया । रूस ने पराजित तुर्की को विवश किया कि वह समझौते की धारा 13 में ये शब्द सम्मिलित करे, "उच्च दरबार वादा करता है कि भविष्य में सभी कथनों और कर्मों में रूस की महारानी की मुक़द्दस उपाधि तुर्की भाषा में इस प्रकार अदा की जाए : "तमामैन रूसी लेरैन बादशाह ।" इसमें तुर्की के विशेष शब्दों को सम्मिलित करना विशेष रूप से उल्लेखनीय है । एक समकालीन रूसी स्मारिका में समझौते के इस बिन्दु का मुख्य रूप से उल्लेख किया गया है और इसे आर्थिक, सैनिक और राजनैतिक रूप से प्राप्त होने वाले फ़ायदों में सम्मिलित किया गया है । उस्मानी ये शब्द कदापि नहीं सम्मिलित करना चाहते थे । यह उनके लिए सरकारी और राजनयिक शिष्टाचार से कहीं अधिक महत्वपूर्ण बात थी । उस्मानी मुसलमानों के सम्मान और उनकी प्रतिष्ठा के लिए यह बड़ा सदमा था । इसका अंदाज़ा एक तुर्क सिपाही की रिपोर्ट से लगाया ज़ा सकता है, जो 1719 ई० में तुर्क राजदूत इबराहीम पाशा के साथ वियाना गया था ।

रिपोर्ट लिखने वाला कोई राजनयिक या सरकारी अफ़सर नहीं है, बल्कि केवल एक सिपाही है । वह अपने बेलाग और तटस्थ अंदाज़ में आस्ट्रिया के सम्राट को 'क़ैसर' कहता है जो तुर्की लिपि में लिखी गयी है । इसका स्पष्टीकरण वह यूं करता है कि जर्मन भाषा में इसका अर्थ है 'पादशाह', फिर बादशाह की सदृशता से बचाने के लिए वह ऐसी उपमा देता है ।

तुर्कों को अपने इस्लामी हाकिमों और यूरोप के कमतर हाकिमों के बीच भेद करने की जो चिंता रहती थी वह पत्रों के अन्दर के लेख और उनके शीर्षक से प्रकट हो जाती है । सुल्तान मुराद सालिस (तृतीय) 1583 ई० में महारानी एलिज़बेथ को लिखता है, "हमारा उच्च दरबार उन लोगों पर अपने अनुग्रह और दानशीलता के लिए खुला है जो निष्ठा प्रकट करें । हमारे दिल जो प्रेम और हर्ष से प्रकाशित हैं सदैव उन लोगों के लिए विशाल है जो वफ़ादारी का दम भरते हैं । आपके राजनयिक...दूसरे सम्राटों के राजनय प्रतिनिधियों की भांति...जो हमारे भव्यतम महराब और उच्चस्थ डयोढ़ी के साथ अपनी श्रद्धा और निष्ठा प्रकट करते हैं, उनका ख़याल रखा जाएगा और उनको सुरक्षा प्रदान की जाएगी । इसलिए आप अपनी ओर से सदैव उच्च दरबार की वफ़ादार और मित्र रहें...श्रद्धा और वफ़ादारी के रास्ते पर जमे रहें और मैत्री व वफ़ादारी के राजमार्ग पर चलते रहें । पत्राचार में भी इसी प्रकार की शैली अपनाने का उद्देश्य यह सिद्ध करना था कि इस प्रकार के संबंधों से यह आशा करते थे कि यूरोप सदैव उनके अधीन रहेगा और उनकी आज्ञाओं का पालन करेगा ।

इसलिए इस बात पर आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए कि मुस्लिम राजनयिक अपना ध्यान शासकों तक केन्द्रित रखते थे । उनसे कम किसी व्यक्तित्व की ओर ध्यान देना उचित नहीं समझते थे । उनका उल्लेख विशेष रूप से उस समय किया जाता था जब उनके साथ मुलाक़ात होती थी । ग़स्सानी विरासत में मिलने वाले पश्चिमी संबोधन और उपाधि पर विचित्र ढंग से आश्चर्य प्रकट करता है । ये उपाधियां विरासत में स्त्रियों को भी मिलती थीं और स्पेन में इन्हें प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास किया जाता था । यदि किसी का पारिवारिक हक़ नहीं होता था तो शादी करके यह उपाधि प्राप्त की जाती थी । मुहम्मद आफ़ंदी अपने पाठकों को फ़्रांस की शासन-व्यवस्था के बारे में बताता है–

''उनके यहां अनेक मंत्री होते हैं जो मिनिस्टर कहलाते हैं । उनका दर्जा मार्शल और ड्यूक से कम होता है । प्रत्येक के पास किसी विशेष कार्य की ज़िम्मेदारी होती है । कोई भी दूसरे के काम में हस्तक्षेप नहीं करता और प्रत्येक उस काम में स्वतंत्र होते हैं जो उसे सौंपा गया है । उपर्युक्त (आर्य बिशप ऑफ़ कैम्बरी) विदेश मामलों की निगरानी करता है, सभी व्यापारिक मामलों की देख-भाल, दूसरे देशों से आने वाले राजनयिकों से बातचीत और यथोचित व्यवहार के लिए फ़्रांसीसी राजदूतों की नियुक्ति एवं पदच्युति का कार्य भी वही करता है ।''

18वीं सदी के अंत तक मुसलमान राजदूत और यूरोप जाने वाले अन्य मुसलमान वहां की सरकार की मौलिक संरचना पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते थे । और उच्च श्रेणी से लेकर निम्न श्रेणी तक के किसी पदाधिकारी से संबंध नहीं रखते थे । लेकिन अंततः उन्होंने इस ओर भी ध्यान दिया । उन लोगों में जिन्होंने इस काम का आरंभ किया, सबसे दिलचस्प व्यक्ति अज़्सी आफ़ंदी है जो 1790 ई॰ से 1792 ई॰ तक बर्लिन में उस्मानी राजदूत रहा ।

इस काल के दूसरे पर्यटकों और लेखकों की भांति यूरोप के बारे में उसकी नीति में भी स्पष्ट बदलाव नज़र आता है । अब ये लोग यूरोपीय निवासियों को केवल अज्ञानी इन्कारी नहीं समझते थे कि उनका उल्लेख उनकी विचित्र हरकतों के कारण ही किया जाए । अब उन्हें शक्तिशाली और उन्नतिशील प्रतिद्वंद्वी स्वीकार किया जा रहा था । ऐसा प्रतिद्वंद्वी जिसका जायज़ा लेना आवश्यक है, ताकि उससे अपनी सुरक्षा की जा सके और यदि हो सके कि उसकी नक़ल भी की जा सके । अज़्मी की रिपोर्ट उसकी यात्रा और नित्य प्रति की गतिविधियों के विवरण से प्रारंभ होती है, लेकिन इस रिपोर्ट का दूसरा भाग अधिक महत्वपूर्ण है । इसमें वह प्रूशिया राज्य पर विभिन्न शीर्षकों के साथ प्रकाश डालता है, जैसे सरकार के संगठन एवं अनुशासन, देशवासी, उच्चाधिकारी, कोष की स्थिति, जनसंख्या, खाद्यान्न का सरकारी भंडार, सेना, शस्त्र व गोला-बारूद और तोपख़ाना ।

आफ़ंदी प्रूशिया सरकार के प्रबंध से बहुत प्रभावित है, विशेष रूप से शासकीय प्रशासन की तत्परता, आदेशों की उपयुक्तता, अप्रमाणिक और अनावश्यक हाकिमों का न होना । वेतन और प्रोन्नति की व्यवस्था से वह अत्यंत प्रभावित हुआ । वह उद्योग-धंधे लगाने और राज्य की सुरक्षा एवं मज़बूती के लिए आंतरिक शांति व्यवस्था स्थापित करने के सिलसिले में सरकार के प्रयासों की सराहना करता है । वह विशेष रूप से वित्तीय व्यवस्था की बहुत प्रशंसा करता है । उसने प्रूशिया की सेना के स्तरीकरण की व्यवस्था की इतनी प्रशंसा की कि उस्मानी अधिकारियों ने भी अपनी सेनाओं के अच्छे संगठन पर ज़ोर देना आरंभ कर दिया । अज़्मी ने वहां जो कुछ देखा और सीखा, उसके आधार पर उसने निम्नलिखित सिफ़ारिशें पेश कीं–

(1) उस्मानी राज्य में अत्याचार, अन्याय और अव्यवस्था का कारण भ्रष्टाचार है । इसे जड़ से उखाड़ फेंकना आवश्यक है ।

(2) राज्य के ढांचे में काट-छांट की जाए और केवल योग्य लोग ही रखे जाएं ।

(3) प्रत्येक सेवारत व्यक्ति को उसके काम की प्रकृति की दृष्टि से वेतन दिया जाए और उसे वेतन की ज़मानत दी जाए ।

(4) जब तक कोई सेवारत व्यक्ति ऐसा कोई अपराध न करे जिससे अनुशासन और राज्य-व्यवस्था को हानि पहुंचता हो, उस समय तक उसे सेवामुक्त न किया जाए ।

(5) अयोग्य व्यक्तियों को किसी ऐसे स्थान पर नियुक्त न किया जाए, जिसके लिए वह उचित न हो ।

(6) सशस्त्र सेनाएं विशेष रूप से तोपख़ाने और समुद्री सेना को इस प्रकार संगठित किया जाए और उन्हें इस प्रकार तैयार रखा जाए कि वे सर्दी और गर्मी के दिनों में मौसमों में हर प्रकार की आपात परिस्थिति का मुक़ाबला कर सकें।

अगर ऐसा कर लिया जाए तो उस्मानी साम्राज्य के सहयोगी शक्ति और ऊर्जा में बढ़ जाएंगे और विरोधी पराजित होंगे। इस प्रकार उस्मानी, राज्य के शत्रुओं पर क़ाबू पाना संभव होगा।

पश्चिमी यूरोप के संबंध में मुस्लिम लेखक कभी-कभी वहां सम्राटों के निर्वाचन में सामान्य मानवीय विधि से हटने पर भी अपने विचार प्रकट करते हैं। ऐसा ही मामले महारानियों की सरकारों का है। ऐसे समाज में जहां सम्राट कई-कई पत्नियां रखते हों और उनके साथ बहुत-सी दासियां भी हों, वहां स्त्री के शासन की कल्पना ही कठिन थी। हां, वहां कुछ ऐसी असाधारण योग्यताओं वाली स्त्रियां अवश्य मिलती हैं, जिन्होंने इस माहौल में भी उच्चतम अधिकार प्राप्त किये, लेकिन उनके शासन बहुत कम समय तक रहे। फिर भी इस्लामी दुनिया के लिए दूसरे देशों में महारानी की सरकार कोई नयी बात भी नहीं थी। मुसलमानों ने पड़ोसी देश बाजंतीन में राजकुमारियों की हुकूमतें देखी थीं और वे उत्तराधिकार के उसूलों से भी अवगत थे। लगभग इसी काल का एक इतिहासकार बाजंतीन के बारे में लिखते हुए महारानी आयरीन का उल्लेख करता है जिसने 797 से 822 तक शासन किया और कहता है, "रोमनों पर एक महारानी ने इसलिए शासन किया कि राज़ परिवार में केवल वही जीवित थी।"

एक मुसलमान इतिहासकार 906 हि॰ में इटली के लोबार्ड सम्राट की ओर से नियुक्त स्त्री राजदूत बर्था नेत लूथर के बग़दाद आगमन का उल्लेख करता है, लेकिन उसके या उसके देश के बारे में कुछ नहीं बताता। क़लक़सिन्दी ने अपनी पुस्तक में जिन सम्राटों का उल्लेख किया है, उनमें एक महिला शासक का भी उल्लेख है जिसने नेपल्स पर शासन किया।

एक प्राचीन स्रोत का हवाला देते हुए वह लिखता है कि उसका नाम जवाना था और 773 हिजरी (1371 ई॰) के अंत में उसे एक पत्र भेजा गया था जिसमें ये संबोधन प्रयुक्त किये गये थे–"अलिया मक़ाम, इज़्ज़त माब, लायक़े एहतिराम, ज़ात मुतबर्रक, आलीशाह, जलीलतुल क़द्र, अपने मज़हब की आलिम, अपनी सल्तनत में आदिला, नसरानी मज़हब की अज़ीम हस्ती, ईसाई उम्मत की मददगार, सरहदों की मुहाफ़िज़ और बादशाहों और सुल्तानों की दोस्त।" क़लकसिन्दी आगे कहता है, "यदि उसके राज्य में उसका स्थान कोई और लेता है तो उचित होगा कि इन संबोधनों और उपाधियों से उसे पुल्लिंग रूप में संबोधित किया जाएगा। इसके लिए महारानी से भी अधिक प्रतिष्ठित संबोधन प्रयुक्त किये जाएंगे, क्योंकि पुरुष को महिला पर श्रेष्ठता प्राप्त है।

उस्मानियों को इंग्लिस्तान की महारानी एलिज़बेथ से आस्ट्रिया की मारिया टेरेसा तक सभी महारानियों के बारे में जानकारी थी। आश्चर्य की बात यह है कि यूरोप जाने वाले मुसलमान, ईसाई समाज में ऊंचा दर्जा देने के विरुद्ध तो टिप्पणियां करते थे, लेकिन ऐसा लगता है कि उन देशों पर शासन करने वाली महिलाओं के बारे में अधिक चिंतित नहीं थे।

बहुत-से मुसलमान लेखकों ने पोप के सांसारिक अधिकारों पर टिप्पणी की है। उनमें से एक लेखक ईरानी लेखक रशीदुद्दीन ने तो अपने विश्व इतिहास में जो 14वीं सदी के प्रारंभ में लिखी गयी थी, पोप, सम्राट और दूसरे ईसाई सम्राटों के बीच के संबंधों पर भी बहस की है–

"फ़्रांस के शासकों के पदेन दर्जे इस प्रकार है। पहला दर्जा बाब (पोप) का है, जिसका अर्थ है बापों का बाप। वे उसे हज़रत ईसा का ख़लीफ़ा मानते हैं। उसके बाद शहंशाह (सम्राट) का दर्जा आता है जिसे फ़िरंगियों की भाषा में 'आमपैरो' कहा जाता है। इसका अर्थ है मुसलमानों का सुल्तान। उसके बाद 'रवा फ़्रांस' आता है, जिसका अर्थ है बादशाहों का बादशाह। शहंशाह जीवन पर्यंत शहंशाह रहता है। वे लोग पवित्राचारी और योग्य व्यक्तियों में से उसका चुनाव करते हैं और उसे ताज पहनाते हैं। रवा फ़्रांस विरासत के आधार पर शासन करता है और यह हुकूमत बाप से बेटे को मिलती है। आजकल वह बहुत ही शक्तिशाली और आदरणीय माना जाता है। उसके अधीन 12 हाकिम हैं और प्रत्येक हाकिम के अधीन तीन बादशाह हैं। इसके बाद 'रे' आता है, जिसका अर्थ बादशाह या आक़ा (स्वामी) है।

पोप का पद बहुत ऊंचा और महान है। जब भी वे नया शहंशाह नियुक्त करना चाहते हैं तो उनके तीन बड़े आदमी जिनका यही काम है इकट्ठा हो जाते हैं और आपस में विचार-विमर्श और परामर्श करते हैं। ये होते हैं दो बड़े राजकुमार और एक हाकिम। वे फ़्रांस के सभी प्रतिष्ठित जनों के नामों पर विचार करते हैं और उनमें से दस लोगों का चयन करते हैं और फिर गहन विचार-विमर्श के पश्चात उन दस व्यक्तियों में से एक व्यक्ति का चुनाव करते हैं जो

अपनी शक्ति, कर्म, योग्यता और पवित्रता के लिए प्रसिद्ध होता है और अपने भीतर ईमान, धार्मिक पवित्रता, उत्तम विचार, सम्मान, नेकचलनी, पारिवारिक दबदबा और आध्यात्मिक दृढ़ता रखता है ।

अलमानिया में, जिसे फ़िरंगी दुनिया का तिहाई माना जाता है, वे उसके सिर पर ताज रखते हैं । वहां से वे लोबार्डिया जाते हैं और उसके सिर पर फ़ौलादी ताज रखते हैं । फिर वे वहां से रोमतुल बकरा जाते हैं जो पोप का नगर है और पोप अपने पैरों पर खड़े होकर सोने का ताज उठाता है और उसके सिर पर रखता है । फिर वह बादशाह घुटनों के बल बैठता है और स्तंभ पकड़ता है ताकि पोप अपना पैर उसके सिर और गर्दन पर रखे एवं उसके ऊपर चढ़कर घोड़े पर सवार हो जाए । इसके साथ ही उसे शहंशाह (सम्राट) की उपाधि दी जाती है । और फ़िरंगियों के शासक उसके आज्ञाधीन हो जाते हैं और उसकी सत्ता फ्रैंग धरती और समुद्रों तक फैल जाती है ।

रशीदुद्दीन की जानकारियां काफ़ी हद तक ठीक हैं और स्पष्ट होता है कि वे जानकारियां पोप के माध्यम से प्राप्त की गयी हैं । वह अपने काल तक के रोम के सभी पापा (पोप) महानुभावों के इतिहास भी लिखता है ।

स्त्रियों और पादरियों के शासन से भी अधिक यूरोप में तीसरे प्रकार के जिस शासन ने मुसलमानों को आश्चर्यचकित किया, उसका उल्लेख वे अपनी पुस्तकों में बार-बार करते हैं । मध्यकाल के मुसलमानों के लिए लोकतंत्र की कल्पना बिल्कुल ही अजनबी थी । यूनान की राजनैतिक रचनाओं पर टिप्पणी करते हुए यह शब्द अरबी में 'जम्हूरियत' के रूप में सामने आया । यह यूनानी शब्दावली या लातीनी (लैटिन) Respubtice अर्थात शासन प्रणाली या जनकल्याण की शब्दावली को अरबी शब्दावली 'मदीना' में परिवर्तित किया गया है । अफ़लातून ने 'लोकतांत्रिक शासन प्रणाली' का जो विवरण दिया है, वह अरबी में 'मदीना जमाअया' बन गया, हालांकि सुन्नी फ़ुक़हा (धर्मशास्त्रियों) के अनुसार इस्लामी जनता में भी ख़िलाफ़त पैतृक पद नहीं है, बल्कि ख़लीफ़ा का निर्वाचन होता था और वह भी शरीअत के क़ानूनों से परे नहीं था ।

चारों सत्यनिष्ठ ख़लीफ़ा के बाद दुनिया के अधिकतर देशों की भांति इस्लाम में भी कमोबेश राजतंत्र (Monarchy) ही आ गया था । यूनानी दार्शनिकों से लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था की जो कल्पना ली गयी, उसका प्रभाव क्षेत्र दर्शनशास्त्र का अध्ययन करने वालों और दर्शनशास्त्र लिखने वालों से आगे नहीं बढ़ सका । इसका प्रमाण इस वास्तविकता से भी मिलता है कि बाद में जब यूरोपीय शासन व्यवस्था की परिभाषा निश्चित करने के लिए नयी शब्दावली की आवश्यकता पड़ी तो वह शब्दावली दार्शनिक रचनाओं के ज्ञान के बिना ही गढ़ ली गयी ।

स्पष्ट है लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था का पहुंचना तनिक कठिन था । इसका आरंभिक हवाला उमरी की रचना में मिलता है जो 1340 के क़रीब लिखी गयी–

''वीनस वालों का कोई सम्राट नहीं है, बल्कि उनकी सामूहिक शासन प्रणाली है । इसका अर्थ है कि वे लोग सर्वसम्मति से एक आदमी को सरकार चलाने के लिए नियुक्त करते हैं । वीनस वाले 'फ़नसीन' कहलाते हैं । उनका चिन्ह मानव-मुख है जिसके संबंध में उनकी धारणा यह है कि वह मार्क का चेहरा है जो हज़रत ईसा के साथियों में से एक है । जो व्यक्ति उन पर शासन करता है वह उनमें से विशिष्ट परिवार में से एक परिवार से होता है...''।

उमरी इसके बाद नसान तसान एन्कोनी और फ़्लोरनेशन का उल्लेख करते हुए कहता है कि इन सबकी शासन व्यवस्था ऐसी ही है । फिर वह जेनेवा के बारे में अधिक विस्तार के साथ लिखता है । उसको यह जानकारियां देने वाला उसी देश का निवासी है ।

''जेनेवा के निवासियों की शासन प्रणाली पंचायत है । उनका कोई सम्राट नहीं था और न होगा । वर्तमान काल में उन पर शासन करने वाले दो परिवारों से संबंध रखते हैं । एक परिवार है दौरयाह । मीर मुख़बिर बालबन भी इसी परिवार से संबंधित है और दूसरा परिवार है अस्पनवला । बालबन ने यह भी बताया कि इन दोनों परिवारों के अतिरिक्त जेनेवा में गीरी बाल्डी, मलूनो, दी मारी, सां तोरतोरे और फ़ैसेची परिवार भी हैं । इन परिवारों के सदस्य प्रत्येक सम्राट के सलाहकार होते हैं ।''

क़लक़संदी, तशक़ीफ़ का अनुसरण करते हुए दो इतालवी लोकतांत्रिक देशों ने जेनेवा और वीनस के साथ पत्राचार के आदाब बयान करता है–

''जेनेवा के शासकों के लिए संबोधन शैली । यह विभिन्न दर्जे के लोगों का एक गरोह है, जैसे पोदेशिया, कप्तान और प्रतिष्ठित जन । तशक़ीफ़ के अनुसार इन्हें चार

पृष्ठीय पुस्तक पर पत्र के रूप में लिखा जाए और इनकी लेखन शैली इस प्रकार होनी चाहिए : 'यह पत्र बनाम फ़ज़ीलत माब आली शान बिलइतबार, इज़्ज़त माब, मुहतरम व मुकर्रम, पोदेशिया और कप्तान फ़लां-फ़लां के और बनाम प्रतिष्ठित जनों के लिए है, जो जेनेवा की कम्यून के लिए परामर्श और न्याय के रक्षक हैं । ईसाई जनता के उच्च पदस्थ, नसरानी (ईसाई) धर्म के प्रतिष्ठित जन और सम्राटों व सुल्तानों के मित्र हैं । अल्लाह तआला उन्हें सीधे मार्ग पर चलने का दैवयोग प्रदान करे और उनके प्रयासों को सफल करे एवं उन्हें हिदायत दे ।''

तशक़ीक़ में आगे लिखा है–

''767 हिजरी (1365-1366 ई॰) में पोदेशिया और कप्तान के लिए यह संबोधन शैली छोड़ दी गयी, क्योंकि वे स्वयं ही समाप्त हो चुके थे । इसके बाद डोजे (जेनेवा और वीनस का शीर्ष लेखक) के नाम पत्र लिखे जाने लगे, क्योंकि उनकी जगह डोजे (Doge) ने ले ली थी ।''

वीनस के संबंध में क़लक़संदी लिखता है–

''वीनस के शासक के लिए संबोधन शैली के बारे में 'तशकीफ़' का लेखक लिखता है–767 ई॰ में जब पत्र का उत्तर भेजा गया तो संबोधन शैली का प्रचलित ढंग अपनाया गया । उस समय उसका नाम मार्को कोनारू था । हमने फ़ज़ीलत माब, वल इतबार, मुहतरम व मुकर्रम, बहादुर, आली मरतबत वलअशान मार्को कोनारू ईसाई फ़िरक़े की शीर्षस्थ हस्ती वीनस और डालमशिया के डोजे बपतिस्मा के पुत्रों के धर्म के ध्वजावाहक सम्राटों और सुल्तान के मित्र का पत्र प्राप्त किया ।''

अनेक उदाहरण देने के बाद क़लकसंदी आगे लिखता है–

''इससे सिद्ध होता है कि डोजे, सम्राट से भिन्न कोई हस्ती नहीं है । पहले और दूसरे उदाहरण में सबोधन-शैली एक ही है, लेकिन तीसरे उदाहरण में वह पहले दो से न्यून है । यदि डोजे ही सम्राट है तो फिर संशोधन-शैली का अन्तर कुछ दूसरी परिस्थितियों के कारण है या फिर लिखने वाले का और उद्देश्य है या फिर पत्र-प्रापक के बारे में जानकारी की कमी इसका कारण है या काम की अधिकता या जल्दबाज़ी के कारण ऐसा हो जाता है ।

उधर पूरब में और आगे जाकर रशीदुद्दीन भी इटली के लोकतंत्र के संबंध में सुनता है । वह लिखता है, ''इन शहरों में कोई पैतृक सम्राट नहीं है । प्रतिष्ठित जन और ऊंचे दर्जे के लोग एक पवित्राचारी व्यक्ति को चुन लेते हैं और उसे एक वर्ष के लिए अपना शासक बना लेते हैं । वर्षांत के बाद मुनादी करने वाला ऐलान करता है, ''इस वर्ष यदि किसी व्यक्ति के साथ अन्याय हुआ है तो वह शिकायत दर्ज कराये ।'' वे सभी लोग जिनके साथ अन्याय हुआ है वे सामने आते हैं और उसे क्षमा करते हैं । फिर एक और व्यक्ति को बुलाते हैं और वह उन पर शासन करता है ।

इस देश से बाहर (जेनेवा के इर्द-गिर्द) एक और देश है जिसका नाम बलूना है । उसकी राजधानी वीनस कहलाती है । उसके अधिकांश भवन समुद्र में से ऊपर उठाये गये हैं । शासक के पास भी तीन सौ बादबानी (पोत वाले) जहाज़ हैं । वहां भी कोई सम्राट शक्ति के बल पर या पैदक रूप में नहीं बनाया गया । शहर के सौदागर एक पवित्रचारी व्यक्ति को सर्वसम्मति से चुन लेते हैं और उसे अपना शासक बनाते हैं । और जब उसकी मृत्यु हो जाती है तो दूसरे को चुन लेते हैं ।''

लेकिन उस्मानी काल के आते-आते लोकतांत्रिक संस्थाएं अधिक प्रसिद्ध हो गयी थीं और उनके बारे में जानकारियां भी अधिक हो गयी थीं । उस्मानी साम्राज्य (सल्तनत) ने दालमेशिया के समुद्र-तट पर अगोसा गणतंत्र, वीनस, जेनेवा और अन्य इतालवी राज्यों के साथ बड़े पैमाने पर राजनयिक संबंध स्थापित कर लिये थे । बाद में संयुक्त राज्य हॉलैंड से भी संपर्क स्थापित हो गये थे । अलबत्ता संबोधन शैली अभी तक व्यक्तिगत ही थी । रागोसा गणतंत्र के शासक कालक़ब रेक्टर था, लेकिन उस्मानी दस्तावेज़ों में उसे स्लावी भाषा के शब्द कनेज़ (Knez) से संबोधित किया गया है, जैसे बनाम कनेज़ और रागोसा के योद्धा 'या' बनाम कनेज़ और सौदागरान रागोसा । इसी प्रकार वीनस जो पत्र भेजे जाते थे उनमें गणतंत्र के स्थान पर दोजे और सेन्वारया ही लिखा जाता था ।

कातिब चलबी ने 1655 ई॰ में जो रिसाला (पुस्तिका) लिखा, उसमें वीनस की बहुशासक व्यवस्था और हॉलैंड व करामोयल के इंग्लिस्तान के लोकतंत्र का अन्तर स्पष्ट किया गया है, यहां तक कि निर्वाचन पद्धति पर भी प्रकाश डाला गया है ।

वह लिखता है कि शासन व्यवस्था के अनुसार यूरोप के राज्य मतों या तीन धर्मों में विभक्त हैं । प्रत्येक धर्म के

संस्थापक अत्यंत आदरणीय, विवेकी और बुद्धिमान हैं । ये तीन विचार केन्द्र हैं । मोरनाकया जिसका संस्थापक अफ़लातून है । अरस्तू करातया जिसका संस्थापक अरस्तू है और डेमोकरातया जिसका संस्थापक डेमोक्रेस है । मोनार्की का अर्थ है कि सब लोग एक बुद्धिमान और न्यायप्रिय शासक की अधीनता स्वीकार करते हैं । यूरोप के अधिकतर शासक इस व्यवस्था पर अमल करते हैं । अरस्तू करातया में शासन व्यवस्था बहुत-से लोगों के हाथ में होती है जो अधिकांश मामलों में स्वतंत्र होते हैं, लेकिन अपने आपमें से किसी एक व्यक्ति का नेता बना लेते हैं ।

वीनस राज्य में यह व्यवस्था है । तीसरा प्रकार डेमोकरातया में शासन-व्यवस्था प्रजा के हाथ में होती है और आमजन इस प्रकार अपने आपको ज़ुल्म-ज़्यादती से सुरक्षित रखते हैं । वे प्रत्येक गांव में चुनाव करके एक या दो ऐसे व्यक्तियों को चुन लेते हैं जिन्हें वे बुद्धिमान और योग्य समझते हैं और उन्हें केन्द्रीय शासन में भेज देते हैं जहां वे एक सभा बनाते हैं और अपने आपमें से एक नेतृत्वकर्ता चुनते हैं । यह वह व्यवस्था है जिस पर हॉलैंड और इंग्लिस्तान भी अमल करते हैं ।

कातिब चलबी निर्वाचन सभा को सदन कहता है । वह वीनस के विभिन्न सदनों का विस्तारपूर्वक उल्लेख करता है यहां तक कि विचार-प्रकटन की प्रक्रिया का स्पष्टीकरण भी करता है । वह कहा है कि सदन के प्रत्येक सदस्य के हाथ में दो गेंदें होती हैं : एक सफ़ेद और एक काली । वे 'बालूता' कहलाती हैं । सदन में वाद-विवाद के बाद जो लोग वहां बैठे होते हैं, वे अपने विचार इस प्रकार प्रकट करते हैं कि काली या सफ़ेद गेंद गिरा देते हैं ।

18वीं सदी के प्रारंभिक काल का एक लेखक यूरोप के मामलों पर लिखते हुए 'रिपब्लिक' या 'जम्हूर' की शब्दावली की व्याख्या करता है । यह शब्दावली वीनस, इंग्लैंड और दूसरे गणराज्यों में प्रयुक्त होती थी । वह कहता है, "इन राज्यों में कोई एक शासक नहीं है, बल्कि प्रतिष्ठित लोगों की सर्वसम्मति से सभी मामले तय किये जाते हैं । ये लोग जनता की इच्छा से चुने जाते हैं ।" यही लेखक स्विट्ज़रलैंड को 'संयुक्त गणराज्य' कहता है, जहां प्रत्येक कंट्यून अलग गणराज्य है । वह कहता है कि यही शब्दावली हॉलैंड के लिए भी प्रयुक्त होती है, लेकिन साधारण अन्तर के साथ कि वहां प्रतिष्ठित जन ही निर्णय करते हैं, लेकिन उसको लागू करने की ज़िम्मेदारी एक आदमी के हवाले कर दी जाती है । पोलैंड के बारे में वह लिखता है कि वहां राजतंत्र भी है और लोकतंत्र भी । और वह किसी हद तक सही कहता है ।

18वीं सदी तक उस्मानी यात्रियों ने स्वतंत्र शहर जैसी संस्थाओं पर भी ध्यान देना प्रारंभ कर दिया था । मुहम्मद आफ़ंदी पेरिस जाते हुए तोलूस और बोरवयू से गुज़रता है तो उन्हें स्वतंत्र शहर ठहराता है । "ऐसे शहर की क़िलेबन्दी स्थानीय सेना करती है और वहां की व्यवस्था एक 'पार्लियामेंट' चलाती है जिसका नेतृत्व 'प्रेसीडेंट' करता है । ये दोनों शब्द उसने फ़्रांसीसी उच्चारण में लिखे हैं, लेकिन लिपि अरबी है ।

लेखक बन्दरगाह डेंजग को भी स्वतंत्र कहता जो राजकीय सत्ता और करों से मुक्त है । 18वीं सदी का एक और लेखक मुक़द्दस राज्य रोम की संरचना का स्पष्टीकरण करते हुए राज्य के भीतर सवाबिया जैसी इकाई को भी स्वतंत्र यहां तक कि गणराज्य ठहराता है । हंगरी जाने वाले कुछ उस्मानी यहां तक कहते हैं कि हंगरी के लोग अपनी पुरानी स्वाधीनता छिन जाने से निराश हैं ।

फ़्रांस की क्रांति के बाद लोकतांत्रिक संस्थाओं की कल्पना ने एक नये चरण में प्रवेश किया, जब उस्मानी साम्राज्य को केवल फ़्रांस के नये लोकतंत्र के साथ ही नहीं, बल्कि दूसरे गणराज्यों के साथ भी मामले करने पड़े । इनमें से कुछ तुर्की की सीमाओं पर थे और वे फ़्रांसीसी ढंग पर स्थापित की गयी थीं । चूंकि फ़्रांस के साथ तुर्की की लड़ाई हो रही थी, इसलिए तुर्की में फ़्रांसीसी विचारों का आना लगभग बन्द था, तथापि जिस सुगमता और तेज़ी के साथ फ़्रांस की तीन हज़ार सैनिकों पर आधारित सेना ने मिस्र पर क़ब्ज़ा कर लिया और जिस प्रकार तीन वर्ष से अधिक अवधि तक वहां शासन किया, उसके बहुत गहरे प्रभाव पड़े ।

मिस्र में फ़्रांस ने जिस सहिष्णुता और न्याय के साथ शासन किया, उसकी भी बहुत अच्छी प्रतिक्रिया हुई । मिस्री इतिहासकार जबरती ने दूसरी बातों के अतिरिक्त इन चीज़ों का भी मुख्यत: उल्लेख किया है । फ़्रांसीसी शासकों की कार्य-शैली ने मिस्री आलिमों पर जो प्रभाव डाला, जबरती ने इसका अपनी रचना में उल्लेख किया है ।

1802 ई॰ की संधि के अंतर्गत फ़्रांस ने मिस्र और

आयोनिया के द्वीप ख़ाली कर दिये और नया उस्मानी राजदूत ख़ालिद आफ़ंदी पेरिस भेजा गया, जहां वह 1806 ई० तक रहा । उसकी यहां टिप्पणी काफ़ी अर्थपूर्ण है–

"चूंकि फ़्रांसीसियों का कोई सम्राट नहीं है, इसलिए उनकी कोई सरकार भी नहीं है । इन सबके अलावा सरकार के गठन का जो गतिरोध पैदा हुआ है, उसके नतीजे में अधिकांश उच्च पदाधिकार ऐय्याश बदमाश लोगों ने संभाल ली है । यद्यपि कुछ प्रतिष्ठित जन अभी मौजूद हैं, लेकिन सत्ता अभी तक उजड्ड और गंवार लोगों के हाथ में ही है ।

इसलिए वे एक गणराज्य भी नहीं संभाल सकते । चूंकि इन्क़लाबियों या अधिक सादा तुर्की भाषा में कुत्तों के झुंड के सिवा और कुछ नहीं हैं, इसलिए इन लोगों से वफ़ादारी और मैत्री की कोई आशा भी संभव नहीं । नेपोलियन पागल कुत्ता है जो सभी देशों को उसी कुव्यवस्था का शिकार बनाना चाहता है जिससे उसकी अपनी धिक्कारी हुई क़ौम दो-चार है । ताली रेंड एक बिगड़ा हुआ पादरी है और शेष सब गुंडे-बदमाश हैं ।"

29 मई 1807 ई० के महान सुधारक सुल्तान सलीम सालिस (तृतीय) को सत्ताच्युत कर दिया गया और पुनरुत्थानवादी शक्तियों की विजय का जश्न इस तरह मनाया गया कि सुधार-समर्थकों का क़त्लेआम किया गया । इन घटनाओं के कुछ वर्ष के पश्चात एक शाही इतिहासकार अहमद आसिम आफ़ंदी ने 1791 ई० से 1808 ई० के हालात पर एक रिसाला (पुस्तिका) लिखा, जिसमें सुधार-आन्दोलन पर साधारणतया और फ़्रांसीसी प्रभावों पर मुख्यतः प्रकाश डाला गया है । आसिम सुधार का समर्थक है और इसी उम्मीद को इन शब्दों में प्रकट करता है कि इन सुधारों से राज्य की पतनशील सैन्य शक्ति पुनः बढ़ जाएगी और शत्रुओं का मुक़ाबला करने में हम सक्षम हो जाएंगे ।

रूस का उदाहरण देते हुए वह लिखता है कि वह पश्चिमी विज्ञान और कला-कौशल को अपनाने के बाद अपनी कमज़ोरी और पिछड़ेपन के दलदल से बाहर निकला और महान शक्ति बन गया है, लेकिन पश्चिमी पद्धति स्वीकार करने का समर्थन करने के बावजूद आसिम ईसाइयों के वैसे ही ख़िलाफ़ है और सभी ईसाई शक्तियों को इस्लाम का शत्रु मानता है । उसके विचार में इन शक्तियों के साथ समझौता करने से बुराइयां पैदा होंगी । वह विशेष रूप से फ़्रांस के सख़्त ख़िलाफ़ है और फ़्रांस के समर्थक तुर्कों की कड़ी निंदा करता है और उन्हें मूर्ख ठहराता है । फ़्रांस की आंतरिक परिस्थितियों के बारे में वह कुछ नहीं लिखता और यही उसका नकारात्मक रवैया है । वह लिखता है, "फ़्रांसीसी गणतंत्र आग में लकड़ी के चटख़ने की आवाज़ और पेट में उठने वाले दर्द की गड़गड़ की । उसके उसूलों में धर्म से इन्कार और धनी व निर्धन की बराबरी सम्मिलित है ।"

मुसलमान टीकाकारों के लिए सबसे अधिक जो चीज़ बोधगम्य नहीं थी, वह थी पश्चिमी संस्था–निर्वाचित प्रतिनिधियों की असेम्बली । कातिब चलबी प्रतिनिधि और लोकतांत्रिक संस्थाओं के बारे में कुछ बातें अवश्य लिखता है, लेकिन उसकी जानकारियां सरसरी हैं । यूरोप पर उसका लेख अधिक प्रसिद्ध नहीं है । दूसरे उस्मानी लेखकों ने भी इस विषय पर कम ही लिखा है । इटली, फ़्रांस, हॉलैंड और दूसरे देशों के जो हवाले मिलते हैं उनसे स्पष्ट होता है कि इनसे उनकी दिलचस्पी नहीं थी और वे इनके बारे में अधिक जानते भी नहीं थे ।

लोकतांत्रिक संस्थाओं की व्याख्या करने का पहला प्रयास अबू तालिब ख़ान ने किया है जो 18वीं सदी के अंत में इंग्लिस्तान गया । उसने भी इंग्लिस्तान की राजनीतिक व्यवस्था पर एक लंबा और सहानुभूतिपूर्वक टिप्पणी करते हुए केवल सरकार के हाकिमों और उनके कर्तव्यों पर अधिक विस्तार से प्रकाश डाला है । ज्ञान-मंडल (दारुल उलूम) के बारे में उसने केवल दो संक्षिप्त-से हवाले दिये हैं, हालांकि वह अपने अंग्रेज़ मित्र के साथ ज्ञान-मंडल गया था ।

ज्ञान-मंडल के संबंध में लिखते हुए पहले तो वह वहां भाषण करने वालों का मज़ाक़ उड़ाता है । उन्हें सुनकर उसे हिन्दुस्तान के तोते याद आ जाते हैं, लेकिन बाद में वह लिखता है कि यह संस्था तीन उद्देश्यों को पूरा करती है । शुल्क जमा करने में सुविधा उपलब्ध कराना, ठेकेदारों को ग़लती करने से रोकना और सामान्य जानकारियों में सम्राट और मंत्रियों की निगरानी करना । एक दूसरे स्थान पर अबू तालिब ख़ान संक्षिप्त रूप में ज्ञान-मंडल (दारुल उलूम) के सदस्यों, उनके चयन की विधि और उनके कर्तव्यों पर टिप्पणी करता है । उसे इस बात पर आश्चर्य हुआ है कि ये सदस्य ग़लत काम करने वालों को सज़ा देने के लिए क़ानून बनाते हैं ।

इसका कारण यह बताता है कि चूंकि मुसलमानों की भांति उनके पास ईश्वर की ओर से उतारे गये क़ानून नहीं हैं, इसलिए वे समय और परिस्थितियों के अनुसार और न्यायकर्ताओं के अनुभवों की रोशनी में अपने क़ानून बनाते हैं । क़ानून बनाने के संबंध में पार्लियामेंट के कर्तव्यों का उल्लेख करके अबू तालिब ख़ां इस्लाम और ईसाई दुनिया के बीच मौलिक अन्तर स्पष्ट करता है । मुसलमानों की दृष्टि में इन्सान को क़ानून बनाने का अधिकार नहीं है । अल्लाह ही विधि निर्माता है, जिसने अपनी शरीअत वह्य (प्रकाशना) के द्वारा भेजी है । अल्लाह की शरीअत मानव-जीवन के प्रत्येक पहलू को आवृत्त किये हुए हैं । किसी सांसारिक शक्ति को अल्लाह की शरीअत निरस्त करने या उसमें संशोधन करने का अधिकार नहीं है । इन्सानों का कर्तव्य है कि इसके सिवा कुछ नहीं है कि वे शरीअत लागू करें ।

इन्सान को केवल टीका और व्याख्या करने का अधिकार है, लेकिन यह व्याख्या भी टीकाकार और आलिम ही कर सकते हैं । सैद्धांतिक रूप से तो ये सब बातें स्वीकार की जाती थीं, लेकिन व्यवहारत: परिस्थिति मिल थी । बहुत-से मामलों में शरीअत का ख़याल नहीं किया जाता था या फिर उसकी व्याख्या और टीका अपनी सुविधा के अनुसार की जाती थी । ज्यों-ज्यों हालात बदलते रहे शरीअत के क़ानून भी बदलते रहे । यह बदलाव शासकों के आदेशों से भी होता रहा, फिर भी ऐसा केवल व्यवहारत: ही होता था, उसूली तौर पर यही माना जाता था कि सत्ताधिकार अल्लाह ही का है, इन्सान केवल उसके क़ानूनों की व्याख्या कर सकता है या उन्हें लागू कर सकता है ।

प्रारंभ में मुसलमान जब ईसाइयों की धार्मिक आस्थाओं का हवाला देते थे, तो उनके बारे में भी ऐसा ही समझते हैं यहां तक कि 'ईसाई शरीअत' भी कहा करते थे, अर्थात उनकी नज़र में ईसाइयों की शरीअत मुसलमानों जैसी ही थी । लेकिन धीरे-धीरे उन्हें ज्ञात हुआ कि ईसाई दुनिया की क़ानून-निर्माण की कल्पना भिन्न है और न्याय के ढंग में भी अन्तर है ।

अतएव आरंभिक काल में यूरोप की न्यायिक व्यवस्था के बारे में मुसलमानों की नीति शत्रुओं की भांति अपमानजनक है । उदाहरण के रूप में मध्यकाल का एक-एक मुसलमान लेखक यूरोप जाता है तो वह शारीरिक कष्टों के द्वारा अपराधी का पता चलाने के क़ानूनी ढंग पर टिप्पणी करता है-"उनके यहां विचित्र रिवाज है । उदाहरण के रूप में यदि कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति पर असत्य-वचन का आरोप लगाता है तो तलवार से दोनों की परीक्षा ली जाती है । यह इस प्रकार होता है कि दोनों आदमी, आरोपी और वादी अपने भाइयों और मध्यस्थों के साथ आते हैं । दोनों में प्रत्येक को दो तलवारें दी जाती हैं । एक तलवार वह कमर में बांध लेता है और दूसरी हाथ में पकड़ता है । फिर वह व्यक्ति जिस पर, आरोप लगाया गया है उस चीज़ की क़सम खाता है जो उसे प्रिय है और कहता है कि उसके विरुद्ध जो आरोप लगाया गया है वह ग़लत है और वह निर्दोष है ।

दूसरा क़सम खाता है कि वह सच कह रहा है । इसके बाद वे एक-दूसरे से थोड़ी दूरी पर पूरब की ओर मुंह करके घुटनों के बल हो जाते हैं । फिर अपने शत्रु के सामने जाते हैं और उस समय तक लड़ते हैं जब तक उनमें से एक मर नहीं जाता या भाग नहीं जाता । उनकी एक और विचित्र रस्म है, वह है आग के द्वारा परीक्षा लेना । यदि किसी व्यक्ति पर जायदाद या क़त्ल व ख़ून के मामले में आरोप लगाया जाता है तो वे लोग लोहे का एक टुकड़ा लेते हैं । उसे आग में तपाते हैं । फिर तौरेत और इंजील से कुछ पढ़कर उस पर फूंकते हैं । फिर दो-दो लकड़ियां धरती में सीधी गाढ़ते हैं । तपता लोहा चिमटे से पकड़ कर आग से निकालते हैं और उसे दोनों लकड़ियों के सिरों पर रख देते हैं । इसके बाद आरोपी आता है । दोनों हाथ बांधता है, तपता लोहा पकड़ता है और तीन क़दम चलता है । फिर वह लोहा गिरा देता है । उसके हाथ पर पट्टी बांध दी जाती है और पट्टी पर मुहर लगा दी जाती है । फिर एक रात और एक दिन उसे निगरानी में रखा जाता है । यदि तीसरे दिन उसके हाथ पर छाले पड़ जाते हैं और उनसे मवाद निकलने लगता है तो वह अपराधी ठहरता । यदि ऐसा नहीं होता तो वह निर्दोष ठहरा दिया जाता है और उसे रिहा कर दिया जाता है ।

उनका एक और तरीक़ा पानी से परीक्षा लेने का है । इसका अर्थ यह है कि आरोपी के हाथ-पैर बांध दिये जाते हैं और उसे रस्सी में बांधकर पानी में डाल दिया जाता है । यदि वह ऊपर तैरता रहे तो अपराधी ठहरा दिया जाता है, डूब जाए तो निर्दोष, क्योंकि वे समझते हैं कि पानी ने उसे स्वीकार कर लिया ।

केवल गुलामों की परीक्षा पानी और आग से ली जाती

है । जहां तक आज़ाद इन्सानों का संबंध है, यदि उन पर पांच दीनार से कम मूल्य के सामान का मुक़दमा है, तो दोनों लाठियों और ढालों के साथ मैदान में जाते हैं और उस समय तक लड़ते हैं, जब तक उनमें से एक अलग नहीं हो जाता । यदि एक पक्ष स्त्री है, विकलांग है या यहूदी है तो वह पांच दीनार देकर अपना प्रतिनिधि नियुक्त कर सकता है । यदि आरोपी गिर जाए तो अनिवार्य रूप में उसे सूली पर चढ़ा दिया जाता है और उसकी सारी संपत्ति ज़ब्त कर ली जाती है । उसकी जायदाद से प्रतिपक्षी दस दीनार वसूल करता है ।''

यह उद्धरण क़ज़वीनी ने अज़री से नक़ल किया है और संभवत: यह इबराहीम इब्न याक़ूब की रिपोर्ट का भाग है । उस्मान इब्न मुन्क़ज़, जो सलीबी लड़ाइयों के ज़माने से संबंध रखता है, फ़िलिस्तीन में सलीबी सेनाओं के क़ब्ज़े वाले नाबलूस में घटने वाली एक घटना बयान करता है–

''एक दिन मैंने नाबलूस में लड़ाई के द्वारा परीक्षा लेने की एक घटना देखी । इसका कारण यह था कि कुछ मुसलमान बदमाशों ने नाबलूस के एक गांव पर धावा बोला था और आरोप लगाया गया था कि एक किसान ने उन बदमाशों की रहनुमाई की थी । वह तो भाग गया, लेकिन सम्राट ने उसके बच्चों को पकड़ लिया । इस पर वह वापस आया और कहा, मेरे साथ इन्साफ़ करो । मैं उस व्यक्ति को ललकारता हूं जिसने यह कहा कि मैंने गांवों तक बदमाशों की रहनुमाई की ।'

इस पर सम्राट ने उससे कहा जो गांव का सरदार था, 'इससे लड़ने के लिए किसी को बुलाओ ।' वह गांव गया और वहां उसे एक लोहार मिला, जिसे उसने आदेश दिया कि वह उससे मुक़ाबला करे । सरदार अपने किसानों को बचाना चाहता था । वह नहीं चाहता था कि कोई किसान मर जाए और उसके चौपायों को नुक़सान हो ।

मैंने उस लोहार को देखा । वह बलशाली नवजवान था, लेकिन वह कुश्ती लड़ना नहीं जानता था । वह कुछ क़दम चलता और बैठ जाता, फिर पीने को कुछ मांगता । उसका प्रतिद्वंद्वी एक बूढ़ा आदमी था, लेकिन वह दिल का मज़बूत, जोशीला और निडर था । गांव का सरदार आगे बढ़ा और दोनों को एक-एक लाठी और एक-एक ढाल दी और लोगों के घेरे में उन्हें खड़ा कर दिया । वे दोनों एक-दूसरे से भिड़ गये । बूढ़े ने लोहार को धक्का दिया और तमाशाइयों के घेरे से बाहर धकेल दिया, लेकिन वह फिर मैदान के बीच में आ गया । वे एक-दूसरे को मारते रहे यहां तक कि वे ख़ून से सने हुए नज़र आने लगे । यह लड़ाई थोड़ी देर इसी प्रकार जारी रही । और सरदार चीख़ता रहा–'जल्दी करो, जल्दी करो'। लोहार हथौड़ा चलाने के अनुभव से फ़ायदा उठा रहा था और बूढ़ा कमज़ोर पड़ता जा रहा था । फिर लोहार ने एक वार किया, जिससे बूढ़ा गिर गया और उसकी लाठी उसके नीचे दब गयी । उस पर लोहार उसके ऊपर झुका और उसकी आंखों में अपनी उंगलियां मारने की कोशिश की, लेकिन वह ऐसा नहीं कर सका, क्योंकि उसकी आंखों से निर्बाध रूप से ख़ून बह रहा था । वह खड़ा हुआ और उसके सिर पर लाठियां बरसानी शुरू कर दी, यहां तक कि वह मर गया । फिर उसने बूढ़े की गर्दन में रस्सी बांधी और घसीटता हुआ बाहर ले गया और उसे फ़ांसी दे दी । लोहार का आक़ा आया और उसे अपनी श्रद्धांजलि दी । फिर उसे अपने घोड़े पर बैठाया और लेकर चला गया । उनके न्याय और क़ानूनी प्रक्रिया का एक उदाहरण है । ख़ुदा की लानत हो उन पर ।''

किसी सभ्य मुसलमान के लिए, जो क़ाज़ी (जज) की अदालत की प्रक्रिया का आदी हो, इस प्रकार के क़ानून और न्याय का अपमान के साथ उल्लेख करना निश्चय ही समझ से बाहर है, लेकिन यूरोप में बहुत शीघ्र इस प्रकार की लड़ाई या मुक़ाबले के द्वारा न्याय करने की प्रक्रिया शेष नहीं रही । अत: बाद के मुस्लिम टिप्पणीकारों ने, जिन्हें न्यायिक व्यवस्था अधिक निकट से देखने का अवसर मिला, अपनी टिप्पणियों में अधिक सकारात्मक शैली अपनायी है । बहुत पहले 12वीं सदी में हस्पानवी मुसलमान पर्यटक इब्न ज़ुबैर, जो शाम गया था, लिखता है कि फ़िरंगी अपने विजित मुसलमानों के साथ न्यायपूर्ण व्यवहार करते हैं । यह देखकर उसे परेशानी होती है ।

इसी प्रकार के मनोभाव 18वीं सदी के अंत में मिस्री इतिहासकार जबरती भी जताता है । वह अपने देश को जीतने वाली फ़्रांसीसी सेनाओं का उल्लेख करता है और शहरी आबादी के साथ उनके व्यवहार और क़ानून व न्याय का आदर करने पर उनकी प्रशंसा करता है । विशेष रूप से वह इस व्यवहार से बहुत प्रभावित होता है । वह उस मुसलमान क़ातिल के साथ गया था जिसने जनरल क्लेवर को क़त्ल किया था । यह जनरल बोनापार्ट के बाद मिस्र में फ़्रांसीसी सेनाओं का सेनापति था ।

वह कहता है कि फ़्रांसीसी हाकिमों ने इस मुक़दमे की कार्रवाई तीन भाषाओं–फ़्रांसीसी, तुर्की और अरबी में छपवायी थी । चूंकि वह ग़लत अरबी में थी और बहुत लंबी थी, इसलिए वह उसकी अनदेखी कर सकता था, लेकिन वह चाहता था कि उसके पाठकों को न केवल मूल घटनाओं की जानकारी हो, बल्कि वे यह भी जान जाएं कि फ़्रांसीसी न्याय कैसे करते हैं । "ये लोग जिनका कोई धर्म नहीं है, सच्चाई के साथ क़ानून का पालन करते हैं ।" वह कहता है कि ये घटनाएं हमारे लिए शिक्षाप्रद हैं । "दूरदराज़ का एक अजनबी अपने नेता पर हमला करता है और उसे क़त्ल कर देता है । लोग उसे मौक़े पर पकड़ लेते हैं, लेकिन वे उसे और उन अपराधियों को तुरंत मार नहीं डालते, जिन्हें वह नामांकित करता ।

हालांकि उन्होंने उसे क़त्ल के उस हथियार के साथ गिरफ़्तार किया था, जिससे ख़ून टपक रहा था । इसके बजाय उन्होंने एक अदालत क़ायम की और क़ातिल को उसके सामने प्रस्तुत किया और मौलिक रूप से और हिंसा के द्वारा जांच-पड़ताल की । इसके बाद क़ानून के अनुसार उनका फ़ैसला सुनाया गया । उन्होंने कातिब मुस्तफ़ा आफ़ंदी अमीर अली को बरी कर दिया, क्योंकि उसके ख़िलाफ़ कोई मुक़दमा नहीं बनता था ।"

जबरती स्पष्ट रूप से इस बात से बहुत प्रभावित मालूम होता है कि फ़्रांसीसियों ने क़ानून के अनुसार सारा कार्य किया और उस आरोपी को बरी कर दिया जिसके ख़िलाफ़ अपर्याप्त प्रमाण था । इसकी तुलना वह उन सैनिकों के दुष्कर्मों से करता है जो अपने आपको मुसलमान कहते हैं और केवल अपने पाशविक भावनाओं की तुष्टि के लिए इन्सान को क़त्ल करते हैं ।

लेकिन सभी मुसलमान टिप्पणीकार पश्चिमी न्यायिक व्यवस्था की प्रशंसा नहीं करते । उनमें से एक अबू तालिब ख़ां है । दुर्भाग्य से लंदन के एक दर्ज़ी ने उस पर दस शलिंग का जुर्माना कर दिया था और अदालती सम्मान न लेने पर जज ने और छह शलिंग का जुर्माना उससे वसूल कर लिया था । वह जूरी की व्यवस्था से प्रसन्न नहीं हुआ, क्योंकि उसके विचार में जूरी के सदस्य आसानी से जज के कहने में आ जाते हैं और जज की राय को ही स्वीकार कर लिया जाता है । जज अपनी राय पर पुनरावलोकन के लिए मुक़दमा उन्हें वापस भेज देता है । इतनी ही नहीं, यदि ये उपाय भी कारगर नहीं होते तो जज को अधिकार है कि जूरी के सदस्यों को कमरे में बन्द कर दे जहां उन्हें खाना-पीना भी न मिले और जज वकीलों के साथ दूसरे कमरे में जाकर सरकारी ख़र्च पर खाये-पिये और ऐश करे । जूरी से अधिक एडवोकेट या वकील अबू तालिब के लिए परेशानी का कारण बने जो एक ऐसे पेशे से जुड़े थे जो इस्लामी न्यायिक व्यवस्था के लिए अजनबी था ।

अबू तालिब मानता है कि अंग्रेज़ 'जज' प्रतिष्ठत और ईशपरायण है और वकीलों की चालाकियों से बचाते हैं, लेकिन अदालत की लंबी कार्यवाहियों और मुक़दमों के बहुत अधिक ख़र्च वादी को न्याय प्रदान करने से वंचित कर देते हैं, यहां तक कि नेकनीयत जज भी वकीलों को अवसर देते हैं कि मक़दमे को उलझाएं और गवाहियों को भयभीत करें । वह कहता है कि प्राय: क़ानून का शासन प्राकृतिक न्याय के विरुद्ध ही जाता है और ईशपरायण जज भी इन्सान के बनाए हुए इस क़ानून का उल्लंघन किये बिना न्याय के साथ फ़ैसला नहीं दे सकते ।

बहरहाल सामान्यत: वे मुसलमान जिन्होंने यूरोप की न्यायिक व्यवस्था का जायज़ा लेने का कष्ट उठाया वे उससे प्रभावित हुए । मिस्र के शैख़ रिफ़ाआ ने, जो 1826 ई॰ से 1831 ई॰ तक पेरिस में रहा, इतना परिश्रम किया कि फ़्रांसीसी संविधान के पूरे पाठ का अरबी में अनुवाद किया ।

शैख़ रिफ़ाआ समानता के फ़्रांसीसी दृष्टिकोण से पूरी तरह सहमत नहीं था । उसने लिखा कि आर्थिक मामलों पर इस दृष्टिकोण को लागू नहीं किया जा सकता ।" उनके भीतर समानता केवल उनके शब्दों और उनके कर्मों तक ही सीमित है, उनकी संपत्ति पर यह दृष्टिकोण लागू नहीं होता ।" शैख़ रिफ़ाआ का विचार है कि फ़्रांसीसी दानशील नहीं हैं, बल्कि कंजूस हैं ।

वास्तव में दानशीलता तो अरबों के पास है । तथापि वह फ़्रांस के इस दृष्टिकोण की प्रशंसा करता है कि क़ानून के सामने सब बराबर हैं । और इसे न्याय का ऊंचा दर्जा प्राप्त करने और शिष्ट कला-कौशल में उन्नति का कारण बताता है । वह लिखता है कि जिसे वे आज़ादी कहते हैं और जिसे प्राप्त करने के लिए वे प्रयास करते हैं वह वही है जिसे हम न्याय और समानता कहते हैं और इसका कारण यह है कि आज़ादी का शासन का अर्थ है क़ानून के सामने सबकी बराबरी निश्चित करना ।

साइंस व टेक्नोलॉजी

मुस्लिम साइंस के उत्कृष्ट काल का प्रारंभ ईरानी, हिन्दुस्तानी और सबसे अधिक यूनानी साइंस की पुस्तकों के अनुवाद करने से हुआ । यद्यपि अनुवाद करने का अभियान 11वीं सदी में समाप्त हो चुका था तथापि इस्लामी साइंस पर उसके बाद तक भी काम जारी रहा । मुसलमान वैज्ञानिकों ने चिकित्सा, कृषि, भूगोल और युद्ध कलाओं जैसे विभिन्न और एक-दूसरे के विपरीत ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्रों में अपनी खोज और व्यावहारिक अनुभवों में बहुत अधिक अभिवृद्धि की । जिन बाह्य प्रभावों ने मुसलमानों की वैज्ञानिक उन्नति में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी वह यूनानी, अंतरिक्ष विज्ञान और विशेष रूप से गणित या सांख्यिकी, जिन्हें अरबी सांख्यिकी कहा जाता है, हिन्दुस्तान से आये ।

ज्ञान की इन चीज़ों का अत्यधिक महत्व था । इसके अतिरिक्त मंगोलों के आक्रमण के साथ पहली बार इस्लामी दुनिया का सीधा संबंध चीन से हुआ और सुदूर पश्चिम की संस्कृति और साइंस के कुछ प्रभाव मुसलमानों के दैनिक जीवन पर भी पड़े । अलबत्ता मुसलमानों का चिंतन इससे कम प्रभावित हुआ ।

इस काल में पश्चिम का प्रभाव व्यावहारिक न होने के बराबर था । इसका कारण यह भी था कि पश्चिम के पास उस समय कुछ देने को भी नहीं था । अब तक ज्ञान-विज्ञान पर केवल एक ऐसा अरबी मूल पाठ है जो पश्चिम के छपे हुए मूल पाठ पर आधारित है । यह एक अरब यहूदी का मूल पाठ था । अर्थात लिखा तो अरबी में गया है लेकिन लिपि इबरानी है । यह अंतरिक्ष मंडल का नक़्शा है, जिसमें नक्षत्रों की गति दिखायी गयी है । प्रत्यक्षत: इसका स्रोत 'खज़ाटली' के नगर नौवारा से मिलने वाली पुस्तक है जो 1327 ई॰ में लिखी गयी थी ।

चूंकि वह इबरानी लिपि में लिखी गयी इसलिए अरबों के लिए इसे पढ़ना कठिन था, क्योंकि वे यह लिपि नहीं पढ़ सकते थे जिसका अर्थ यह हुआ कि वह पुस्तक यहूदी वैज्ञानिकों के लिए थी । इससे एक ओर वास्तविकता भी प्रकट होती है कि मध्यकाल और आधुनिक काल के आरंभ तक ये यहूदी वैज्ञानिक विशेषकर यहूदी चिकित्सक ही थे, जिनके माध्यम से पश्चिमी ज्ञान-विज्ञान दुनिया तक पहुंच रहे थे ।

12वीं सदी का मुसलमान लेखक उसामा इब्न मुंकज़ इस बारे में बड़े विस्तार के साथ लिखता है कि मध्यकाल के यूरोप में जो चिकित्सा प्रचलित थी उसने मुस्लिम दुनिया को इस प्रकार प्रभावित किया–

मनेतेरा के सरदार (पड़ोसी सलीबी जंगजू) ने मेरे चाचा को लिखा कि उसका एक साथी बीमार है । उसकी चिकित्सा के लिए किसी चिकित्साक को भेज दें । उन्होंने एक शामी ईसाई चिकित्सक साबित को भेज दिया । वह केवल 10 दिन ही वहां रहा और वापस आ गया । हमने उससे कहा–

"कितनी जल्दी तुमने रोगी को अच्छा कर दिया ।" उसने उत्तर दिया–वे मेरे पास दो रोगी लाए । एक सलीबी योद्धा था जिसके पैर पर फोड़ा था और एक स्त्री थी जिसके दिमाग़ पर असर था । मैंने योद्धा के पैर पर पट्टी बांधी और फोड़ा फूट गया और उसे फ़ायदा हो गया । मैंने स्त्री को भूखा रखा और उसे खुश रखने की कोशिश की । फिर एक फ़िरंगी चिकित्सक उनके पास आ गया । वो कहने लगा, "यह आदमी बिल्कुल नहीं जानता कि इनकी चिकित्सा कैसे की जाए ।" इसके बाद उसने योद्धा से पूछा कि, "तुम क्या पसन्द करोगे ? एक टांग के साथ जीवित रहना या दो टोंगों के साथ मर जाना ?" इस पर योद्धा ने कहा– "एक टांग के साथ जीवित रहना ।"

इस पर ईसाई चिकित्सक ने कहा, "एक भला चंगा सिपाही और एक कुल्हाड़ा मेरे पास लाओ ।" ये दोनों लाए गये । इस बीच में वो वहां खड़ा रहा । अब उस चिकित्सक ने रोगी की टांग लकड़ी के तख़्ते पर रखी और सिपाही से कहा इसकी टांग पर कुल्हाड़ा चलाओ और एक ही वार में उसे काट दो ।"

मैं यह सब कुछ देख रहा था । सिपाही ने टांग पर एक बार कुल्हाड़ा चलाया लेकिन टांग नहीं कटी । फिर उसने दूसरा वार किया तो टांग की मज्जा बाहर निकल पड़ी और उस आदमी की तत्काल मृत्यु हो गयी ।

अब वह चिकित्सक स्त्री की ओर मुड़ा और बोला, "इस स्त्री पर भूत आ गया है और वो इस पर मोहित हो गया है । इसका सर मूंड डालो ।" अत: उसका सर मूंड दिया गया और उसने सामान्य भोजन करना प्रारंभ कर दिया । जौ, लहसुन और सरसों आदि का वह सेवन करने लगी । उसका पागलपन और भी बढ़ गया । इस पर ईसाई चिकित्सक ने कहा, "वो भूत इसके सिर में घुस गया है ।" फिर उसने एक उस्तरा लिया और उस स्त्री के सिर पर सलीब का निशान काटा । फिर बीच में से खाल उधेड़ना प्रारंभ किया यहां तक कि खोपड़ी की हड्डी नज़र आने लगी । इस पर उसने नमक छिड़का और उस स्त्री की वहीं मृत्यु हो गयी ।

इस पर मैंने उनसे कहा, "क्या आपको अब भी मेरी आवश्यकता है ?" तो उन्होंने उत्तर दिया "नहीं ।" तो मैं घर चला आया । मैं उनकी प्राकृतिक कार्य-शैली के विषय में जान गया था जो मैं पहले नहीं जानता था ।"

बात यह है कि उसामा के चचा ने किसी मुसलमान को फ़िरंगियों के चंगुल में देने की बजाय निश्चय ही किसी स्थानीय ईसाई चिकित्सक को भेजा होगा । वो शामी (सीरियाई) ईसाई था । जालीनूस और बुक़रात के अनुयायी, मुसलमानों की भांति फ़िरंगी चिकित्सकों के पिछड़े और नृशंस चिकित्सा पद्धति से घृणा करता होगा और उसे भी सब कुछ देखकर अफ़सोस हुआ होगा लेकिन उसामा ने कुछ ऐसी घटनाएं भी बयान की हैं जहां फ़िरंगी चिकित्सकों की चिकित्सा लाभप्रद सिद्ध हुई । उनमें से एक हड्डियों के तपेदिक़ के रोगी की चिकित्सा थी ।

उसामा कहता है कि फ़िरंगी चिकित्सक ने सबसे पहले तो फ़िरंगी से यह क़सम ली कि वह मज़दूरी लेकर यह दवा किसी और को नहीं बताएगा । बहरहाल फ़िरंगियों के बारे में उसामा की राय सामान्यत: नकारात्मक ही है ।

केवल एक विभाग ऐसा है जिसमें मुसलमान सलीबी सिपाहियों का आदर के साथ नाम लेते थे । और वह था युद्ध का क्षेत्र या युद्ध कला । हथियारों और क़िलाबंदी के बारे में मुसलमानों ने फ़िरंगियों ही से सीखा । यह काम उन्होंने उनकी तकनीक सीखकर किया या फिर ईसाई युद्धबंदियों से सीखा ।

उस्मानी काल के आते-आते फ़िरंगी युद्ध कला में कमाल हासिल करना एक और दर्दनाक हक़ीक़त बन चुका था, विशेष रूप से तोपख़ाने और समुद्री बेड़ों और उससे संबंधित ज्ञान में यह एहसास सामान्यत: पाया जाता था । यद्यपि बारूद सदियों पहले चीन ने आविष्कृत किया था, लेकिन उसकी मौलिक वास्तविकता को समझने और उसके सैनिक महत्व को स्वीकार करने का श्रेय यूरोप को जाता है ।

मुस्लिम दुनिया प्रारंभ में तो इस चीज़ को स्वीकार करने में ही हिचकती रही थी । मालूम होता है कि सबसे पहले तोप का इस्तेमाल समुद्र तटों की रक्षा के लिए किया गया । जब तैमूर ने उसकी घेराबंदी कर ली थी । लेकिन सामान्यत: मिस्र और शाम के अधीनस्थ सुल्तान इस हथियार का इस्तेमाल करना कायरता की बात समझते थे । उनका ख़याल था कि यह चीज़ सामाजिक व्यवस्था को विनष्ट करने वाली है । अलबत्ता उस्मानी आग्न्यास्त्रों का महत्व शीघ्र की स्वीकार कर लिया गया था और तोड़ेदार बन्दूक़ों और तोपों के इस्तेमाल के कारण से ही वे अपने प्रतिद्वंद्वी मुसलमान शत्रु को पराजित करने में सफल हुए थे । उनमें से एक मिस्र का सुल्तान था और दूसरा ईरान का शाह ।

1453 ई॰ में कुस्तुन्तुनिया में यूरोपीय क़ानूनों और मुसलमान शत्रुओं पर उस्मानी विजय में तोपख़ाने का सफल प्रयोग ही निर्णायक सिद्ध हुआ । क़ाबिलेक़द्र बात यह है कि तोपें ढालने वालों और तोपचियों की बड़ी संख्या यूरोप से भाग कर आने वालों ही की थी । उस्मानी इन हथियारों के इस्तेमाल को जानते थे लेकिन उन्हें तैयार करने की साइंस और टेक्नोलॉजी के लिए वे अभी तक बाहरी देशों के मोहताज ही थे । यही बात तोपचियों और क़िलेबंदी के लिए ख़ंदकें तैयार करने वालों के बारे में भी कही जा सकती है । वे सब बाहर से आते थे । अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि समय बीतने के साथ उस्मानी तोपख़ाना धीरे-धीरे अपने यूरोपीय प्रतिद्वंद्वी के सामने कमज़ोर होता चला गया ।

तोपों और खनिज पदार्थों से उस्मानियों को जितनी दिलचस्पी थी उतनी ही दिलचस्पी उन्हें जहाज़ निर्माण और जहाज़रानी के क्षेत्र में यूरोप का मुक़ाबला करने के कारण थी । एक बर वीनस का एक बड़े चप्पुओं वाला बादबानी (पालवाला) जहाज़ तुर्की के समुद्र में शुष्क स्थल पर चढ़ गया तो उस्मानी समुद्री सेना ने उसका जायज़ा लेने और उसकी विशेषताएं अपने जहाज़ में सम्मिलित करने के लिए अपने इंजीनियर वहां भेजे और अपनी राजधानी के मुफ़्ती से परामर्श किया गया कि इन मामलों में इन्कारियों की खोजों की नक़ल करना जायज़ है या नहीं ? उत्तर मिला कि

इन्कारियों को पराजित करने के लिए उनके हथियारों की नक़ल करना जायज़ है ।

उस समय जो परामर्श किया गया वह उस ज़माने के लिहाज़ से अत्यंत महत्वपूर्ण था । मुस्लिम रिवायतों के अनुसार आविष्कार और खोज उस समय ही जायज़ है जब वह अच्छाई के लिए हो और ऐसी नज़र भी आती हो । अरबी में 'बिदअ' का अर्थ है नयी 'खोज' । जो बुरे अर्थ में प्रयुक्त किया जाता है क्योंकि इसका अर्थ होता है कि हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और आपके आदरणीय साथियों से कथनी और करनी की जो रिवायतें चली आ रही हैं उनसे हट जाना । अत: मुसलमानों की दृष्टि में बिदअत का वही अर्थ हो गया है जो ईसाइयों में 'Heresay' का है ।

बिदअत का एक प्रकार यह भी है कि इन्कारियों की नक़ल की जाए । हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) की एक हदीस है कि "जो व्यक्ति जिन लोगों की नक़ल करता है वह उन में से है ।"

इसका अर्थ यह लिया जाता था कि इन्कारियों से विशिष्ट कर्मों को अपनाना या उनकी नक़ल करना अपने आप में इन्कारियों जैसा कर्म है । अत: मुस्लिम धर्मशास्त्री और आलिम जहां भी मुसलमानों को यूरोप और इन्कारियों की नक़ल करते देखते थे तो उसका विरोध करते थे और उसे इस्लाम के ख़िलाफ़ क़रार देते थे । पुरातनवादी लोगों ने इसे हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया और साइंस एवं टेक्नोलॉजी यहां तक कि यूरोपीय चिकित्सा प्रणाली को भी इन्कारियों की हरकतों में शामिल कर दिया ।

फिर भी एक विभाग इससे अलग था और वह था 'युद्धकला' इन्कारियों और नसरानियों के विरुद्ध जिहाद मुस्लिम देशों और आम मुसलमानों की सामूहिक ज़िम्मेदारी भी । अपनी सुरक्षा के लिए लड़ी जाने वाली लड़ाई प्रत्येक मुसलमान का व्यक्तिगत कर्तव्य बन जाती थी । मुसलमानों के युद्ध संबंधी साज़ो-सामान को शक्तिशाली बनाना और इन्कारियों के ख़िलाफ़ जिहाद में उसे प्रभावी बनाना अपने आपमें स्वयं एक धार्मिक कर्तव्य था । इन्कारियों से लड़ने के लिए उनके तरीक़े और युद्ध कौशल सीखना आवश्यक था ।

अतएव इसके लिए उस्मानी धर्मशास्त्री और लेखक एक शब्दावली प्रयुक्त करते हैं, जिसे वह 'अल-मुक़ाबला बिलमिस्ल' (समान का समान से मुक़ाबला) कहते हैं । अर्थात इन्कारियों के अपने हथियारों से उनका मुक़ाबला करना । इधर युद्धकला को आधुनिक लाइनों पर सुदृढ़ करने के समर्थक भी मुसलमानों के अतीत और क़ुरआन व हदीस से मिसालें तलाश कर रहे थे । उनका तर्क था कि खुद हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) और पहले के मुस्लिम सेनापति ने आफ़ंदी मत के अनुयायी ईरानियों और बाज़नतीनी ईसाइयों की समुन्नत युद्ध संबंधी तकनीक अपनाने के लिए तैयार रहते थे, ताकि उनके साथ मुक़ाबला किया जा सके । बाद में ख़लीफ़ों की सेनाओं ने बाज़न्तीन के द्वारा यूनानी आग्नेयास्त्र प्राप्त किया । इस प्रकार ये लोग ईसाई दुनिया से बारूद और आग्नेयास्त्र प्राप्त करने का औचित्य भी प्रस्तुत करते थे । इसके लिए उन्हें क़ुरआन की एक आयत से भी सनद मिल गयी जिसमें ईमान वालों से कहा गया है कि "और मुशरिकों से तुम सबके सब लड़ो, जिस प्रकार वे सब मिलकर वे तुमसे लड़ते हैं ।"

इसकी व्याख्या यह की गयी कि इन्कारियों को पराजित करने के लिए मुसलमानों को सभी हथियार प्रयुक्त करने चाहिए चाहे वे इन्कारियों के ही हथियार क्यों न हों ।

उस्मानी साम्राज्य युद्ध में सामान्यत: और तोपख़ाने व समुद्री सेना के लिए विशेष रूप से यूरोप की युद्धकला अपनाने के लिए तैयार थी । यहां उसे आलिमों के विरोध का कम सामना करना पड़ा था । उन्होंने खनिज पदार्थों में भी पश्चिम का अनुकरण किया । दक्षिण यूरोप में उस्मानियों के क्षेत्र अत्यंत महत्वपूर्ण खनिज पदार्थों से मालामाल थे । उनमें लोहा और चांदी विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । यहां खानों की खोदाई और लोहा व चांदी निकालने का काम जर्मन विशेषज्ञों के हाथों में था जो लाभ में भागीदारी के आधार पर उस्मानियों के यहां तैनात थे । खानों की खोदाई के लिए वे वही तरीक़ा अपनाते थे जिससे वे परिचित थे यहां तक कि खोदाई के लिए क़ानून भी उन्हीं के थे । ये धाराएं तुर्की के क़ानून में भी प्रचलित थीं और 'क़ानूनी सस' कहलाती थीं ।

इस प्रकार के उद्देश्य के लिए उस्मानी यूरोपीय विशेषज्ञों को काफ़ी बड़ी संख्या में सेवाएं देने को तैयार हो गये थे । इन विशेषज्ञों का एक बड़ा गिरोह बन गया था, जो 'ताएफ़ा अफ़रंजियान' कहलाता था ।" उस्मानी सुल्तान और उनके मंत्री यूनानी तकनीक के महत्व से परिचित थे और अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए यूरोप से विशेषज्ञ बुलाते थे लेकिन

पुरातनवादी धार्मिक लोगों की ओर से हमेशा उनका विरोध किया जाता था । इन लोगों की ओर से इन्कारियों की तकनीक अपनाने का इतना विरोध नहीं किया जाता था जितना स्थानीय तकनीक की उन्नति को रोकने का प्रयास किया जाता था ।

मुसलमानों के पास इतनी शक्ति और इतने अधिकार तो थे कि वे विदेश से विशेषज्ञ बुला लें, लेकिन पुरातनवादी आलिमों के प्रभावाधीन मदरसों और वैचारिक केन्द्रों में जो शिक्षा व्यवस्था प्रचलित थी उसके द्वारा अपनी तकनीक पैदा करने का अधिकार किसी सुल्तान के पास नहीं था ।

इन सभी कठिनाइयों के बावजूद उस्मानी दूसरे मुस्लिम देशों के मुक़ाबले में अच्छी स्थिति में थे । उस्मानी सुल्तान और उनके मंत्री कम से कम पश्चिमी तकनीक का महत्व देख रहे थे और कभी-कभी सीमित स्तर पर ही सही अनुसंधान के लिए उपाय भी करते रहते थे । इन शताब्दियों में उस्मानी न केवल यूरोप के समुन्नत हथियारों का मुक़ाबला कर रहे थे बल्कि अपनी कुछ खोजों और अन्वेषणों में वे उनसे आगे भी थे ।

16वीं और 17वीं सदी के कुछ यूरोपीय टीकाकारों ने उस्मानियों की इस उल्लेखनीय प्रगति का वर्णन किया है जिससे उन्होंने यूरोप के हथियारों और गोला बारूद की नक़ल की ओर उनमें परिवर्तन भी किये । 1683 ई॰ में तुर्की की ओर से वियाना की दूसरी घेराबन्दी में जो हथियार प्रयुक्त किये गये उस काल में आस्ट्रिया के कुछ टीकाकारों ने विशेष रूप से उनका उल्लेख किया है और लिखा है कि तुर्की की तोड़ेदार बन्दूकें आस्ट्रिया की बन्दूक़ों के बराबर नहीं थीं, बल्कि कुछ पहलुओं से विशेष रूप से अधिक दूरी पर निशाना मारने में वे इनसे भी अच्छी थीं । लेकिन विदेशी विशेषज्ञों और विदेशी कलाओं पर निरन्तर निर्भरता ने अपना रंग दिखाया ।

उस्मानियों के लिए तेज़ी से उन्नतशील पश्चिमी तकनीक और खोजों का मुक़ाबला करना नित्य प्रति कठिन होता गया और 18वीं सदी में उस्मानी साम्राज्य युद्ध कला में यूरोप से निर्णायक रूप से बहुत पीछे रह गया । यद्यपि शेष इस्लामी दुनिया से वह बहुत आगे था ।

परिवर्तन के ये चरण मुसलमानों और यूरोप के समुद्री बेड़ों में विद्यमान अन्तर से साफ़ स्पष्ट होता है । जब तक उस्मानी समुद्री बेड़े की सरगर्मियां रोम सागर तक सीमित रहीं उस समय तक वहां जहाज़ निर्माण और जहाज़रानी में वे यूरोप का ख़ासा मुक़ाबला करते रहे ।

17वीं सदी के प्रारंभ में जब उस्मानी साम्राज्य के प्रभाव पश्चिमी रोम सागर तक फैल गये तो अटलांटिक महासागर की समुद्री शक्तियों के साथ उनका सीधा संपर्क हो गया । इसमें उनकी सहायता पश्चिमी यूरोप में होने वाले ज़बरदस्त परिवर्तन ने भी की । 1603 ई॰ में इंग्लिस्तान की महारानी एलीज़ाबेथ की मृत्यु के बाद जैम्स प्रथम ने स्पेन के साथ संधि कर ली और 1604 ई॰ में समझौते के अंतर्गत दोनों देशों के बीच एक लंबी समुद्री लड़ाई का समापन हो गया ।

इस काल में हॉलैंड के साथ स्पेन का विवाद भी समाप्त हो गया और 1606 ई॰ में स्पेन ने हॉलैंडवासियों की स्वतंत्रता स्वीकार कर ली । बहुत से अंग्रेज़ और हॉलैंड के समुद्री लड़के जो स्पेन के विरुद्ध उन दोनों देशों की लड़ाइयों में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे थे । अब न केवल अर्थहीन हो गये बल्कि ख़तरनाक भी हो गये । अत: इंग्लिस्तान, हॉलैंड और दूसरे पश्चिमी देशों ने उन्हें बर्दाश्त करने की नीति छोड़ दी और अपने ही लड़ाकों के ख़िलाफ़ सख़्त कार्रवाई शुरू कर दी । उन लड़ाकों ने विपरीत परिस्थितियां देखी तो वहां से अपनी सरगर्मियां छोड़-छोड़कर उत्तरी अफ़्रीक़ा के समुद्र तटों की ओर फ़रार हो गये, यहां उनका स्वागत किया गया । ये पश्चिमी लड़ाके चौकोर बादबानों वाले ऐसे समुद्री जहाज़ इस्तेमाल करने के आदी थे जिनके दोनों ओर तोपें आदि लगी होती थीं । उन्होंने अपने मेज़बानों को ये जहाज़ बनाने का तरीक़ा सिखाया और उन्हें इस्तेमाल करना भी बताया ।

उत्तरी अफ़्रीक़ा के इन मुसलमानों ने तुरंत ही पुराने शैली के बादबानी जहाज़ों के मुक़ाबले में इन जहाज़ों की विशेषता पहचान ली और ये अंदाज़ा लगाया कि इन जहाज़ों में अधिक हथियार रखा जा सकता है । अतएव शीघ्र ही वे समुद्री लड़ाइयों के नये तरीक़ों में निपुण हो गये और उनके समुद्री बेड़े उत्तरी अफ़्रीक़ा से जलडमरुमध्य जिब्राल्टर, ब्रितानिया द्वीप और उससे भी आगे तक मार करने लगे ।

कुछ अवधि तक मुसलमान समुद्री बेड़े ईसाइयों के बेड़ों के बराबर या उन से अच्छे ही रहे लेकिन यह उत्कृष्टता अधिक समय तक बनी नहीं रही और धीरे-धीरे अवनति का शिकार हो गयी । अब चूंकि पश्चिम से आने

वाले शरणार्थियों और इस्लाम क़बूल करने वालों की संख्या में भी कमी आ गयी थी इसलिए वे अपना स्तर बनाए नहीं रख सके और उनका ह्रास होता चला गया । उस्मानी और उत्तरी अफ़्रीक़ा के जहाज़ निर्माण के उद्योग उस तीव्रगामी उन्नति का साथ नहीं दे सके जो 17वीं और 18वीं सदी में यूरोप में हो रही थी । 18वीं सदी के अंत में यह स्थिति हो गयी कि उस्मानी जो हथियार और जहाज़ निर्माण में आत्मनिर्भर थे अब विदेशी जहाज़साज़ों से समुद्री जहाज़ मंगाने पर विवश हो गये । ये उस्मानी साम्राज्य के लिए बहुत ही दुखद बात थी ।

हथियार, गोलाबारूद और जहाज़रानी के अतिरिक्त एक और लाभधारी विभाग ऐसा था जिसमें यूरोप उन्नति कर रहा था । यह विभाग था चिकित्सा का । 15वीं और 16वीं सदी तक परिस्थितियां काफ़ी बदल चुकी थीं । पहले ज़माने में यह हाल था कि सलीबी लड़ाइयों के पश्चिमी लड़ाके चिकित्सा उपचार के लिए मुसलमानों या पूर्वी ईसाइयों या यहूदी चिकित्सक की सहायता चाहते थे । अब यह यूरोप था जो इस क्षेत्र में भी उन्नति कर रहा था और मुसलमान अवनति । चिकित्सा क्षेत्र का संबंध चूंकि मानव के व्यक्तिगत जीवन और स्वास्थ्य से है इसलिए दूसरी सामूहिक साइंस और टेक्नोलॉजी के मुक़ाबले में उसकी और अधिक ध्यान आकृष्ट किया गया । चिकित्सा मानव के व्यक्तिगत स्वास्थ्य बल्कि उसके जीवन का प्रश्न भी किसी हद तक जुड़ा हुआ है और रोगी का जीवन और मरण चिकित्सक की दक्षता और अल्लाह की कृपा पर निर्भर है ।

प्रत्येक काल और प्रत्येक स्थान पर इन्सान अच्छे से अच्छा चिकित्सक या डॉक्टर खोजने का प्रयास करता रहा है । अर्थात उसके अपने विशुद्ध निजी प्रयोजन दूसरे सभी मामलों पर छा जाते हैं, इसलिए जो भी अच्छे डॉक्टर की खोज करता है और डॉक्टर अच्छा इलाज और अच्छी दवा । लेकिन इसके बावजूद पुराने ढंग के डॉक्टर और चिकित्सक इस उन्नति का मुक़ाबला करने के लिए मौजूद थे ।

प्रारंभ में तो उस्मानी साम्राज्य में पश्चिमी चिकित्सा का रिवाज बिल्कुल नहीं था । कभी-कभी ग़ैर-मुस्लिमों के ज़रिए अर्थात अधिकतर यहूदियों और ईसाइयों के ज़रिए इसे रिवाज मिला । 15वीं सदी में सुल्तान मुहम्मद फ़ातेह ने इटली से यहूदी चिकित्सक ज़िया को मोदीगायता को तुर्की बुलाया । यह व्यक्ति बाद में मुसलमान हो गया और याक़ूब पाशा के नाम से मशहूर हुआ । 16वीं सदी तक यहूदी चिकित्सक उस्मानी राज्य में सर्वसुलभ हो गये थे । उनमें से अधिकांश हस्पानवी, पुर्तगाली और इतालवी थे जो अपने-अपने देशों से वहां आये हुए थे । केवल सुल्तान ही नहीं उसकी प्रजा में से बहुत-से लोग अभी उनसे ही चिकित्सा कराते थे क्योंकि वे उन्हें अधिक योग्य और दक्ष मानते थे ।

ईसाई पश्चिम से अस्थायी रूप से वहां जाने वाले लोग इस बात पर नाक-भौं चढ़ाते थे कि यहूदी चिकित्सकों का दरबार में बहुत अधिक प्रभाव और पहुंच हो गयी है । उनमें से कुछ तो यहूदी चिकित्सकों का यह भी कटाक्ष करते थे कि वे लातिनी और यूनानी भाषाएं अधिक नहीं जानते और यूरोप में पश्चिमी चिकित्सा जिस तेज़ी से उन्नति कर रही है उसका साथ भी नहीं दे सकते । लेकिन उनमें से कुछ उनकी प्रशंसा भी करते थे और कहते थे कि वे बहुत पढ़े-लिखे लोग हैं और उनका अनुभव भी बहुत अधिक है । वे यूनानी, अरबी और इबरानी में मौजूद चिकित्सा ज्ञान से भली-भांति परिचित हैं ।

उनमें से कुछ यहूदी चिकित्सकों ने राज परिवार के रोगियों और सामान्य लोगों के फ़ायदे के लिए रिसाले (पत्रक) भी लिखे । ये रिसाले उन्होंने स्वयं भी लिखे और दूसरी भाषाओं से तुर्की में अनूदित भी किये । उनमें से एक पुस्तक का नाम है "आसा-एं-पैरां" । इस पुस्तक में बूढ़ों की बीमारियों और उनसे बचाव एवं उनकी चिकित्सा बताई गयी है । इसका लेखक कोई मैनुएल बर्दूद मालूम होता है जो कभी-कभी अपने-आपको बर्दोस लौसी तांस लिखता है ।

संभवत: वह पुर्तगाल का यहूदी था जो ईसाइयों के डर से अपना धर्म छिपाये हुए था । वह 1530 ई॰ में पुर्तगाल में आया था । पहले वह लंदन गया था फिर इंडो-यूरोप चला गया वहां से इटली गया और अंत में तुर्की पहुंचा और अपने यहूदी मज़हब को ज़ाहिर किया । पुस्तक में चिकित्सक उपचार के साथ उन अनुभवों का उल्लेख भी किया गया है जो उसे यूरोप के सफ़र के दौरान प्राप्त हुए ।

उदाहरण के रूप में वह लिखता है कि अंग्रेज़ अंडा और मछली किस प्रकार पकाते हैं और सर्दियों में ठंड से बचने के लिए लंदन वाले कौन-सा ईंधन इस्तेमाल करते हैं । वह लिखता है कि अंग्रेज़ और जर्मन निवासियों की आदत है कि

नाश्ते में ताज़ा मक्खन और अंडे खाते हैं और उनके यहां रिवाज यह है कि आदमी के लिए खाने से पहले वहां पकाए हुए आलू बुख़ारे पेश किये जाते हैं । वह ईसाइयों के दोपहर के खाने की आदत की बुराई करता है और मुसलमानों की प्रशंसा करता है कि सुबह ही सुबह खाना खा लेते हैं । मालूम होता है कि यह पुस्तक सुल्तान सुलैमान ज़ीशान के लिए लिखी गयी थी ।

मैनुएल बर्दूद उन अनेक यूरोप से आये यहूदी चिकित्सकों में से था जो सुल्तान के यहां सेवा में थे । इन लोगों का महत्व इतना बढ़ गया था कि उस्मानी दरबार के रोज़नामचों के अनुसार चिकित्सकों के दो ग्रुप बना लिए गये थे । एक मुसलमान चिकित्सकों का । कहा जा सकता है कि मुसलमान चिकित्सक अभी तक मुसलमानों की प्राचीन चिकित्सा विधि से ही उपचार कर रहे थे और यहूदी यूरोप की चिकित्सा प्रणाली अपनाए हुए थे । हालांकि यूरोप के साथ संपर्क स्थापित न होने के कारण उनका ज्ञान भी धीरे-धीरे पुराना पड़ता जा रहा था । उस काल में यहूदियों की लिखी गयी पुस्तकों में से एक पुस्तक दंत चिकित्सा पर भी मिलती है ।

यह पुस्तक मौसस आमून ने लिखी थी जो उन्दुलुस का यहूदी था । सुलैमान ज़ीशान ने उसे अपना वरिष्ठ यहूदी चिकित्सक नियुक्त किया था । दंत रोगों की चिकित्सा और उपचार पर तुर्की भाषा में यह पहली पुस्तक मालूम होती है और संभवत: दुनिया भर में भी आरंभिक पुस्तकों में से ही है । उस काल का एक और संक्षिप्त रिसाला चिकित्सा मिश्रणों पर है जिसको लिखने वाला अपने आपको विनम्रता के साथ मूसा जालीनूस इसराईली कहता है । वह दावा करता है कि उसके रिसाले की रचनाएं इस्लामी, फ़िरंगी, यूनानी और यहूदी रचनाओं पर आधारित हैं ।

इन यहूदी चिकित्सकों में से कई ने तो राजनीतिक भूमिका भी निभायी । सुल्तान और मंत्रियों के साथ चूंकि उनके व्यक्तिगत संबंध होते थे और वे यूरोप की भाषाओं और वहां की परिस्थितियों से भी अवगत होते थे इसलिए तुर्की शासकों और विदेशी राजनयिकों दोनों के लिए बहुत लाभप्रद होते थे अतएव उनमें से कुछ ने तो काफ़ी प्रभाव और पहुंच बना ली थी और कई तो राजनय प्रतिनिधि बनाकर बाहर भेजे गये ।

इससे अगली सदी में उस्मानी चिकित्सकों को एक ऐसा कड़ुवा अनुभव हुआ जिसके कारण उन्हें विवश होकर यूरोप की चिकित्सा विशेषज्ञता प्राप्त करने की ओर उन्मुख होना पड़ा । यह एक ऐसी बीमारी थी जिसके पहले उनका वास्ता नहीं पड़ा था और यह पश्चिम से आयी थी इसलिए उसका नाम ही फ़िरंगी रोग पड़ गया जो आज तक प्रचलित है ।

यह रोग था आतशक (प्रमेह)। इस रोग पर पहला तुर्की निबंध था जो उन चिकित्सा संबंधी निबंधों के संग्रह का एक भाग था जो सुल्तान मुहम्मद चतुर्थ को 1655 ई० में पेश किया गया था । यह निबंध दरदना के जेरूला मुफ़राक़ा सतरद (1483-1553 ई०) की प्रसिद्ध रचनाओं पर आधारित है और इसमें सान फ़ैना (मृत्यु 1558 ई०) से भी फ़ायदा उठाया गया है । उनमें दूसरे रोगों पर जो चर्चा की गयी है 16वीं सदी के अन्य प्रसिद्ध यूनानी चिकित्सकों का हवाला दिया गया है ।

इस पुस्तक से स्पष्ट होता है कि लेखक यूरोपीय चिकित्सा से परिचित हैं और संभवत: लातिनी भाषा को भी जानता है और कम से कम उसके पास कोई आदमी है जो उसे लातिनी पढ़कर समझा देता है लेकिन यूरोपीय चिकित्सा के बारे में उसका ज्ञान कुछ पुराना है । यह पुस्तक 1655 ई० में सुल्तान को पेश की गयी थी । लेकिन इसमें जिन यूरोपीय पुस्तकों के हवाले दिये गये हैं वे 16वीं सदी के हैं । जो यहूदी चिकित्सक 16वीं सदी में यूरोप से आये वे इस सदी के चिकित्सा ज्ञान के उच्चतम स्तर का प्रतिनिधित्व करते थे लेकिन 17वीं सदी में जो यहूदी चिकित्सक तुर्की में मौजूद थे उनका ज्ञान 16वीं सदी का था ।

17वीं सदी के मध्य से उस्मानी साम्राज्य के यूनानी चिकित्सक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए इटली भेजे जाते थे लेकिन इससे कोई आधारभूत परिवर्तन नहीं आया । उस्मानी साम्राज्य में साइंस की पुस्तकें और रिसाले लिखने में जितना समय लिया जाता और जिस प्रकार वे आसान भाषा में लिखी जातीं इससे पश्चिमी और उस्मानी साइंस के बीच समय की एक बड़ी दूरी पैदा हो गयी और फिर यह दूरी बढ़ती ही गयी ।

उस्मानी पुस्तकों में समय-समय पर पश्चिमी साइंस के जो हवाले मिलते हैं उनसे अंदाज़ा होता है कि वे रिसर्च, चिंतन और विचारों के आदान-प्रदान एवं ज्ञान में क्रमश: वृद्धि के हवाले से नहीं सोचते थे । नयी खोजों के बारे में

जानने की कोशिश कहीं नज़र नहीं आती । ऐसा लगता है कि उन्हें जानकारी नहीं थी कि ऐसा कोई अन्वेषण कहीं हो भी रहा है । इस काल में अंगों के विवरण, कार्य और उनकी व्याख्या के ज्ञान में जो ज़बरदस्त क्रांति आ रही थी उससे वे लोग बिल्कुल ही अनभिज्ञ थे ।

इस्लाम के प्रारंभिक काल में इज्तिहाद (क़ुरआन व सुन्नत की रोशनी में निर्णय) का उसूल प्रचलित था जिसके अनुसार आलिम, धर्मशास्त्री और क़ाज़ी (न्यायाधीश) शरीअत और क़ानूनों की उन बातों में स्वतंत्र रूप से अपनी राय दे सकते थे जिन पर क़ुरआन व हदीस में विस्तार और व्याख्या मौजूद नहीं है । फ़िक़्ह (धर्मशास्त्र) का बड़ा हिस्सा इसी प्रकार अस्तित्व में आया लेकिन धीरे-धीरे ये सिलसिला बन्द हो गया और यह सोच लिया गया कि सभी कठिनाइयां दूर हो गयी हैं अतएव पुरातनवादी आलिमों की ओर से फ़ैसला कर लिया गया कि इज्तिहाद का द्वार बन्द हो गया है । अब स्वतंत्र रूप से राय देने की गुंजाइश नहीं है और न इसकी अनुमति दी जा सकती है ।

उन्होंने कहा कि सभी प्रश्नों का उत्तर मिल चुका है इसलिए अब केवल उन पर अमल करना ही काफ़ी है । इज्तिहाद के द्वार बन्द करने के निर्णय की रोशनी में यदि मुसलमानों के प्रारंभिक कार्यों का जायज़ा लिया जाए तो मालूम होता है कि इज्तिहाद और आज़ादाना राय ने मुसलमानों से कई बड़े-बड़े काम कराए थे और उस ज़माने में वैज्ञानिक सरगर्मियों और वैज्ञानिक खोजों का कितना बड़ा भंडार सामने आया था । इज्तिहाद का द्वार बन्द होने के साथ ही वैज्ञानिक ज्ञान की खोजों और रचनात्मक कार्यों की गति धीमी पड़ गयी और केवल नक़ल ही बाक़ी रह गयी ।

कुछ समय के लिए यूरोप से आने वाले यहूदियों ने उस्मानी चिकित्सा में एक नये काल का बीज डाला । लेकिन वास्तविकता यह थी कि जो कुछ वे अपने साथ लेकर आये थे वे कुछ नयी जानकारियों और विवरणात्मक चीज़ें ही थीं, जिन्हें उन्होंने पुराने ज्ञान-विज्ञान में सम्मिलित कर दिया ।

समय बीतने के साथ चूंकि यूरोप से उनका संपर्क टूट गया इसलिए वे मध्य-पूर्व के समाज का हिस्सा बन गये । अतएव अब वे अपने मुसलमान पड़ोसियों से किसी ज्ञानात्मक समस्या पर किसी प्रकार का मौलिक मतभेद ही नहीं रखते थे ।

इस काल में तुर्की में रहने वाले यूनानी किसी हद तक यहूदियों का स्थान आ गया था और सत्ता में उनकी पहुंच बढ़ रही थी । पैनाज्योत्स निकोसियास पहला यूनानी था जो तुर्की आया और उस्मानी साम्राज्य में सेवारत हुआ । उसने चिकित्सा विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के लिए पादवा यूनीवर्सिटी में प्रवेश लिया । जहां से 1650 ई॰ में उसने पाठ्यक्रम पूरा किया और इस्तंबूल वापस आकर वह चिकित्सक की हैसियत से इतना सफल हुआ कि प्रधानमंत्री मुहम्मद कोप्रूलो नें अपना निजी चिकित्सक बना लिया । जैसा कि पहले यहूदी चिकित्सकों के मामले में हुआ था अब प्रधानमंत्री यूरोप के मामलों में अपने यूनानी चिकित्सक के परामर्शों पर भरोसा करने लगे ।

निकोसियास ने इतनी तरक़्क़ी कर ली थी कि उच्च दरबार में ''तर्जुमाने आला'' बन गया । संभवत: इतने महत्वपूर्ण पद पर नियुक्त होने वाला वह पहला यूनानी था । 1673 ई॰ में उसकी मृत्यु के पश्चात एक और यूनानी चिकित्सक इस पद पर नियुक्त हुआ जिसका नाम था 'क्योते एलैग्ज़ेंडर मादर कोर्वातो'। उसने रक्त संचार में थक्के जमने की क्रिया पर एक शोध निबंध लिखा लेकिन यह निबंध उसने लातीनी भाषा में प्रकाशित कराया इसीलिए उसे उस्मानी चिकित्सा के स्थान पर यूरोपीय चिकित्सा के इतिहास का भाग माना जाता है । बहरहाल उस्मानी इतिहास में उसका नाम तर्जुमाने आला की हैसियत से आता है ।

18वीं सदी का प्रारंभ कुछ परिवर्तन लेकर आया । 1704 ई॰ में एक चिकित्सक उमर शिफ़ाई ने चिकित्सा उपचार में रासायनिक तत्वों के प्रयोग पर एक संक्षिप्त-सी पुस्तिका लिखी जिसे उसने पैराक्लेस का अनुवाद ठहराया । इसी काल में क्रीट के एक यूनानी मुस्लिम नूह इब्ने अब्दुल मन्नान ने चिकित्साशास्त्र पर एक और पुस्तक अनूदित की । एक और चिकित्सक शाबान शिफ़ाई ने जो मस्जिदें सलमानिया से संबद्ध मदरसा तिब्बिया (चिकित्सा प्रशिक्षण केन्द्र) का अध्यापक था । गर्भ, बच्चे के जन्म और जन्म से पहले और बाद में मां और बच्चे की देखभाल पर एक निबंध लिखा । ये सभी कृतियां चिकित्साशास्त्र के एक नये प्रकार और चिकित्सा उपचार में एक नयी शैली का दिशा-निर्देश करती हैं ।

स्पष्ट है इस अन्वेषणात्मक चिंतन का विरोध भी होता था । प्राचीन वैचारिक केन्द्र की ओर से उनके ख़िलाफ़

इतना शोर मचाया गया कि 1704 ई॰ में एक आदेश के द्वारा आधुनिक चिकित्सा का इस्तेमाल निषिद्ध ठहरा दिया गया। कहा यह गया कि अज्ञानी चिकित्सक यह काम कर रहे हैं।

आदेश में कहा गया था कि "कुछ तथाकथित फ़िरंगी चिकित्सकों की बिरादरी ने प्राचीन चिकित्सकों की चिकित्सा प्रणाली छोड़ दी है और वे कुछ ऐसे चिकित्सा उपचार कर रहे हैं जिन्हें 'आधुनिक चिकित्सा' कहा जाता है।" तुर्क चिकित्सकों को निर्देश दिया गया कि वे पुन: परीक्षा देने के लिए पेश हों। विदेशी चिकित्सकों पर चिकित्सा करने का प्रतिबंध लगा दिया गया लेकिन इस राजआज्ञा के बावजूद उमर शिफ़ाई ने आधुनिक चिकित्सा पर अपना अनुसंधान जारी रखा और आठ जिल्दों में अपना शोधकार्य प्रकाशित किया। यद्यपि सरकारी तौर पर जालीनूस और इब्ने सीना की चिकित्सा को बढ़ावा दिया जाता था लेकिन 'पैराकलीस' के चिकित्सा सिद्धांतों को मानने वालों की संख्या भी बढ़नी शुरू हो गयी थी।

अनेक राजनयिक जो यूरोप जाते थे वे साइंस विशेषकर टेक्नोलॉजी की ओर ध्यान देने लगे थे। मुहम्मद सईद आफ़ंदी बहुत ही दिलचस्पी के साथ फ़्रांस की परिवहन व्यवस्था का बार-बार उल्लेख करता है और उन नहरों, पुलों, सड़कों और सुरंगों के हवाले देता है जिनसे वो दक्षिणी समुद्रतट से पेरिस तक जाते हुए गुज़रा। उसे रसदगाह भी ले जाया गया जहां उसने अंतरिक्ष विज्ञान के और दूसरे यंत्र देखे और उनका मक़सद एवं उनकी लाभकारिता भी उसके समझ में आयी। वह अनगिनत ऐसी मशीनों का उल्लेख करता है जिनसे सितारों को देखा जाता था, जिनसे भारी बोझ आसानी से उठा लिया जाता था। जिनसे देखा जाता था कि नया चन्द्रमा कब निकलेगा और उन मशीनों से पानी नीचे से ऊपर खींचा जाता था।

इसके अतिरिक्त उसने और भी कई विचित्र और प्रशंसनीय चीज़ें देखीं। उसने आग पैदा करने वाले खोखले आईने देखे, जो उसके कथनानुसार दमिश्क के धातु ढालने वाले कारख़ानों के बने हुए थे। वे बड़े तश्त (थाल) के बराबर थे। उन आईनों से इतनी प्रचंड गर्मी पैदा होती थी कि लकड़ी जल जाती और धातु पिघल जाती। वो अंतरिक्ष विज्ञान के उपकरणों पर विस्तार के साथ वार्ता करता है और दूरबीन की बहुत प्रशंसा करता है।

फिर भी दूसरे लोग इन चीज़ों से अधिक प्रभावित नहीं हुए। साइंस और उसके द्वारा बनाए जाने वाले यंत्रों के बारे में इस प्रकार के रवैये की एक मिसाल मुस्तफ़ा हती आफ़ंदी के ये राजनय रोज़नामचे में मिलती है। मुस्तफ़ा 1748 ई॰ में सरकारी काम से वियाना गया था। जर्मनी में उसे और उसके साथियों को रस्दगाह (वेधशाला/जंतर मंतर) देखने के लिए आमंत्रित किया गया ताकि उस ज़माने के साइंसी कारनामे वे अपनी आंखों से देख लें। मुस्तफ़ा वहां गया लेकिन उससे प्रभावित नहीं हुआ।

"सम्राट के आदेश पर हमें रस्दगाह में आने का आमंत्रण दिया गया ताकि हम कुछ विचित्र यंत्र और आश्चर्यजनक चीज़ें देखें जो वहां रखी थीं। हमने कुछ दिनों के बाद उनका आमंत्रण स्वीकार कर लिया और सात-आठ मंज़िल की इमारत पर गये। ऊपर मंज़िल पर उस इमारत की छत खुली थी। हमने अंतरिक्ष से संबंधित यंत्र देखे और सूर्य, चन्द्रमा और सितारे देखने वाली छोटी-बड़ी दूरबीनें भी देखीं। बहुत से कलपुर्ज़ों में से एक चीज़ हमें ऐसी दिखाई गयी जो यह थी कि दो आपस में जुड़े हुए कमरे थे। उनमें से एक बहुत बड़ा पहिया-सा था। इस पहिये पर दो बहुत ही बड़ी शीशे की गोल गेंदें थीं। इसके साथ एक खोखला सिलेंडर लगा था। जो उससे भी पतला था। इसमें से एक लंबी ज़ंजीर दूसरे कमरे तक चली गयी थी। जब पहिया घुमाया जाता तो ज़ंजीर में से तेज़ तूफ़ानी हवा उस कमरे में जाती और वहां ज़मीन से ऊपर उठती।

यदि कोई आदमी उसे छू लेता तो उसकी उंगली पर चोट लगती और उसका शरीर झनझना उठता। इससे भी अधिक दिलचस्प बात यह है कि जो आदमी उसे छूता अगर कोई और आदमी उसे छूता और उस आदमी को कोई और आदमी छूता और उसे कोई और, और इस प्रकार दायरा बनाकर बीस-बीस आदमी एक-दूसरे को छूते तो इन सब की उंगलियों पर वैसा ही झटका लगता जैसा पहले आदमी को लगा। हमने स्वयं इसका अनुभव किया। चूंकि उन्होंने हमारे प्रश्नों को स्पष्ट उत्तर नहीं दिये और क्योंकि वे सारी चीज़ें केवल खिलौना हैं इसलिए हमने उचित नहीं समझा कि उसके बारे में और जानकारियां प्राप्त की जाएं।

एक और चीज़ जो उन्होंने हमें दिखायी वह तांबे की दो तश्तरियों से बनी हुई थी। हर तश्तरी एक ऐल (45 इंच लंबा होता) की दूरी पर एक कुर्सी पर रखी थी। एक

तश्तरी में आग भड़काई जाती तो दूसरी तश्तरी पर भी वही प्रभाव होता और ऐसा धमाका होता जैसे आठ बन्दूकें चलायी गयी हों ।

तीसरी चीज़ एक छोटी-सी मशीन थी । हमने देखा कि उन्होंने शीशी को पत्थर पर मारा लेकिन वह नहीं टूटी । फिर उन्होंने चकमक पत्थर को टुकड़े शीशी में डाले तो उंगली के बराबर मोटी वो शीशी जो पत्थर से भी नहीं टूटी थी आटे की तरह बिखर गयी, हमने इसका कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि अगर शीशी को आग से निकालने के तुरंत बाद पानी में ठंडा कर लिया जाए तो ऐसा हो जाता है । हमने इस उत्तर को फ़िरंगियों का करतब ही जाना ।

एक संदूक़ था, जिसके भीतर एक आईना था और बाहर लकड़ी के दो कुंडे थे । वे कुंडे घुमाए जाते तो भीतर से धीरे-धीरे काग़ज़ निकलना शुरू होता, काग़ज़ पर बाग़, महल और दूसरी मनभावन चीज़ें बनी होती थीं ।

इन खिलौनों के प्रदर्शन के पश्चात अंतरिक्ष के विशेषज्ञों को जागीरें दी गयीं और रस्दगाह के कर्मचारियों को नक़द पुरस्कार प्रदान किया गया ।

प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि क्या 18वीं सदी के यूरोपीय निवासी साइंसी आश्चर्यों से अपने उस्मानी समकालीनों के मुक़ाबले में अधिक प्रभावित होते थे । वास्तव में मौलिक अंतर सामाजिक और धार्मिक नीतियों का था । तुर्क अपने समाज की नीतियों को प्रकट कर रहे थे और पश्चिमी प्रतिनिधि अपनी सामाजिक नीतियों का इज़हार कर रहे थे ।

इसके अतिरिक्त उस्मानी दूसरे मुसलमानों की भांति पश्चिम में रहने वाले अनेकेश्वरवादियों से घृणा करते थे लेकिन अन्तर यह था कि उस्मानी घृणा के साथ इन प्रतिभावन इन्कारियों की उन वैज्ञानिक खोजों का अध्ययन करने और उनसे फ़ायदा उठाने के लिए तैयार भी थे जो उनके जीवन-शैली को ख़तरे में डाले बिना उनके काम आ सकें । यह बिन्दु इस्तंबूल में तैनात रोमा राज्य के राजदूत गीलन वी बसबक ने इस प्रकार बयान किया है ।

''किसी क़ौम में दूसरों की लाभप्रद खोजें स्वीकार करने में इतना संकोच नहीं किया (जितना मुसलमानों ने किया) मिसाल के तौर पर उन्होंने अपने इस्तेमाल के लिए छोटी-बड़ी तोपें और दूसरे आविष्कार स्वीकार कर लिए लेकिन वे अपने आपको कभी इस बात के लिए तैयार नहीं कर सके कि पुस्तकें छपाएं और जनसामान्य के लिए घड़ियां लगाएं, उनका ईमान है कि उनकी पवित्र पुस्तकें आदि छापी जाएंगी तो उनकी पवित्रता नष्ट हो जाएगी और यदि सार्वजनिक स्थल पर घड़ियां लगायी जाएं तो उनके संतुलन का अधिकार और प्राचीन परंपरा समाप्त हो जाएंगी ।''

लेकिन तुर्कों ने यह दोनों काम शीघ्र कर लिए । तुर्की और अरबी पुस्तकों की छपाई 18वीं सदी में प्रारंभ हो चुकी थी और घड़ियां इससे भी पहले आयात की जाने लगी थी यहां तक कि भव्य शाही मस्जिद में भी अंततः घड़ी लगा दी गयी थी । मुसलमानों के लिए समय निर्धारण के यंत्र कोई नयी चीज़ नहीं थे बल्कि प्राचीनकाल से धूप और पानी के द्वारा समय मालूम करने के जो यंत्र चले आ रहे थे, मुसलमानों ने उनमें से शोधन और परिवर्तन करके स्वयं अपने यंत्र बना लिए थे, यूरोप की मशीनी घड़ियों से मुसलमानों की दिलचस्पी बहुत पहले शुरू हो चुकी थी । पश्चिम में यह मशीनी घड़ियां 14वीं सदी से बनानी प्रारंभ कर दी थी ।

16वीं सदी तक यूरोपीय क्लॉक और घड़ियां उस्मानी साम्राज्य में काफ़ी नज़र आने लगी थीं बल्कि इनकी नक़ल भी शुरू हो गयी थी । घड़ीसाज़ी की कला पर शाम के एक व्यक्ति तक़ीउद्दीन (1525-1588 ई॰) की एक पुस्तक विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि जिसमें बताया गया कि वज़न और बैरिंग से किस प्रकार घड़ियां चलती हैं । यह पुस्तक इस कला के इतिहास में विशिष्ट स्थान रखती है ।

फिर भी उस्मानी साम्राज्य में जो घड़ियां और घड़ियाल इस्तेमाल किये जाते थे वे सभी यूरोप से आयात नहीं किये जाते थे । 1630 से 1700 ई॰ तक इस्तंबूल के महकेग़लाता में घड़ीसाज़ों का एक विधिवत संगठन था । उनकी घड़ियों और घड़ियालों का इस पर स्विस और बर्तानवी घड़ियों के विशेषज्ञों के बराबर था । फिर भी वे यूरोप के शरणार्थी थे, स्थानीय मुसलमान नहीं थे और फिर 17वीं सदी के अंत तक वे भी अपना स्तर बनाए नहीं रख सके थे । उनकी स्तरहीनता के कारणों में कई तत्व शामिल थे उनमें से एक आवश्यक पुर्ज़ों की प्राप्ति में बढ़ती हुई कठिनाइयां थीं । जो पश्चिमी देशों की व्यापारिक मानसिकता के कारण पैदा हुई थी । क्योंकि वे स्वयं ही उस्मानी रुचि और बाज़ार की आवश्यकता के अनुसार घड़ियां बना रहे थे और निर्यात कर रहे थे । अब वे पूरी तरह घड़ियां निर्यात करने में दिलचस्पी रखते थे । उनके कलपुर्ज़ों और आवश्यक सामान जो पहले

पश्चिम से जाते थे अब बन्द कर दिये गये । एक और कारण था यूरोप में पेंडूलम क्लॉक और स्प्रिंग से चलने वाली घड़ियों की तैयारी और उनके डिज़ाइनों में उन्नति जिनका मुक़ाबला इस्तंबूल के घड़ीसाज़ नहीं कर सकते थे । 18वीं सदी के प्रारंभिक वर्षों में ही तुर्की में घड़ीसाज़ी का उद्योग समाप्त हो गया ।

तुर्की जाने वाले आख़िरी पश्चिमी घड़ीसाज़ों में से एक घड़ीसाज़ प्रमुख फ़्रांसीसी विशेषज्ञ उमर अन्यात सांज़ाक़ रूसो का पिता आइज़क़ रूसो था, सांज़ांक रूसो ने भी अपनी 'स्वीकारोक्ति' में लिखा है कि ''मेरे भाई के जन्म के बाद मेरे पिता कुस्तुन्तुनिया रवाना हुए जहां सुल्तान के दरबार में घड़ीसाज़ नियुक्त हुए थे ।'' विचित्र संयोग है कि तुर्की में घड़ी की मंडी से वाल्तेयर का भी संबंध था । एक जागीरदार की हैसियत से उसने अपनी जागीर के लोगों की सहायता के लिए कुछ काम किये थे उन लोगों में जेनेवा के कुछ धार्मिक शरणार्थी भी थे, संयोग से ये घड़ीसाज़ थे । वाल्तेयर ने इनकी घड़ियों की बिक्री के लिए मंडियां खोजने का प्रयास किया ।

1771 ई॰ में वाल्तेयर ने फ्रेडरिक महान के नाम एक पत्र में लिखा कि ''तुर्की बहुत अच्छी मंडी है, पिछले साठ साल से वो जिनेवा से घड़ियां आयात कर रहा है और अब तक वह इस योग्य नहीं हुआ कि वह एक भी घड़ी तैयार कर सके या उसे ठीक भी कर सके ।

घड़ियों और घड़ियालों के अतिरिक्त एक और यूरोपीय खोज ऐसी थी जो मध्य-पूर्व के लोगों को लाभप्रद नज़र आती थी । ईरान जैसे सुदूर पूर्वी देश में 1480 ई॰ के प्रारंभ में एक कवि बूढ़ापे के आने का अफ़सोस करते हुए दूसरी कमज़ोरियों के अलावा कहता है–

''मेरी दोनों आंखें उस समय तक काम नहीं करतीं जब तक फ़िरंगी शीशा न लगाऊं इससे वे चार हो गयी हैं ।''

उधर पारंपरिक जीवन-शैली के लिए ख़तरा बताने वाली चीज़ों की छानपटक का काम भी बहरहाल जारी था । ये प्रतिबंध विचार पर थे जो खोज, जिज्ञासा, अनुभव, निरीक्षण, पर्वेक्षक और उन परिवर्तनों पर आग्रह करते थे जो पश्चिमी साइंस और टेक्नोलॉजी के आधार थे । पश्चिम टेक्नोलॉजी की सामग्रियां काफ़ी छानपटक के बाद आयात कर ली जाती थीं और कुछ अवसरों पर पश्चिमी साइंस से भी काम लिया जाता था, लेकिन केवल एक सीमा तक ।

18वीं सदी में यह प्रश्न उस समय अत्यंत प्रमुखता के साथ सामने आया जब एक के बाद एक पराजयों के बाद उस्मानी सरकार के सत्ताधारियों को एहसास हुआ कि उस्मानी साम्राज्य के ईसाई शत्रु युद्ध कला में ज़बरदस्त श्रेष्ठता प्राप्त कर चुके हैं और उस्मानी शक्ति फिर से वापस लाने के लिए परिवर्तन अनिवार्य हो चुका है । ये मनोभावों जानकली अली पाशा की एक स्मारिका में पूरी तरह प्रकट होते हैं । जो 1774 ई॰ में उस्मानियों की रूस से ज़बरदस्त पराजय के बाद उसने लिखी थी ।

अली पाशा ने लिखा है कि दो प्रश्न ऐसे हैं जो उसके मस्तिष्क को पल-पल बेचैन रखते हैं, एक प्रश्न यह है कि वह राज्य जो इतना अधिक शक्तिशाली था इतना शक्तिहीन कैसे हो गया है और दूसरा उसकी शक्ति व महानता बहाल करने के लिए क्या किया जा सकता है ? वह कहता है कि तुर्क सेनाएं अब भी वैसी ही बहादुर और वीर हैं । जनसंख्या भी उतनी ही है । सीमाएं भी उतनी ही व्यापक हैं और राज्य के संसाधन भी अभी तक बहुत अधिक हैं, फिर भी पहले इस्लाम की सेनाएं सामान्य रूप से इन्कारियों को अपनी सुरक्षा करने पर विवश करती थीं और और आज इन्कारी मुसलमानों को अपनी सुरक्षा पर विवश कर देते हैं । फिर भी जांकली अली पाशा जो उपचार प्रस्तावित करता है वह पुरानी शैली का ही है ।

वह कहता है स्वर्णकाल की ओर वापस चले जाओ लेकिन कुछ ऐसे लोग भी थे जो मूल समस्या पश्चिम की सैनिक श्रेष्ठता को समझ रहे थे और कह रहे थे कि इसका उत्तर सैन्य सुधार है । इसका एक महत्वपूर्ण हल यह था कि आधुनिक युद्ध कला के लिए प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किये जाएं ।

18वीं सदी में ज़मीनी और समुद्री इंजीनियरिंग के दो नये केन्द्र स्थापित किये गये । तुर्कियों ने पश्चिमी साइंस के कुछ पहलुओं को स्वीकार करने के लिए अभियान चलाया । 1734 ई॰ में इंजीनियरिंग का स्कोदर केन्द्र खोला गया था इसका एक अध्यापक मुहम्मद सईद था जो अनातोलिया का मुफ़्ती (धर्मादेशकर्ता) का बेटा था । कहा जाता है कि उसने तुर्कियों के इस्तेमाल के लिए निशाने की दूरी की माप का उपकरण आविष्कृत किया था । जो लोहे के पत्तरों पर आधारित था ।

इसके अतिरिक्त उसने एक रिसाला (पुस्तिका) लिखा

था जिसमें भौगोलिक अध्ययन की कठिनाइयों का उल्लेख भी था । उस काल की दूसरी रचनाएं भी मौजूद हैं जिनमें त्रिकोणमिति का एक तुर्की रिसाला भी है । यह रिसाला संभवत: पश्चिमी स्रोतों पर आधारित है । इटली के सैन्य काउंट 'मूंटे बो की सैनिक कलाओं पर प्रसिद्ध पुस्तक का अनुवाद और चिकित्साशास्त्र पर कुछ पुस्तकें भी उनमें सम्मिलित हैं ।

पहले प्रशिक्षण केन्द्र और पहले इंजीनियरिंग दस्ते की स्थापना का विरोध इसी के साथ ही प्रारंभ हो गया था । यह ज़बरदस्त विरोध तुर्की के जांनिसार कर रहे थे । और अंत में वे उन्हें बन्द कराने में सफल भी हो गये । फिर भी सशस्त्र सेनाओं को आधुनिक बताने का कार्य समाप्त नहीं हुआ । 1773 ई॰ में समुद्री इंजीनियरिंग का एक केन्द्र क़ायम करके यह सिलसिला फिर प्रारंभ किया गया । इस केन्द्र के अध्यापकों में कई यूरोपीय अध्यापक भी थे । इस केन्द्र के विद्यार्थियों में कुछ तो पुराने केन्द्र के लड़के ही थे । कुछ सैनिक अफ़सरों के बेटे थे । तोपख़ाने का एक पश्चिमी अफ़सर जिसने यह केन्द्र स्थापित करने में सहायता प्रदान की थी, सफ़ेद दाढ़ी वाले कप्तान और साठ वर्ष के प्रशिक्षुकों का उल्लेख करता है ।

इस बार विरोध करने वाली शक्तियां यह केन्द्र बन्द कराने में सफल नहीं हो सकीं, बल्कि इस प्रकार के केन्द्र उन्नति करते रहे । सुल्तान सलीम तृतीय और दूसरे मुसलमानों ने सैन्य इंजीनियरिंग चिकित्सा और इसी प्रकार के दूसरे ज्ञानों के जो केन्द्र क़ायम किये उनके लिए ये केन्द्र लाभकारी सिद्ध हुए ।

वीनस के पादरी 'ज्यॉन बतस्ता तोदरीनी' जो 1781 ई॰ और 1786 ई॰ के बीच इस्तंबूल गया था, सैन्य इंजीनियरिंग केन्द्र का विस्तारपूर्वक उल्लेख करता है । उसने वहां जहाज़रानी के बहुत से यंत्र, एटलस और यूरोपीय समुद्री नक़्शे देखे । इनके अतिरिक्त एटलस माइन का तुर्की नमूना, सिहारों की गति बताने वाला ग्लोबजिस पर तुर्की भाषा में सितारों और ग्रहों के चिन्ह थे । पेरिस का बना हुआ लोहे का आकाश गोला (जिससे अंतरिक्ष के आधाभूत दायरों और गतियों को मापा जाता है, कुछ अरब उपकरण जिनसे सितारों की ऊंचाई, गति और स्थान मालूम किया जाता था, तुर्की-फ़िरंगी घड़ियां, एक उत्कृष्ट बार्तानवी समन दायरा (जहाज़ रानी के काम में आने वाला) जिसे जॉन हैडली ने बताया था कई तुर्की कुतुबनुमे और दूसरे समुद्री यंत्र भी वहां थे ।

एक दूसरे कमरे में पादरी को ऐसा नक़्शा दिखाया गया जो रेशमी कपड़े पर छपा हुआ था । उसके नीचे तुर्की भाषा में लिखा था । यह मुतफ़रीका-इबराहीम ने 1141 हि॰ (1728-29 ई॰) में अनुवाद किया था । इसके अतिरिक्त विभिन्न साइज़ के तीन भौगोलिक ग्लोब, पेरिस की बनी एक बहुत ही उत्कृष्ट कोण मापी दूरबीन, दूरी की माप के आधुनिक उपकरण एक ऊंचाइयों के मापने वाली दूरबीन और त्रिकोण मापी के अनेक प्रकार वहां उपलब्ध थे । तोदरीनी कहता है कि उसने वहां जहाज़ों के स्तंभ चढ़ाने और उतारने वाली मशीन के वे मॉडल नहीं देखे जो तोत ने बनाई थी ।

यूरोप की बहुत-सी पुस्तकों में से उसने मौसियो दी लाण्डे की सितारों की गति पा पाण्डुलिपियां भी देखीं, जिनका तुर्की में अनुवाद किया गया था । उसने गाइड को बताया कि ये पाण्डुलिपियां आधुनिक नहीं हैं और परामर्श दिया कि नया एडीशन मंगाया जाए । इसके गाइड ने उसे खुद की भाषा की और पाण्डुलिपियां भी दिखायी जो यूरोपीय पुस्तकों से अनूदित की गयी थीं और धूप घड़ी, कुतुबनुमा और ज्यामिति पर पुस्तकें भी थीं, जो पढ़ाई जाती थीं ।

तोदरीनी का गाइड इस केन्द्र का चीफ़ इंस्पेक्टर था ।

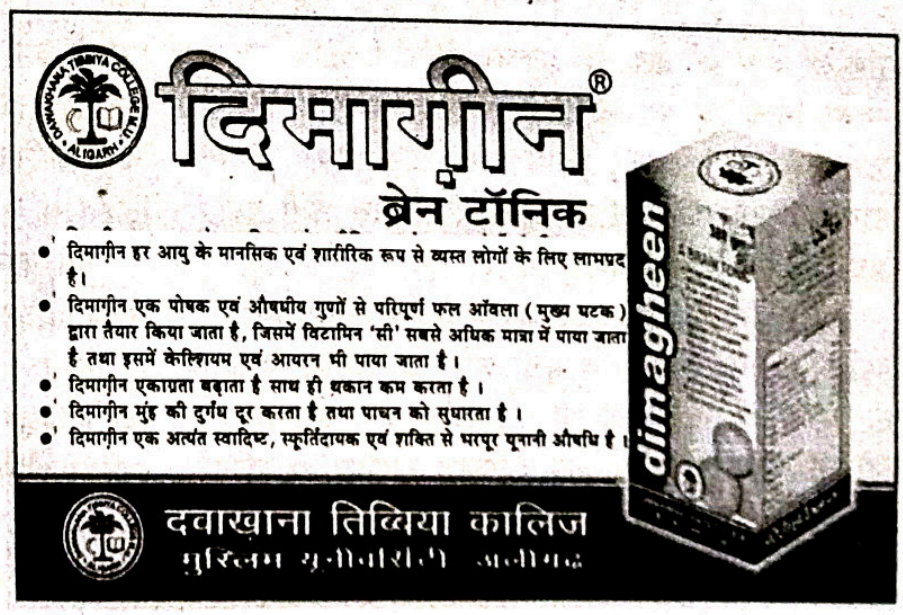

वह अलजज़ाइर का रहने वाला था । वह इतालवी, फ्रांसीसी और हस्पानवी भाषाएं बोल सकता था । वह अधेड़ उम्र का था । उसने बताया कि वह रोम सागर, अटलांटिक महासागर और हिन्द महासागर यहां तक कि अमेरिका तक की समुद्री यात्रा करके इस्तंबूल पहुंचा है । वह एक निपुण जहाज़रां था, उसने बताया कि वह इंग्लिस्तान के यंत्र और फ़्रांसीसी नक़्शे अधिक पसन्द करता है ।

अलजज़ाइरी अध्यापक ने बताया कि केन्द्र में 50 से अधिक छात्र हैं । ये छात्र जहाज़ों के कप्तानों और तुर्क प्रतिष्ठित जनों के बेटे हैं । लेकिन उनमें कुछ ही ऐसे हैं जो ध्यान और मेहनत से पढ़ते हैं ।

लेकिन 1783 ई॰ में रूस ने क्रीमिया पर क़ब्ज़ा कर लिया तो ये विद्यार्थी भी अपनी पढ़ाई पर अधिक ध्यान देने लगे क्योंकि अब उस्मानियों को एहसास हुआ कि वे जिस प्रकार के ख़तरे से दोचार हैं और उसका सामना करने के लिए अधिक बुद्धि और चेतना से काम लेना पड़ेगा । 1784 ई॰ में मंत्री ख़लील हामिद पाशा की तहरीर पर और फ़्रांसीसी दूतावास की सहायता से प्रशिक्षण का एक नया प्रोग्राम प्रारंभ किया गया । प्रशिक्षण देने वाले दो फ़्रांसीसी इंजीनियर थे तो आर्मीनिया के तर्जुमानों (अनुवादकों/दुभाषियों) की सहायता से पढ़ाते थे । लेकिन 1787 ई॰ में ऑस्ट्रिया और रूस के साथ लड़ाई छिड़ जाने के बाद यह कार्यक्रम भी बन्द हो गया । तुर्की व फ़्रांसीसी अध्यापकों की उपस्थिति को तटस्थता के विपरीत समझा गया इसलिए फ़्रांस ने उन्हें वापस बुला लिया । इन अध्यापकों की वापसी और लड़ाई की परेशानियों ने प्रशिक्षण कार्यक्रम कुछ नुक़्सान पहुंचाया । अंततः 1792 ई॰ में उत्तरी पड़ोसियों के साथ युद्ध विराम संधि हो जाने के बाद नये सुल्तान सुलैमान तृतीय को ये अवसर मिला कि यह कार्य पुनः प्रारंभ किया जाए । अब फिर फ़्रांस से ही रुजू किया गया और 1793 ई॰ में अध्यापकों और कारीगरों की एक सूची पेरिस भेजी गयी, जिनकी तुर्की में आवश्यकता थी ।

1796 ई॰ में रईस आफ़ंदी वातिब ने एक और इससे भी लंबी सूची पेरिस भेजी । ये सूची फ़्रांस के जनरक्षा विभाग की कमेटी को भेजी गयी थी । फ़्रांस में अब कोई सम्राट नहीं था बल्कि वहां पर अब लोकतंत्र स्थापित हो चुका था । लेकिन तुर्क सुल्तान को इससे कोई प्रयोजन नहीं था । 1796 ई॰ में फ़्रांस का नया राजदूत जनरल 'आबियर दोबियत जो अमेरिकी और फ़्रांसीसी क्रांति में हिस्सा ले चुका था । फ़्रांस के सैन्य विशेषज्ञों के साथ इस्तंबूल पहुंचा ।

इस बार सैनिक और समुद्री अफ़सरों को प्रशिक्षण के लिए केन्द्र जहां खोले गये उनमें तोपखाना, क़िलाबन्दी, जहाज़रानी और उसके सहायक विधाओं की शिक्षा और प्रशिक्षण दिया जाता था । फ़्रांस के अध्यापकों से कहा गया कि वे इंस्ट्रक्टर के रूप में काम करें और विद्यार्थियों के लिए फ़्रांसीसी भाषा सीखना अनिवार्य ठहरा दिया गया । पुस्तकालय में भी लगभग 400 यूरोपीय पुस्तकें थीं, उनमें अधिकतर फ़्रांसीसी थीं । इन पुस्तकों में फ़्रांसीसी भाषा भी की प्रसिद्ध इन्साइक्लोपीडिया (Grande Encylopedie) भी थी ।

फ़्रांस की क्रांतिकारी लड़ाइयों और फिर नेपोलियन की लड़ाइयों के कारण एक बार फिर ये केन्द्र कठिनाइयों में फंस गये । कुछ केन्द्र तो पुरातनवादियों के दबाव के कारण ही बन्द हो गये । सुल्तान महमूद ने 1826 ई॰ में जब सुधार प्रारंभ किये तो उस समय केवल दो केन्द्र शेष बचे थे । एक, सैन्य प्रशिक्षण का और दूसरा समुद्री इंजीनियरिंग का सुधारों के अंतर्गत 1827 ई॰ में एक मेडीकल कॉलेज और 1834 ई॰ में मिलिट्री साइंसेज़ का कॉलेज खोला गया । इन कॉलेजों को इंग्लिस्तान (इंग्लैंड) के सेंड हर्स्ट की पद्धति पर स्थापित किया गया था । इन सभी कॉलेज के अध्यापकों में विदेशी अध्यापकों की संख्या बहुत थी जिनमें अधिकांश फ़्रांसीसी थे । छात्रों के लिए एक विदेशी भाषा सीखनी अनिवार्य थी । जो मुसलमान पश्चिमी भाषाएं जानते थे उनके लिए आवश्यक था कि वे पश्चिमी विज्ञान पढ़े और पश्चिमी पुस्तकों का तुर्की में अनुवाद करें या स्वयं किसी भाषा में पाठ्यक्रम संबंधी पुस्तकें लिखें ताकि आधुनिक तकनीकी और वैज्ञानिक शब्दावलियां विकसित हों जो तुर्की भाषा में निहित थीं ।

इस काम के लिए दो व्यक्तियों ने अत्यंत महत्वपूर्ण सेवाएं दीं उनमें से एक थे अताउल्लाह मेहमूद उर्फ़ शानीज़ादे (1769-1816 ई॰)। वह अपनी मृत्यु तक राजकीय इतिहासकार रहा । शिक्षा और प्रशिक्षण की दृष्टि से उसकी हैसियत आलिमों जैसी थी लेकिन उसने अपने तौर पर यूरोप की कम से कम एक भाषा सीख ली थी और वहां की चिकित्सा और विज्ञान का अध्ययन किया था । राजकीय इतिहास लेखन के

अतिरिक्त उसका सबसे बड़ा कारनामा चिकित्सा विज्ञान पर ऑस्ट्रिया की एक पाठ्यक्रम संबंधी पुस्तक का अनुवाद है जो संभवतया उसने इस पुस्तक के इतालवी अनुवाद से किया था । अपने अंगों की व्याख्या और उनके कार्यों पर अपनी ओर से भी एक निबंध लिखा था । उसने ऑस्ट्रिया की एक और चिकित्सा विज्ञान की पुस्तक का अनुवाद किया । यह पुस्तक स्वास्थ्य सुरक्षा पर थी ।

तुर्की भाषा में पाठ्यक्रम की उसकी पुस्तक आने से एक काल का समापन हुआ और दूसरे काल का प्रारंभ हुआ । अब तक समय-समय पर पश्चिमी ज्ञान और कलाओं की वृद्धि के बावजूद तुर्की में प्राचीन यूनानी और इस्लामी चिकित्सा पद्धति प्रचलित थी, जिसकी बुनियाद जालीनूस और इब्ने सीना के ढंग पर हुई । जैसे इस्लामी दर्शन का आधार अरस्तु और बतलियानूस के दर्शन पर था । पैरीक्लीस, कोपरनिक्स, कैपलर और गैलीलियो की खोजें तुर्कियों के लिए वैसी अजनबी और अर्थहीन थी जैसे लूथर और कैलून के धार्मिक तर्क ।

अब पहली बार शानीज़ादे ने तुर्की भाषा में नयी चिकित्सा भाषा पैदा की (जो आधुनिक काल के भाषाई शब्दों तक तुर्की में प्रचलित रही)। उसने चिकित्सा विज्ञान के छात्रों को एक व्यापक पाठ्यक्रम उपलब्ध कराया । जो तुर्की भाषा में चिकित्सा विज्ञान की पुस्तकों के प्रकाशन और इलाज व उपचार की पद्धतियों के लिए उद्‌भव केन्द्र सिद्ध हुआ ।

जो कार्य चिकित्सा के लिए शानीज़ादे ने किया वही कार्य गणित और भौतिकशास्त्र के क्षेत्र में ख़्वाजा इसहाक़ आफ़ंदी (मृत्यु 1834 ई०) ने किया । इसहाक़ जन्मजात यहूदी था और ईरान का रहने वाला था जो बाद में किसी समय मुसलमान हो गया और इंजीनियरिंग कॉलेज में एक अध्यापक नियुक्त हो गया । वह प्रोन्नति करके चीफ़ इंस्टक्टर बन गया । कहा जाता है कि वह फ़्रांसीसी, लातिनी (लेटिन), यूनानी और इबरानी भाषाएं जानता था । तुर्की, फ़ारसी और अरबी से तो अवगत था ही । इसहाक़ ने कई पुस्तकें लिखीं जिनमें अधिकतर अनूदित थीं उनमें सबसे महत्वपूर्ण पुस्तक चार जिल्दों पर आधारित है । इस पुस्तक में गणित और भौतिकशास्त्र संबंधी विधाओं पर व्यापक चर्चाएं हैं ।

इस पुस्तक में पहली बार तुर्की छात्रों को उन विधाओं से परिचित कराया जो पश्चिम में पढ़ाई जा रही थीं । शानीज़ादे की भांति इसहाक़ आफ़ंदी ने भी अपना शब्दकोष बनाया जो तुर्की में 19वीं सदी में प्रचलित था और जो भाषाई शब्दकोषों तक में प्रयुक्त होता रहा । जिस प्रकार यूरोपीय लेखक लातीनी और यूनानी भाषा का सहारा लेते थे उसी प्रकार उस्मानी आलिम और अध्यापक नयी शब्दावलियां तैयार करने के लिए प्राय: अरबी और किसी हद तक फ़ारसी भाषाओं की सामग्रियों पर निर्भर करते थे । इसलिए इसहाक़ ने भी जब अपना शब्दकोष तैयार किया तो इन दोनों भाषाओं का ही सहारा लिया । इसकी कुछ शब्दावलियां अरब देशों में आज भी प्रचलित हैं । ख़्वाजा इसहाक़ आफ़ंदी की इसकी रचनाएं विशेष रूप से सैन्य और इंजीनियरिंग साइंसों से संबंधित हैं ।

इन दो व्यक्तियों की पुस्तकों का प्रकाशन, नये कॉलेजों की स्थापना जहां पर इनकी पुस्तकें पढ़ाई जा रही थीं और सबसे अधिक महत्वपूर्ण यह है कि अधिक से अधिक विद्यार्थियों को विज्ञान संबंधी विषयों की शिक्षा देने के लिए यूरोप भेजने से प्राचीन साइंस, प्राचीन चिकित्सा, गणित, भौतिकशास्त्र और रसायन विज्ञान का समापन हो गया । मुसलमानों के पिछड़े देशों में ये प्राचीन विधाएं कुछ अवधि तक प्रचलित रहीं लेकिन अंतत: वह समय आ गया जब साइंस का अर्थ पश्चिमी साइंस हो गया क्योंकि कोई और साइंस थी भी नहीं ।



सांस्कृतिक जीवन

जहां इस्तंबूल का बड़ा बाज़ार शुरू होता है, वहीं मस्जिद 'नूरे उस्मानिया' स्थित है । इस मस्जिद का निर्माण-कार्य वास्तुकार चलबी मुस्तफ़ा की देख-रेख में 1755 ई॰ में पूरा हुआ । राज मिस्त्रियों का प्रमुख एक ईसाई 'साइमन' था । तुर्की में इस्लामी सांस्कृतिक विकास में यह मस्जिद एक नये मोड़ की हैसियत रखती है । यदि आम नक़्शे की दृष्टि से देखा जाए तो नूरे उस्मानिया मस्जिद सुल्तान मुहम्मद फ़ातेह से लेकर आने वाले सभी सुल्तानों के ज़माने तक निर्मित की जाने वाली मस्जिदों की परंपरा के अनुसार ही है कि बीच में एक गुंबद है और सामने प्रांगण है, लेकिन निर्माणकला के कुछ दूसरे पहलुओं की दृष्टि से उसमें काफ़ी अन्तर है । यहां स्पष्ट रूप से इतालवीं बैरूक साज-सज्जा एवं शैली का प्रभाव नज़र आता है ।

यूरोप के सांस्कृतिक प्रभावों की पहली लहर, जो नूरे उस्मानिया मस्जिद में देखी जा सकती है, 18वीं सदी के प्रारंभ में आयी । उस्मानी वृत्तांत में इस काल को 'लालेदौरी' या 'दौरेलाला' (Tulip) कहा जाता है । यह काल 1718 ई॰ में आस्ट्रिया के साथ पसारदोहर की संधि के साथ प्रारंभ होता है । इसका यह नाम इसलिए पड़ा कि पूरा उस्मानी समाज गुलाला या यूटलिप के शौक़ में दीवाना हो गया था । यह शांति और सुरक्षा का काल था ।

इसी काल से नये रास्ते भी निकले । आशा के अनुरूप सबसे पहले उस्मानियों ने अपनी संस्कृति के स्रोतों की ओर रुजू किया और विधिवत कार्यक्रम के अंतर्गत अरबी एवं फ़ारसी की उन प्राचीन पुस्तकों का तुर्की में अनुवाद कराया, जो तुर्की भाषा में उपलब्ध नहीं थीं ।

अनुवाद की इस योजना को पश्चिम तक जिस प्रकार व्यापकता प्रदान की गयी, वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है । केवल कुछ वर्ष पहले प्रधानमंत्री दामाद इबराहीम पाशा की 1716 ई॰ में पैरावार्डीन की लड़ाई में मृत्यु हो गयी थी । उनका एक बहुत बड़ा पुस्तकालय था । सुल्तान के वरिष्ठ मुफ़्ती अबुल हसन इस्माईल आफ़ंदी ने आदेश दिया कि इस पुस्तकालय को किसी प्रकार की हानि न पहुंचायी जाए । यह पुस्तकालय एक तबर्रूक वक़्फ़ है, क्योंकि इसमें दर्शनशास्त्र, इतिहास, ज्योतिष और काव्य की पुस्तकें विद्यमान हैं (इनमें कुछ यूरोपीय पुस्तकें भी थीं)। अतएव सारी पुस्तकें शाही महल भेज दी गयीं ।

पश्चिम के साथ दिलचस्पी अभी तक बहुत सीमित थी । पश्चिम से संबंध का उद्देश्य राज्य को सुदृढ़ बनाना और शत्रु का प्रतिरोध करना था । पश्चिम से जो रहनुमाई या जानकारियां वांछित थीं, वे केवल सैन्य और युद्ध संबंधी मामलों से संबंधित थीं या अधिक से अधिक उन राजनीतिक मामलों के बारे में थीं जिनकी जानकारी आवश्यक थी । फिर भी उस समय इस वास्तविकता का एहसास पैदा होने लगा था कि सैनिक और राजनीतिक मामलों के अतिरिक्त भी ऐसे मामले हैं जिनसे अवगत होना आवश्यक है । इस सिलसिले में मुहम्मद आफ़ंदी को दिये गये वे आदेश उल्लेखनीय हैं जो 1712 ई॰ में फ़्रांस रवाना होने से पहले दिये गये । उससे कहा गया, "क़िलेबंदियों और कारख़ानों का निरीक्षण करना । सांस्कृतिक संसाधन और शिक्षा व्यवस्था का गहरायी से अध्ययन करना और वापसी पर बताना कि उनके कौन से क़दम तुर्की में व्यवहार में लाये जा सकते हैं ।"

मुहम्मद आफ़ंदी की इस राजनयिक यात्रा ने सामाजिक और सांस्कृतिक तौर पर हलचल मचा दी । तुर्क राजदूत के आगमन और उसके परिधान ने पेरिस में एक नये फ़ैशन को जन्म दिया, जिसका नाम Turquerie पड़ा । महिलाओं ने ऐसे परिधान को पहनना शुरू किया और स्थापत्य कला एवं संगीत पर भी तुर्की-प्रभाव दिखायी पड़ा । यह प्रभाव यूरोप के दूसरे देशों तक फैला । इस्तंबूल में जो फ़्रांसीसी फ़ैशन प्रचलित हुआ, उसका प्रभाव सुल्तान और मंत्रियों के उन महलों में विशेषकर उन बाग़ों में नज़र आता है, जो 'दौरेलाला' में निर्मित किये गये थे ।

मुहम्मद आफ़ंदी ने अपनी रिपोर्ट में फ़्रांस के विभिन्न स्थानों के बाग़ों के विवरण का उल्लेख किया है और उनकी बहुत ही प्रशंसा की है । संगमरमर के फ़ौवारों, उनके आसपास बाग़ों की पट्टियां और फूलों की क्यारियों से बाग़ों में फ़्रांसीसी प्रभाव साफ़ नज़र आता है । शाही महलों में

पश्चिमी शैली का फ़र्नीचर भी प्रवेश कर गया जो इससे पहले नज़र नहीं आता था । ख़याल है कि प्रारंभ में ये फ़र्नीचर पश्चिमी मेहमानों के लिए बनाया गया था ।

ललित कलाओं की ओर रुचि के सिलसिले में मुहम्मद आफ़ंदी की यह रचना हमारी भली-भांति रहनुमाई करती है–

''उन लोगों के यहां नियम यह है कि सम्राट राजदूतों को हीरों से सजी अपनी तस्वीर पेश करता है, लेकिन चूंकि मुसलमानों में तस्वीर की अनुमति नहीं है, इसलिए मुझे हीरे से सजी कमर की पेटी, पेरिस के बने दो ग़लीचे, एक बड़ा आईना, एक बन्दूक़ और पिस्तौल, सोने के वर्क़ चढ़े ज़ेवरात की एक सन्दूक़ची, सोने का वर्क़ चढ़ी तांबे की घड़ी, बर्फ़ रखने के लिए चीनी क बरतन जिनके दस्तों पर सोने के वर्क़ लगे थे और एक शक्करदानी पेश की ।''

मालूम ऐसा होता है कि मुहम्मद आफ़ंदी तस्वीर को अच्छा नहीं समझता था । तस्वीरों से उसे निश्चय ही कोई दिलचस्पी नहीं थी, क्योंकि फ़्रांस के महल में उसे वैयक्तिक तस्वीरें दिखायी गयीं, उसने उनका केवल सरसरी-सा ही उल्लेख किया है–

''फिर हमने बहुत ही सुन्दर तस्वीरें देखनी शुरू कीं, जो दरबार के 'ऐवाने आम' (जन-सदन) में जड़ी थीं । हम सम्राट के साथ घूरते रहे जो स्वयं ही उनके बारे में बताता रहा ।''

इसके विपरीत वह साज-सज्जा के लिए प्रयुक्त होने वाले कपड़े की प्रशंसा करता है–

''वहां आभूषित कपड़े का एक विशेष कारख़ाना है, जो सम्राट की मिल्कियत है...। उन्हें मालूम हुआ कि एक राजदूत वहां आ रहा है तो उन्होंने जितने प्रकार के भी कपड़े तैयार थे, वे सब दीवारों पर लटका दिये । कारख़ाना चूंकि बहुत बड़ा है, इसलिए दीवारों पर एक सौ से अधिक प्रकार के कपड़े लटके होंगे । हमने उन्हें देखा तो हैरत से उंगली मुंह में दबायी ।

यथार्थ प्रिय कला और वह भी 18वीं सदी की कला के बारे में मुहम्मद आफ़ंदी की प्रतिक्रिया काफ़ी ज़ोरदार भी है और ज्ञानवर्धक भी । विशेष रूप से हाथ से बनाए गये चित्रों और आभूषित कपड़े देखकर उसकी विरोधाभासी प्रतिक्रिया सामने आती है । दीवार पर जो आयल पेंटिंग लगी थी, वह उसके लिए बिल्कुल नयी चीज़ थी, लेकिन आभूषित कपड़े जिन्हें वह 'गलीम' कहता है, उनसे वह परिचित था, इसलिए वे उसकी समझ में आ गये ।

फ़ोटोग्राफ़ी के काल से पहले यूरोपीय राजदूत और दूसरे पर्यटक जिनके पास काफ़ी धन होता था, प्राय: दूसरे सेवकों के अतिरिक्त एक चित्रकार भी अपने साथ रखते थे । यह चित्रकार कैमरे का काम भी करता था । मालूम होता है कि यूरोप से दीवारी पेंटिंग्स और विशेषकर प्रिंट्स एवं पुस्तकों की साज-सज्जा के लिए चित्र बनाने वालों की बहुत मांग थी । इन चित्रों में विश्व के आश्चर्य दिखाये जाते थे । स्पष्ट है, अपने बीच पश्चिमी चित्रकारों की मौजूदगी से तुर्क अनभिज्ञ तो नहीं रह सकते थे । इस्तंबूल की विजय के बाद इतालवी चित्रकार जेंटील बैयलीनी इस्तंबूल गया था और इसलिए फ़ातेह सुल्तान का पोरट्रेट बनाया था ।

कहा जाता है कि इस चित्रकार ने सुल्तान के कहने पर वीनस की सेनोरिया भेजा था । सुल्तान मुहम्मद सानी की मृत्यु के बाद उसके बेटे और उत्तराधिकारी सुल्तान बायज़ीद ने जो चित्रों आदि को नाजायज़ समझता था, अपने पिता की सारे तस्वीरों को फाड़ डाला और उसका पोरट्रेट बाज़ार में बेच दिया । यह पोरट्रेट जिसे वीनस के एक व्यापारी ने ख़रीद लिया था । अंतत: यह लंदन की नेशनल गैलरी तक पहुंच गया ।

इस लिहाज़ से पोरट्रेट इस्लामी दुनिया के लिए नयी चीज़ थी । मूर्ति बनाने की कला पर तो बिल्कुल ही पाबंदी थी । कहीं जाकर 19वीं सदी में मूर्तियां बनाने की शुरुआत हुई, लेकिन मुसलमान आज भी मूर्तियों का निर्माण करना गुनाह समझते हैं । फिर भी पुस्तक आदि की सज्जा के लिए पेंटिंग्स बनाने का रिवाज था । विशेष रूप से ईरान और तुर्की में ये तस्वीरें यूरोपीय पेंटिंग्स से दो पहलुओं से मुख्यत: भिन्न होती थीं । एक तो इसलिए कि ये पुस्तकों की साज-सज्जा तक सीमित होती थीं । कहीं-कहीं ये दीवारों पर भी बनायी जाती थी । दीवारी पेंटिंग्स टांगना मौलिक रूप से पश्चिमी रिवाज था । मुसलमानों में 19वीं सदी के अंत तक ऐसा कोई रिवाज नहीं था । दूसरे यह कि इन पेंटिंग्स में जो शक्लें बनायी जाती थीं, वे सामान्यत: साहित्यिक और ऐतिहासिक होती थीं । क्लासिकी इस्लामी कला में पोरट्रेट मिलते हैं, लेकिन बहुत ही कम और उन्हें भी कभी पसन्दीदा नहीं समझा गया ।

उस्मानी सुल्तान और उनके चित्रकारों की ओर से

पोरट्रेट बनाने का प्रारंभ ही यूरोपीय प्रभावों को प्रकट करता है । मुहम्मद फ़ातेह ने जो मिसाल क़ायम की थी, उसके बाद आने वाले सुल्तानों ने उसका अनुसरण नहीं किया, तथापि 16वीं सदी तक यह रिवाज आम हो चुका था । 1579 ई॰ में तस्वीरों का जो संग्रह पूर्ण किया गया, उसमें उस्मानी सुल्तानों की तस्वीरों का एलबम भी शामिल था । इस संग्रह को तरतीब देने वाला दरबारी इतिहासकार सैयुदुल लुक़मान था । दूसरा चित्रकार था उस्मानी दरबार का नक़्क़ाश उस्मानी । उसने 12 सुल्तानों की तस्वीरें बनायी थीं, जो उस समय तक सत्तारूढ़ रहे थे ।

लुक़मान की प्रस्तावना से स्पष्ट होता है कि पुराने सुल्तानों की तस्वीरें खोजने में काफ़ी कठिनाई होती थी और उसने एवं उसके साथियों ने विवश होकर फ़िरंगी चित्रकारों की रचनाओं से सहायता प्राप्त की थी । उसका संकेत संभवत: उन तस्वीरों की ओर था, जो यूरोपीय चित्रकारों ने पुस्तकों के लिए, जो तुर्क सुल्तानों ने बनवायी थीं, जो अधिकतर काल्पनिक थीं । यह प्रभाव उस सावधानी के साथ देखा जा सकता है जो पोरट्रेट की यथार्थता बनाए रखने यहां तक कि हर सुल्तान का सही परिधान दिखाने के मामले में बरती जाती थी ।

17वीं सदी के अंत और 18वीं सदी के प्रारंभ तक ऐसा वातावरण बन गया था कि सुल्तान और दरबारी कुलीन लोग अपना पोरट्रेट बनवाने के लिए स्वयं बैठते थे । उस काल का प्रसिद्ध यूरोपीय चित्रकार ज़ां बैपटिस्ट वान मोर (1671-1737) था, जिसने तुर्की में तीस वर्ष व्यतीत किये । दूसरा चित्रकार अन्तवां दी फ़ादरे (1702-1706) था । वह माल्टा का रईस था और फ़्रांसीसी राजदूत के मेहमान के रूप में कुछ अवधि तक इस्तंबूल में रहा । इनमें से बहुत-से चित्रकारों ने सुल्तान और मंत्रियों के साथ राजदूतों की मुलाक़ात की तस्वीरें बनायीं, जो संभवत: राजदूतों ने ही बनवायी होंगी । ज़ां मोर ने यूरोप में बेचने के लिए भी सुल्तान और मंत्रियों आदि की तस्वीरें बनायीं, लेकिन यह ज्ञात नहीं होता कि सुल्तान आदि ने ये तस्वीरें स्वयं सामने बैठकर बनवायी थीं या उसने स्वयं ही बनायी थीं । बहरहाल तोपकापी में जो तस्वीरें मौजूद हैं उनसे स्पष्ट होता है कि कुछ तस्वीरें कहने पर बनवायी गयी थीं ।

उल्लेखनीय बात यह है कि अब मुसलमान चित्रकारों की रचनाओं में भी बदलाव आना प्रारंभ हो गया था । मुहम्मद फ़ातेह के जो दो पोरट्रेट आज भी इस्तंबूल के महल में रखे हैं वे तुर्क चित्रकारों के उत्कृष्ट नमूने मालूम होते हैं । वे इतालवी नमूने पर बनाए गये हैं । उनका स्टाइल तो इस्लामी है, लेकिन उन पर पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट है विशेषकर इसलिए कि उनमें छवि दिखायी गयी है । पहली तस्वीर के बारे में कहा जाता है कि वह पहले प्रसिद्ध उस्मानी चित्रकार सनान की बनायी हुई है । सनान के बारे में मशहूर है कि वह वीनस के चित्रकार पावली का शिष्य था ।

18वीं सदी, विशेष रूप से इस सदी के अंत में तुर्क चित्रकारी पर पश्चिम का प्रभाव स्पष्टत: दृष्टिगोचर हुआ । इसका का एक कारण यह था कि दरबार और दूसरे विभागों में यूरोपीय चित्रकार सेवारत थे । उनमें से एक पोलैंड का चित्रकार था जो बाद में मुसलमान हो गया । एक यूरोपीय मेहमान ने 1781 ई॰ और 1785 ई॰ के बीच आर्मेनिया के एक चित्रकार राफ़ील की बहुत-सी तस्वीरें दी थीं, जो महल में रखी गयीं । 18वीं सदी के अंत तक चित्रकारी की प्राचीन परंपरा बिल्कुल ही समाप्त हो गयी यहां तक कि पुस्तकों की सज्जा के लिए जो तस्वीरें बनायी जा रही थीं, उन पर भी पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट था । चित्रकारी पर तो पश्चिमी प्रभाव पड़ रहा था, लेकिन संगीत पर यह प्रभाव बाद में पड़ा ।

चित्रकारी पर पश्चिमी प्रभाव केवल तुर्की तक ही सीमित नहीं रहा, अपितु ईरान और उससे भी आगे तक यह प्रभाव दृष्टिगोचर हो रहा था । इस्लामी कला में नाम पैदा करने वाले चित्रकारों में एक प्रसिद्ध नाम बहज़ाद का है जो 15वीं सदी के अंतिम और 16वीं सदी के प्रारंभिक अवधि तक चित्रकारी में छाया रहा । उसके बहुत-से शिष्य थे, जिन्हेंने उसके स्टाइल को अपनाया । उसकी चित्रकारी की शैली को 'हराती मक्तबा चित्रकारी' कहा जाता है । इस चित्रकारी केन्द्र की बहुत-सी तस्वीरें हैं, जिनमें से कुछ शाही परिवार के व्यक्तियों की भी तस्वीरें हैं । कहा जाता है कि उनमें से कुछ तस्वीरें बहज़ाद ने स्वयं बनायी थीं, लेकिन इसकी पुष्टि नहीं हो सकी ।

इससे पहले के काल के कुछ पोरट्रेट भी मिलते हैं, लेकिन पोरट्रेट बनाने के लिए चित्रकार को बुलाना और पोरट्रेट के लिए स्वयं चित्रकार के सामने बैठना निश्चय ही यूरोपीय प्रभाव ही को ज़ाहिर करता है । ख़याल है कि यह

प्रभाव तुर्की से ईरान आया जहां 16वीं सदी के प्रारंभ में पहले ही ह में बैलीनी की एक पेंटिंग की नक़ल मिलती है जो किसी ईरानी चित्रकार की है । महत्वपूर्ण बात यह है कि बैलीनी की तुर्क तस्वीरें न केवल यह कि ईरान में प्रसिद्ध थीं, बल्कि ईरानी चित्रकार उनकी नक़ल भी करते थे ।

1502 ई० के आरंभ में सफ़वी परिवार के सत्तारूढ़ होने के बाद ईरान के तुर्की और यूरोप के साथ अधिक निकट संबंध स्थापित हो गये और वहां से बहुत-से लोग ईरान के समुद्र तटों और दूसरे शहरों में आने लगे । इस परिवार के प्रारंभिक सम्राटों में से शाह तहामासप विशेष रूप से चित्रकारी को बहुत पसन्द करता था । उसने तबरेज़ में शाही चित्रालय का प्रभार संभालने के लिए बहज़ाद को आमंत्रित किया था ।

यूरोप के प्रभाव के और भी प्रमाण हस्पानवी राजदूत डान गारसयावी सलोअफ़गारवा के बयान से मिलते हैं । उसे स्पेन के फ़िलिप तृतीय ने अपना राजदूत बनाकर 1716 ई० में ईरान भेजा था । वह एक छोटी-सी तस्वीर का उल्लेख करते हुए कहता है, "वहां बहुत-सी सुन्दर तस्वीरें थीं, जो अपेक्षाकृत उन तस्वीरों से बहुत अच्छी थीं जो ईरान में आमतौर पर नज़र आती हैं । बताया गया कि इनका चित्रकार कोई सौल है । वह यूनान में पैदा हुआ । उसका इटली में पालन-पोषण हुआ जहां उसने चित्रकारी भी सीखी । इन्हें देखकर ही अंदाज़ा हो गया कि ये किसी यूरोपीय चित्रकार का काम है क्योंकि इनमें इतालवी शैली नज़र आती है ।

शाह अब्बास की मृत्यु 1629 ई० में हुई, लेकिन उसके उत्तराधिकारी पश्चिमी चित्रकारी का बराबर उत्साहवर्धन करते रहे । उनमें शाह अब्बास द्वितीय विशेष रूप से उल्लेखनीय है । उसने इतालवी और वलन्देज़ी (हॉलैंड के) चित्रकारी को ईरान बुलाया, जिन्होंने मनीऐचर चित्रकारी को बढ़ावा दिया । कहा जाता है कि शाह ने स्वयं भी वलन्देज़ी चित्रकारों से तस्वीर बनाना सीखा ।

यूरोप के साथ बढ़ते हुए संबंधों और विशेष रूप से वीनस एवं हॉलैंड के साथ संबंधों ने पश्चिमी चित्रकारी की उन्नति में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभायी । ईरान में यूरोप के निवासी भी बड़ी संख्या में मौजूद थे । फिर यूरोप के साथ आवागमन भी जारी था । इस संपर्क और संबंध ने बहुत से कलाकारों को अवसर प्रदान किया कि वे ईरान जाएं और वहां ठहरें । इस प्रकार ईरानी चित्रकारों को उनकी रचनाएं देखने और उनकी आलोचना करने का अवसर प्राप्त हुआ । उनका प्रभाव असफ़हान की अनेक दीवारी तस्वीरों में देखा जा सकता है । इन तस्वीरों में दरबारी दृश्य और शाही परिवार के सदस्य दिखाये गये हैं, यहां तक कि मनीऐचर तस्वीरों पर भी पश्चिमी प्रभाव पड़ा ।

अतएव बहुत शीघ्र ईरान में पश्चिमी प्रभाव स्पष्ट होने लगा और धीरे-धीरे साज-सज्जा और सजावटी चित्रकारी कम होने लगी एवं अंततः समाप्त हो गयी । तस्वीरों में जो अतिरिक्त और व्यर्थ चीज़ें नज़र आती थीं, वे समाप्त हो गयीं और केन्द्रीय रूप अधिक स्पष्ट हो गया । उनकी निश्चेष्ट साज-सज्जा अधिक संवेदनशील मानवीय रूप-रेखा में बदल गयी । अब चित्रकार पोरट्रेट बनाने की कला से भी फ़ायदा उठा रहे थे और प्रकाश व छांव भी खोज रहे थे । इस प्रकार तस्वीरें यथार्थ से अधिक निकट हो गयीं । ईरानी चित्रकारी में इस यथार्थप्रियता की 15वीं और 18वीं सदी में उन्नति हुई । और 19वीं सदी की प्रारंभिक अवधि में यह रुझान स्पष्ट रूप से दिखायी पड़ा ।

अनेक ऐसे चित्रकारों ने जिनके नाम हम जानते हैं ईरान में काफ़ी अवधि तक ठहरे । उनमें से कुछ शाह के लिए काम कर रहे थे । इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह है कि शाह अब्बास ने एक ईरानी चित्रकार को प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए इटली भेजा । कहा जाता है कि उसने रोमन कैथोलिक धर्म अपना लिया था और वह मुहम्मद पावलोज़मान कहलाता था । और भी बहुत-से ईरानी चित्रकारों के यहां पश्चिमी प्रभाव नज़र आता है । यदि वे यूरोप नहीं गये तो ईरान में यूरोप चित्रकारों से उन्होंने प्रशिक्षण अवश्य प्राप्त किया । यही चीज़ हिन्दुस्तान में भी नज़र आती है । मुग़ल सम्राट ललित कलाओं के ज़बरदस्त प्रशंसक और गुणग्राहक थे । उन्होंने उस नयी शैली और नये स्टाइल में काफ़ी दिलचस्पी दिखायी, जो यूरोपीय निवासी हिन्दुस्तान ला रहे थे । यह वह काल है, जब यूरोप के लोगों ने हिन्दुस्तान में क़दम जमाना शुरू किया था ।

1588 ई० में ही एक हिन्दुस्तानी चित्रकार ने सम्राट अकबर के लिए ईसाई धर्म के व्यक्तित्वों और रस्मों की तस्वीरें बनायी थीं । ये तस्वीरें ईसाई चित्रकारों की नक़ल थीं । अकबर के उत्तराधिकारी जहांगीर के बारे में कहा जाता है कि उसने क़िले की दीवारों पर यूरोपीय चित्रकारों की पेंटिंग्स लगायी हुई थीं । ईरान के मुक़ाबले में हिन्दुस्तानी

चित्रकारों पर यूरोप का अधिक प्रभाव दिखायी पड़ता है । ईरान की सांस्कृतिक परंपराएं मौलिक रूप से इस्लामी थीं और कई सदी से उन पर इस्लामी प्रभाव छाया हुआ था । इसके विपरीत हिन्दुस्तान का मामला भिन्न था । यह देश कई धर्मों और संस्कृतियों का संगम था ।

हिन्दुस्तानी चित्रकार हिन्दू और मुस्लिम दोनों परंपराएं जानते थे और उनके यहां सदियों से मूर्ति कला मौजूद थी, जो इस्लामी देशों में निषिद्ध थी । इन सब चीज़ों ने उनके लिए पश्चिमी चित्रकारी को स्वीकार्य बना दिया, लेकिन आश्चर्य की बात है कि ईरान और हिन्दुस्तान दोनों स्थानों पर चित्रकारों ने पेंटिंग्स में प्रयुक्त होने वाली सामग्री के सिलसिले में यूरोप का अनुसरण नहीं किया । उदाहरण के रूप में यूरोपीय आर्ट की उन्नति में आयल पेंटिंग्स का केन्द्रीय भाग है, लेकिन ईरान या हिन्दुस्तान के चित्रकारों ने यह ढंग नहीं अपनाया और पारंपरिक सामग्री ही प्रयुक्त करते रहे ।

एक दिलचस्प खोज मुसलमान चित्रकारों की ओर से यूरोपीय स्त्री और पुरुषों की तस्वीरें बनाना है । यह काम बहुत बाद में शुरू हुआ । जैसे, सलीबी लड़ाइयों के सारे ज़माने में एक ही तस्वीर ऐसी मिलती है जहां ईसाई जंगजू दिखाये गये हैं । यह काग़ज़ पर बनी हुई तस्वीर है जो मिस्र से मिली है । यह तस्वीर 12वीं सदी की बनायी हुई है । इसमें शहर की चारों ओर की दीवारों के सामने लड़ाई का दृश्य दिखाया गया है । गोल ढाल हाथ में लिये एक सिपाही सामने नज़र आता है जो संभवत: मुसलमान है । वह सिपाही चार सिपाहियों से लड़ रहा है जिनके हाथों में तिकोनी ढालें हैं । ये लोग शायद नारमन हैं ।

13वीं सदी में मंगोलों और यूरोपीय शक्तियों के संपर्कों का अस्थायी काल अपने पीछे ललित कलाओं और साहित्य के कई रिकार्ड छोड़ गया है । रशीदुद्दीन के 'तारीख़े फ़रंग' के पृष्ठ सम्राटों और रोम के अनेक पापाओं की तस्वीरों से आभूषित किये गये हैं । स्पष्ट है कि ये सब तस्वीरें काल्पनिक हैं । इसीलिए उनके परिधान, उनके अंदाज़ यहां तक कि उनकी बनावट पर भी चीनियों और मंगोलों की समरूपता स्पष्ट है ।

हिन्दुस्तान में पश्चिमी निवासियों की मौजूदगी ने हिन्दुस्तानी और मुस्लिम आर्ट पर प्रभाव डाला । अनेक ऐसी मनीऐचर पेंटिंग्स मिली हैं, जिनमें यूरोपीय स्त्री और पुरुषों को दिखाया गया है, यहां तक कि पश्चिम के कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियों की तस्वीरें भी हैं । जैसे, एक पेंटिंग्स में इंग्लिस्तान के राजदूत सर टामस रो को सम्राट जहांगीर (1605-1627 ई॰) के दरबार में दिखाया गया है । एक और पेंटिंग्स में ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रसिद्ध अफ़सर वारेन हैस्टिंग्ज़ को पश्चिम का दरबारी परिधान पहने और रिचर्ड जानसन को लाल वर्दी पहने हाथ में नुकीला हैट लिए कुर्सी पर बैठे दिखाया गया है । उनके साथ एक सेवक है जो छतरी लिये खड़ा है ।

कलात्मक दृष्टिकोण से कुछ अत्यंत दिलचस्प पेंटिंग्स तुर्क चित्रकार अब्दुल जलील चलबी उर्फ़ लोनी की हैं । अब्दुल जलील ऐडरीन का रहने वाला था और इस्तंबूल के चित्रालय में उसने प्रशिक्षण प्राप्त किया । उसने पुस्तकों पर सोने की चित्रकारी का काम प्रारंभ किया । उसके इस काम में भी पश्चिम की सजावट-कला प्रभाव झलकता है । बाद में वह शाह मुस्तफ़ा सानी (1695-1703 ई॰) और शाह अहमद सालिस (1703-1730 ई॰) का दरबारी चित्रकार रहा ।

लोनी ने तस्वीरों के एलबम, चित्रात्मक पुस्तकें और बहुत-सी निजी पेंटिंग्स बनायीं । पोरट्रेट के साथ ही उसने दरबारी आयोजनों की तस्वीरें भी बनायीं । उनमें यूरोपीय राजदूत आदि भी नज़र आते हैं । ये लोग अपने परिधान से और विशेष रूप से इसलिए भी पहचाने जाते हैं कि दूसरों के विपरीत वे कुर्सियों पर बैठते हैं । इन लोगों को तर्जुमान और रक्षकों के साथ बड़े ठाठ से दरबार में लाया जाता था । वहां पश्चिमी नवजवानों की दो तस्वीरें भी हैं । एक ऐसा तुर्क पत्र भी है, जो संभवत: 1793 ई॰ के बाद की किसी तिथि का है और जिसमें यूरोप की विभिन्न क़ौमों के लोगों की तस्वीरें हैं । इन तस्वीरों पर यूरोपीय प्रभाव बहुत अधिक नज़र आते हैं । हो सकता है कि ये यूरोपीय नमूनों से नक़ल की गयी हों, तथापि इनमें जो परिधान दिखाये गये हैं वे तिरंगी टोपी के सिवा जो फ़्रांसीसी स्त्री पहने हुए है, इससे पहलेवाली सदी के हैं ।

यूरोपीय प्रभाव केवल चित्रकारी ही में नज़र नहीं आता, भवनों की साज-सज्जा में भी वह दिखायी देता है, बल्कि यहां कुछ अधिक ही प्रभाव है ।

उस्मानी चित्रकारों के लिए पोरट्रेट के मुक़ाबले में लैंड स्केप पेंटिंग्स में पश्चिमी प्रभाव स्वीकार करना सरल था । उस्मानी आर्ट 'नक़्शानवीसी' वाली चित्रकारी में अपनी एक

परंपरा रखता है । मानवीय रूप का चित्रण करने के मुक़ाबले में भवनों, बाज़ारों या दृश्यों की तस्वीर बनाने में कोई चीज़ रुकावट न थी । यही कारण है कि यूरोपीय स्थापत्य कला और चित्रकला तो बहुत अधिक छा गयी, लेकिन मूर्तिकला यहां तक उभरी हुई नक़्क़ाशी की कला तक को स्वीकार नहीं किया जाता था ।

तुर्की, ईरान और मुस्लिम हिन्दुस्तान में चित्रकला मे जो नये रुझान पैदा हुए थे । अरब देशों में इसका कोई उदाहरण नहीं मिलता । वहां मध्यकाल में ही मनीऐचर बनाने की कला समाप्त हो चुकी थी और उत्तरी अफ़्रीक़ा के पिछड़े क्षेत्रों के सिवा शेष सभी अरब दुनिया में स्थापत्य कला भी उस्मानी ढंग की भोंडी नक़ल ही बन गया था । 19वीं सदी के दूसरे मध्य में कहीं जाकर पहले मिस्र में और फिर दूसरे अरब देशों में पश्चिमी आर्ट और स्थापत्य कला नज़र आती है ।

चित्रकारी के मुक़ाबले में किसी अजनबी संस्कृति के संगीत के लिए अपने क़दम जमाना अधिक कठिन कार्य होता है । पश्चिमी देशों में भी एशिया और अफ़्रीक़ा के आर्ट से ही अधिक दिलचस्पी थी अपेक्षाकृत उनके संगीत के । इसी प्रकार मुसलमानों ने भी पश्चिमी आर्ट की प्रशंसा बहुत पहले प्रारंभ कर दी थी । पश्चिमी संगीत को तो उन्होंने बहुत बाद में पसन्द किया । वास्तविकता तो यह है कि हाल के काल से पहले दोनों ओर संगीत से दिलचस्पी न होने के बराबर थी । यूरोप जाने वाले आरंभिक मुस्लिम पर्यटक ऐसे संगीत का हवाला बहुत कम देते हैं, जो उन्होंने सुना हो । इबराहीम इब्न याक़ूब श्लासविक नामक स्थान का उल्लेख करते हुए लिखता है–

"मैंने इससे बुरा संगीत नहीं सुना । जैसा श्लासविक के लोग गाते हैं । यह ख़रख़राहट की भांति है जो गले से निकलता है, जैसे कुत्ते का भौंकना, बल्कि कुछ ज़्यादा ही दरिन्दगी के साथ भौंकना ।

सदियों बाद उस्मानी पर्यटक लया चलबी, वियाना में अधिक संयम और सहनशीलता का प्रमाण देता है । संगीत के सिलसिले में दूसरी चीज़ों का उल्लेख करते हुए वह इन्कारी संगीतकारों के आकेस्ट्रा का हवाला देता है और कहता है कि इसकी लय तुर्की के साज़ों की आवाज़ से काफ़ी भिन्न है, लेकिन यह दिल को उचक ले जाने वाला, उस पर असर करने वाला और झंकृत करने वाला है । वह वियाना के लड़कों के क्वायर गाने की पेशकश और बाह्य मनोहरता से भी बहुत प्रभावित मालूम होता है । संयोग से वहां पुस्तक भंडार के संक्षिप्त उल्लेख के अतिरिक्त वह यूरोप के सांस्कृतिक जीवन से जानकारी के बारे में यह उसका अत्यंत निकटतम प्रमाण है । मुहम्मद आफ़ंदी अपने पेरिस प्रवास के दौरान ओपेरा देखने गया, लेकिन उसे वह संगीत के बजाय तमाशा नज़र आया–

"पेरिस में एक विशेष प्रकार का मनोरंजन होता है जिसे ओपेरा कहते हैं जहां अजूबे दिखाये जाते हैं । वहां लोगों की भीड़ होती है, क्योंकि वहां सभी बड़े अफ़सर और लार्ड जाते हैं । मंत्रीगण तो अक्सर जाते हैं और सम्राट कभी-कभी । इसलिए मैंने भी जाने का फ़ैसला किया । प्रत्येक व्यक्ति अपने दर्जे की हैसियत से बैठता है । मैं सम्राट की बैठक के साथ बैठा था जिस पर लाल मख़मल चढ़ी हुई थी । प्रधानमंत्री भी उस दिन आया था । मैं बता नहीं सकता कि वहां कितने पुरुष और कितनी महिलाएं थीं ।

वह भव्यतम स्थल था, सीढ़ियां, स्तंभ, छतें और दीवारें सब पर सोने के वर्क़ चढ़े थे । इन सोने के पत्तरों और महिलाओं के तड़क-भड़क परिधानों की चमक-दमक अश्लीलतापूर्ण थी । साथ ही जिन ज़ेवरों से वे महिलाएं लदी-फदी थीं, वे दर्शनीय थे । सैकड़ों मोम के चराग़ों की रोशनी में वह स्थल अत्यंत सुन्दर लग रहा था । तमाशाइयों के सामने इसी स्थान पर जहां गाने वाले बैठे थे, कमख़ाब का परदा लटक रहा था । जब सब बैठ गये तो वह परदा उठा और एक दृश्य सामने आया, जिसमें थियेटर वाले परिधान पहने हुए अभिनेता और हूरों जैसे चेहरे वाली लगभग बीस लड़कियां, सोने के बेल-बूटों वाले परिधान पहने हुए थीं । इन सबके तड़क-भड़क परिधान आंखों को निर्लज्ज बना रहे थे । फिर संगीत शुरू हुआ, थोड़ा-सा नृत्य हुआ । इसके बाद ओपेरा शुरू हुआ ।"

इसके बाद तुर्क राजदूत ओपेरा का प्लाट बयान करता है और दृश्य व अभिनेताओं के परिधान के विवरण देता है । वह देखता है कि ओपेरा का डायरेक्टर एक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यक्ति है और ओपेरा काफ़ी महंगा तमाशा है ।

मराकशी राजदूत वज़ीरुल ग़स्सानी हस्पानवी संगीत के बारे में जब अपना विचार प्रकट करता है तो वह उस देश में प्रयुक्त किये जाने वाले तीन साज़ों के नाम लेता है । वह कहता है कि सबसे अधिक प्रसिद्ध 'हार्प' है । इससे अत्यंत

हर्षातिरेक स्वर निकलता है । यह साज कलीसाओं में समारोहों के अतिरिक्त प्राय: हस्पानवी घरों में भी पाया जाता है । वहां 'बरबत' (एक प्रकार का साज़) नहीं है, लेकिन हस्पानियों के पास इस जैसा एक और साज़ है जिसे वे गिटार कहते है ।

मुसलमानों का क्लासिकी संगीत एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक चला आ रहा था, इसलिए 17वीं और 18वीं सदी के इस्लामी संगीत का ऐसा कोई रिकार्ड नहीं मिलता जिससे यह मालूम किया जा सके कि इस पर पश्चिमी संगीत का प्रभाव पड़ा भी था या नहीं । पश्चिमी संगीत के समर्थन में पहला सरकारी क़दम उस समय उठाया गया, जब 1826 ई० में जॉनिसारों का ख़ात्मा हो गया । सुल्तान ने सेना में सुधार का जो सिलसिला प्रारंभ किया तो प्राचीन जॉनिसारी बैंड समाप्त करके पश्चिमी ढंग का बैंड प्रचलित करने का फ़ैसला किया ।

1827 ई० में 'सर अस्कर' या सैनिक कमांडर मुहम्मद खुसरू पाशा ने इस्तंबूल में सारडेनिया के राजनयिक से कहा कि सारडेनिया के सैनिक बैंड में जो साज़ प्रयुक्त किये जाते हैं उन्हें प्राप्त करने के लिए उसकी सहायता की जाए । उसने यह भी कहा कि संगीत के पहले सैनिक ग्रुप को तरतीब देने के लिए एक बैंड मास्टर का प्रबंध में करवाएं । तुर्की और सारडेनिया की सरकारों के बीच एक समझौता हुआ और कुछ अवधि के बाद प्रसिद्ध होसीक़ार गीतानो दोनेज़ेती का भाई जेवसीप दोनेज़ेती इस्तंबूल आया और उसने शाही सैनिक बैंड को तरतीब दिया । अंतत: उसे संगीत के शाही उस्मानी केन्द्र प्रमुख बना दिया गया । इस क़दमों का उल्लेख उन यूरोपीय निवासियों ने किया है जो उस ज़माने में इस्तंबूल गये ।

एक इतालवी समकालीन ने लिखा है, "एक वर्ष से भी कम अवधि में कई नवयुवकों को जिन्होंने पहले कभी यूरोपीय संगीत सुना तक नहीं था, बरगामोके सेन्वरदूनी ज़ैती ने इतना सिखा दिया कि विधिवत सैनिक बैंड बजाने वाले बन गये । इस ग्रुप का प्रत्येक सदस्य सैनिक बैंड संगीत की हर धुन को समझ सकता था और साज़ भी बजा सकता था ।

इसके बावजूद मुस्लिम देशों में पश्चिमी संगीत को स्वीकार करने की गति बहुत धीमी रही । यद्यपि पश्चिमी देशों में कुछ इस्लामी देशों विशेषकर तुर्की के कंपोज़र और गायक काफ़ी सफल रहे, लेकिन वहां इस प्रकार के संगीत की ओर ध्यान कम ही रहा । विज्ञान की भांति संगीत भी पश्चिमी कल्चर की आंतरिक परिधि का भाग है । उसका रहस्य जानने के लिए अजनबी को परदे के भीतर जाना पड़ा है ।

अलबत्ता पश्चिम का एक तमाशा ऐसा था जिसे मुसलमानों ने कभी स्वीकार नहीं किया । वह था स्पेन की बुल फाइटिंग (बैलों से मुक़ाबला)। मराकशी राजदूत ग़स्सानी ने इस खेल के बारे में यह लिखता है (ज़ाहिर है बैल से लड़ने वाला शौक़िया खिलाड़ी था जिसे ग़स्सानी ने देखा ।

दूसरे प्रकार के मनोरंजन और खेल भी ख़ूब पसन्द किये जाते थे । उदाहरणार्थ हती आफ़ंदी जो 1748 ई० में वियाना गया, लिखता है–"वियाना में एक खेल-घर है चार या पांच मंज़िल ऊंचा, ड्रामे खेलने के लिए से वे कामेडी और ओपेरा कहते हैं । स्त्री और पुरुष प्रत्येक रात वहां इकट्ठा होते हैं सिवाय उन दिनों के जब वे कलीसा में एकत्र होते हैं । और प्राय: सम्राट स्वयं और महारानी स्वयं भी वहां आती हैं । सुन्दरतम जर्मन लड़कियां और बेहतरीन नवयुवक तड़क-भड़क परिधान में लिपटे, विभिन्न नृत्य और शानदार अभिनय का प्रदर्शन करते हैं । अभिनेता स्टेज पर ज़ोर-ज़ोर से अपने पैर मारते हैं और अत्यंत शानदार दृश्य प्रस्तुत करते हैं । कभी वे स्कन्दर की पुस्तक से गाथाएं प्रस्तुत करते हैं और कभी इश्क़ व प्रेम की कहानियां जो तमाशाइयों के धीरज को धू-धूसरित कर देती हैं ।

इसका सीधा प्रभाव उन यहूदी शरणार्थियों के द्वारा पड़ा जो 16वीं और 17वीं सदी में ही तुर्कों में ड्रामाई तमाशे दिखाने लगे थे । उनके बाद आर्मेनिया, यूनान के लोगों और ख़ानाबदोशों ने ये तमाशे शुरू किये । यहूदी चूंकि यूरोप से नये आने वालों में से थे, इसलिए तुर्की में थियेटर और ड्रामों को परिचित कराने में उनका अधिक महत्वपूर्ण योग है । वहां पहला ड्रामा उन्होंने ही प्रस्तुत किया ।

मुद्रक एवं प्रकाशक मुहम्मद अहमद द्वारा दावत ट्रस्ट (रजि०), D-314, दावत नगर, अबुल फ़ज़्ल इन्कलेव, जामिया नगर, नयी दिल्ली-110025 से प्रकाशित एवं भारत ऑफ़सेट प्रेस, 2035, क़ासिम जान स्ट्रीट, बल्लीमारान, दिल्ली–110006 से मुद्रित । फ़ोन : 011-26949430, 09818799223
संपादक : डॉ० मुहम्मद अहमद

संस्था की लिखित अनुमति के बिना सम्पूर्ण या आंशिक पुनर्प्रकाशन पूर्णत: प्रतिबंधित है ।

हज़रत अबू उसामा (रज़ि॰) कहते हैं कि अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया– "जिसने प्रेम किया अल्लाह के लिए, घृणा की अल्लाह के लिए, दिया अल्लाह के लिए और रोका अल्लाह के लिए, उसने ईमान को पूर्ण कर लिया।"

(अबू दाऊद, तिरमिज़ी

A WELL WISHER

MUMBAI (MHR)

"ज़मीन और आसमानों
में जो कुछ भी है अल्लाह का है ।
और जो (फ़रिश्ते) उसके पास हैं वे न
अपने को बड़ा समझकर उसकी बन्दगी से
मुंह फेरते हैं और न दुखी होते हैं । रात
और दिन उसकी तसबीह करते
रहते हैं, दम नहीं लेते ।"
(क़ुरआन, 21:19)

A Well Wisher
Hyderabad



हज़रत अनस (रज़ि॰) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) ने फ़रमाया–"प्रतापवान और तेजोमय अल्लाह कहता है कि मैं अपने बन्दे के गुमान (ख़याल व अनुमान) के साथ हूं, वह जैसा चाहे मुझसे गुमान क़ायम कर ले।"

(बैहक़ी, तबरानी-कबीर)

A Well Wisher

NAGPUR

''कभी तुमने उस व्यक्ति की हालत
पर विचार किया है जिसने अपने
मन की इच्छा को अपना पूज्य बना लिया
हो ? क्या तुम ऐसे व्यक्ति को सीधे
मार्ग पर लाने का ज़िम्मा ले सकते हो ?
क्या तुम समझते हो कि उनमें से
ज़्यादातर लोग सुनते और समझते हैं ?
ये तो जानवरों की तरह हैं, बल्कि
उनसे भी गये गुज़रे ।''
(क़ुरआन, 25:43)

A Well Wisher
KOLKATA

हज़रत अनस (रज़ि०) से उल्लिखित है कि अल्लाह के रसूल हज़रत मुहम्मद (सल्ल०) ने फ़रमाया– "तुममें से प्रत्येक को चाहिए कि वह अपनी समस्त आवश्यकताओं के लिए अपने रब (पालनकर्ता, स्वामी) से ही सवाल करे, यहां तक कि यदि उसके जूते का तस्मा टूट जाए तो वह भी उसी से मांगे ।"

(तिरमिज़ी)

A Well Wisher

KOLKATA

Posted on 20-21 October 2018
November 2018
E-mail: kantihindimonthly@yahoo.com
Publishing Date: 18.10.2018
Total pages 116 with Cover

हिन्दी भाषियों की मासिक पत्रिका
कान्ति

RNI 53372/91
DL(S)-05/3147/2018-2020
LICENSED TO POST WITHOUT PREPAYMENT
License No. U (SE)-73/2018-2020

With Best Compliments From

HINDUSTAN GROUP
A various Industries Under One Name
Group

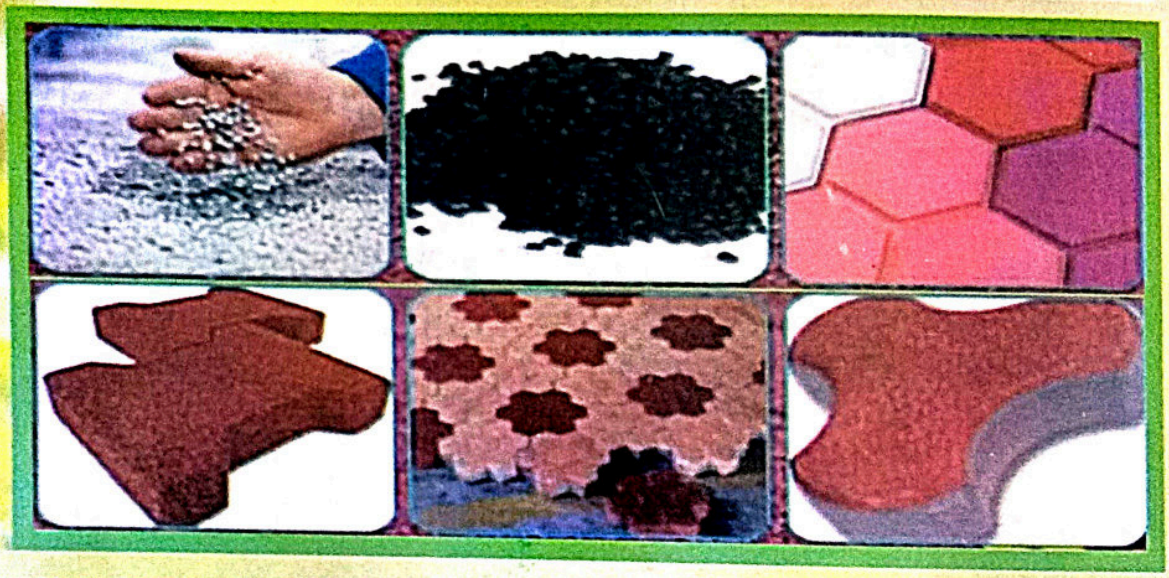

HINDUSTAN INDUSTRIES

MANUFACTURING UNIT FOR
PAVERS, TILES & BLOCKS

AT
Plot No. S-2, COLVALE INDUSTRIAL ASTATE
COLVALE, BARDEZ,GOA, INDIA

HEAD OFFICE
NH-17, Kraswada, Mapusa, Goa
Ph.: 22577900, 2257793, 2257700
www.hindustangroupgoa.com